जीवन का सम्मान

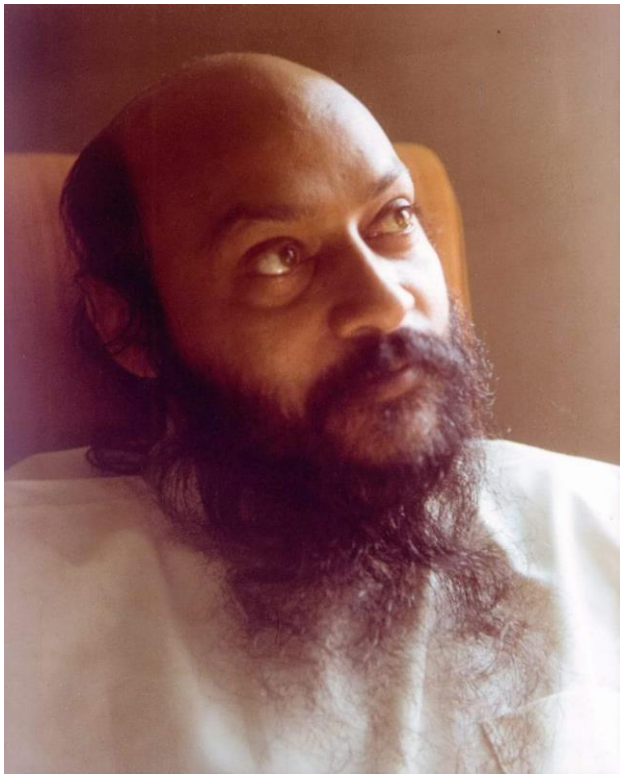

अनुक्रमांक

मंदिर के चार स्तंभ

जीवन की कला

जीवन के प्रति अहोभाव

जीवन में रहस्य-भाव

स्वतंत्रता

नारी और क्रांति

युवक कौन

मंदिर के चार स्तंभ

जंगली हंस और पानी #1

प्रश्न 1: ओशो, कैफे रॉयल, लंदन में "मार्च कार्यक्रम" के लिए इकट्ठा होने वाले संन्यासियों और मित्रों को क्या आप कोई संदेश देंगे?

आनंद पूनम,

संन्यास अतीत और भविष्य दोनों के खिलाफ विद्रोह है। मनुष्य या तो अतीत में या भविष्य में रहता है, लेकिन वर्तमान में कभी नहीं रहता। वर्तमान ही एकमात्र वास्तविकता है; और कुछ भी मौजूद नहीं है। अस्तित्व एक ही बार जानता है—वह है अभी—और एक क्षण—वह यहां है। लेकिन मन या तो अतीत में रहता है जो अब नहीं है या भविष्य में जो अभी नहीं है। मन अस्तित्वहीन में मौजूद है, इसलिए मन कभी भी वास्तविकता में नहीं आता है; यह अपने कार्यकरण से ही नहीं आ सकता।

संन्यास स्वयं के मन के प्रति विद्रोह है। यह जीवन का एक तरीका है जिसमें मन मालिक नहीं होता, बल्कि केवल एक नौकर के रूप में कार्य करता है। मन वास्तव में एक तंत्र है; यह प्रकृति के एक सुंदर उपकरण के रूप में अच्छा है, लेकिन जिस क्षण नौकर मालिक बन जाता है, वहां बड़ा खतरा होता है। तब तुम्हारा जीवन अस्त-व्यस्त, अराजकता होने के लिए बाध्य है। नौकर अंधा, मूर्ख और अनजान होता है। मन के अनुसार जीना बिल्कुल भी जीना नहीं है; यह सरासर मूर्खता है। मन कभी मौलिक नहीं होता, कभी बुद्धिमान नहीं होता; यह हमेशा दोहराव होता है, यह हमेशा उधार लिया जाता है, यह हमेशा यांत्रिक होता है - इसलिए बेवकूफ, इसलिए मूर्खतापूर्ण।

संन्यास वास्तविकता में एक जबरदस्त छलांग है, असत्य से वास्तविकता का पलायन है।

ऐसे समाज रहे हैं जिनका स्वर्ण युग अतीत में था, उदाहरण के लिए भारतीय समाज: इसका स्वर्ण युग बीत चुका है। यह मानता है कि भविष्य हर दिन अंधकारमय होता जा रहा है - कोई उम्मीद नहीं है। इसलिए भारतीय समाज अवसाद और निराशा की स्थिति में रहता है, जिसमें बेहतर के लिए किसी भी बदलाव की कोई संभावना नहीं है। यह दुख, गरीबी और बीमारी में रहता है। लेकिन इस विचार के कारण कि स्वर्ण युग बहुत पहले, हजारों साल पहले ही बीत चुका है और हम धीरे-धीरे गिर रहे हैं, यह विकास में विश्वास नहीं करता, यह समावेश में विश्वास करता, यह प्रतिगमन में विश्वास करता है। यह एक प्रतिगामी दर्शन है, प्रगतिशील नहीं।

पश्चिम भविष्य में रहता है; इसका स्वर्ण युग अभी आना बाकी है: वर्गहीन समाज, साम्यवाद का चरमोत्कर्ष, समानता और स्वतंत्रता की दुनिया, राज्यविहीन राज्य। वे सुनहरे दिन आगे हैं, बहुत दूर हैं।

एक तरह से दोनों एक ही हैं। यदि किसी को दोनों के बीच चयन करना है तो मैं सुझाव दूंगा: एक प्रतिगामी के बजाय एक प्रगतिशील मूर्खता चुनें - यदि वह एकमात्र विकल्प है! कम से कम प्रगतिशील मूर्खता के साथ आपको कुछ आशा, रोमांच और उत्साह मिलेगा; आप बेहतर भविष्य के लिए काम करेंगे। यह कभी नहीं आने वाला है, लेकिन कम से कम आप सुंदर सपनों में व्यस्त रहेंगे। यह पहले कभी नहीं था, यह भविष्य में कभी नहीं होने वाला है। यह "अब" है! यह पहले से ही है!

आदम और हव्वा को अदन की वाटिका से कभी भी निष्कासित नहीं किया गया है! यही मेरी घोषणा है, मेरा संदेश है। यह पूरी कहानी पुजारियों द्वारा आविष्कार की गई है। आदम और हव्वा अभी भी अदन की वाटिका में रह रहे हैं - बस उन्होंने ज्ञान का फल खा लिया है। और ज्ञान का फल किसने दिया? यह सर्प नहीं है; यह पुजारी, धर्मशास्त्री और दार्शनिक

हैं। ज्ञान का फल वृक्षों पर नहीं उगता। यह चर्चों में, मंदिरों में, विश्वविद्यालयों में बढ़ता है। इसमें डिग्रियाँ - पीएचडी, डी.लिट, डीडी - और यह सभी आकारों और स्वरूपों में आता है।

ज्ञान की हिंदू दुनिया, ज्ञान की मुस्लिम दुनिया, और ज्ञान की ईसाई दुनिया है। आप अपना फल खुद चुन सकते हैं, आप इसके लिए खरीदारी कर सकते हैं। यह हर किसी की आवश्यकता और जरूरत के अनुसार उपलब्ध है।

मनुष्य के साथ जो दुख हुआ है, वह इसलिए नहीं है क्योंकि उसने मूल स्वर्ग खो दिया है; वह अभी भी वहीं है, लेकिन वह सो गया है। और अपने सपनों में वह एक हिंदू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी और क्या नहीं बन गया है... एक आस्तिक, नास्तिक, कम्युनिस्ट, समाजवादी, फासीवादी। अपने सपनों में ही उसने स्वर्ग का रास्ता खो दिया है। सपने देखने का सीधा सा अर्थ है या तो स्मृतियों में जीना—वह अतीत है—या कल्पनाओं में जीना—यही भविष्य है।

मेरा संदेश, आनंद पूनम, लंदन में मार्च कार्यक्रम के लिए, जहां हजारों संन्यासी पहली बार एक नए उद्घाटन का जश्न मनाने के लिए एक साथ इकट्ठा हो रहे हैं: ब्रिटिश बुद्धक्षेत्र... यह मेरा संदेश है, उन्हें बताओ: अतीत और भविष्य से छुटकारा पाएं, और यहां अभी रहें! अभी के अलावा कहीं और जीना आत्मघाती है, क्योंकि हर गुज़रता पल कीमती है, इतना कीमती है कि आप इसे वापस नहीं पा सकते। इसे बर्बाद मत करो!

लेकिन सभी धर्म आत्मघाती रहे हैं। बेशक वे इसे आत्महत्या नहीं कहते, वे इसे सुंदर नाम देते हैं - तपस्या, तपश्चर्या - लेकिन मूल रूप से यह मर्दवाद के अलावा और कुछ नहीं है, आत्म-यातना। वे इसे त्याग कहते हैं, लेकिन यह धीरे-धीरे खुद को नष्ट करने के अलावा और कुछ नहीं है। दुनिया के सभी धर्म अब तक जीवन-इनकार के दर्शन के साथ रहते हैं।

मेरा मौलिक दृष्टिकोण जीवन-स्वीकृति, कुल जीवन-पुष्टि का है। जीवन के अलावा कोई ईश्वर नहीं है! जीवन के अलावा ईश्वर का विचार ही खतरनाक है, क्योंकि यदि ईश्वर जीवन से अलग है तो स्वाभाविक रूप से आप जीवन के खिलाफ भगवान को चुनना शुरू कर देंगे। आप ईश्वर समर्थक और जीवन-विरोधी होंगे, क्योंकि जीवन क्षणिक है और ईश्वर आपको हमेशा के लिए शाश्वत होने का लालच देता है।

मैं तुमसे कहता हूं, जीवन के अलावा कोई दूसरा भगवान नहीं है, इसलिए चुनाव का सवाल ही नहीं उठता। रहो! समग्रता से जियो, जुनून से जियो, समझदारी से जियो, प्रेम से जियो। एक लौ इतनी तीव्र, इतनी समग्र, कि हर पल अनंत काल का स्वाद होने लगे।

याद रखें, अनंत काल क्षैतिज नहीं है। यह ए से बी तक जाने वाली रेखा की तरह नहीं है, बी से सी तक, सी से डी तक - यह क्षैतिज नहीं है। अनंत तीव्रता है, यह ऊर्ध्वाधर है। यह ए से गहरे ए तक गोता लगा रहा है, बी तक नहीं जा रहा है: ए से अल तक, ए 1 से ए 2 तक, ए 2 से ए 3 तक... वास्तव में जहां तक तीव्रता का संबंध है, ए एकमात्र वर्णमाला है। वास्तव में, शब्द "वर्णमाला" ए से आता है; यह अरबी एलेफ से आता है। ए पर्याप्त है! और जब आप ए प्राप्त कर सकते हैं, तो बी के बारे में परेशान क्यों हैं?

मेरे संन्यासियों को व्यक्तियों के रूप में रहना चाहिए। मैं तुम्हें कोई अनुशासन नहीं दे रहा हूं, क्योंकि हर अनुशासन विकृति पैदा करता है और केवल उस व्यक्ति के लिए उपयुक्त होता है जिसने इसे विकसित किया है। युगों से प्रतिपादित सभी अनुशासनों पर एक नज़र डालिए।

बुद्ध को दिन में एक बार भोजन करना पसंद था; अब हर बौद्ध इसका पालन कर रहा है। यह ठीक नहीं है - यह खतरनाक है। यह अपराधबोध पैदा करता है, क्योंकि अगर आपको दिन में दो बार भूख लगती है, तो आप दोषी महसूस करेंगे। और अगर आप एक अमेरिकी हैं, तो शायद आपको दिन में पांच बार भूख लगेगी! फिर कितना अपराधबोध...!

बुद्ध के दिन में एक बार भोजन करने का कारण संभवतः यह था कि वह मांस खाने वाले परिवार में पैदा हुए थे; वह योद्धा जाति में, एक राजा के बेटे के रूप में जन्मे थे। मांसाहारी जानवर दिन में एक बार ही खाते हैं—जैसे शेर दिन में केवल

एक बार खाता है—क्योंकि मांस पर्याप्त पोषण प्रदान करता है। लेकिन अगर आप सब्जियां खाते हैं, तो आपको कई बार खाना होगा। शाकाहारी जानवर, जैसे बंदर, पूरे दिन खाते हैं।

बुद्ध का जन्म मांस खाने वाले परिवार में हुआ था; यह उनकी आदत बन गई। जब वह प्रबुद्ध हुए तो उन्होंने मांस खाना छोड़ दिया, लेकिन आदतें इतनी आसानी से नहीं बदलतीं! अब लोग उनके पीछे चल रहे हैं और दिन में एक बार भोजन कर रहे हैं, चाहे वे मांसाहारी हों या शाकाहारी। यह स्वास्थ्य और ऊर्जा के लिए खतरनाक हो सकता है। यही बात हर अनुशासन के बारे में भी सच है - चाहे वह दस आज्ञाएं हों या अन्य धार्मिक सिद्धांत।

अभी हाल ही में, एक संन्यासी ने मुझे लिखा कि वह रात को जल्दी सो नहीं सकता, वह केवल सुबह तीन बजे सो सकता है। वह दोषी महसूस करता है क्योंकि एक धार्मिक व्यक्ति को जल्दी बिस्तर पर जाना चाहिए और सूरज उगने से पहले उठना चाहिए। लेकिन उसे दोषी महसूस करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह पूरी तरह से ठीक है; वह सात घंटे सोता है, सुबह तीन बजे से दस बजे तक। यह उसकी बॉडी क्लॉक है और उसके शरीर के रसायन विज्ञान को ध्यान में रखा जाना चाहिए, न कि किसी और के सिद्धांत को।

अपने शरीर की आवश्यकताओं को सुनें और उनका सम्मान करें। किसी भी अपराधबोध से मुक्त रहें और अपने व्यक्तिगत तरीके से जीवन का आनंद लें। अपनी दिनचर्या को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित करें, न कि किसी बाहरी दबाव के अनुसार।

सभी धार्मिक ग्रंथ बूढ़े लोगों द्वारा लिखे गए थे, और अक्सर बूढ़े लोगों को सुबह सोने में कठिनाई होती है। माँ के गर्भ में एक बच्चा चौबीस घंटे सोता है; फिर गर्भ से बाहर आने पर नींद का समय धीरे-धीरे कम होता जाता है—बाईस घंटे, बीस घंटे, अठारह घंटे, सोलह घंटे... जब तक वह युवा होता है, तब तक यह आठ से छह घंटे के बीच तय हो जाता है। जैसे-जैसे कोई बड़ा होता जाता है, नींद की आवश्यकता कम होती जाती है। जब कोई सत्तर, अस्सी का होता है, तो दो या तीन घंटे की नींद पर्याप्त होती है। और धर्मग्रंथ पुराने लोगों द्वारा लिखे गए थे, क्योंकि यह विचार था: जितने बड़े, उतने ही बुद्धिमान।

किसी भी युवक ने कोई धर्म ग्रंथ नहीं लिखा है; किसी ने भी किसी युवक के धार्मिक ग्रंथ लिखने पर ध्यान नहीं दिया होगा। आपको बहुत प्राचीन और बूढ़ा होना था, तभी आप एक शास्त्र लिख सकते थे! अतीत में उम्र का बहुत महत्व था। बेशक, इन लोगों ने लिखा है कि तीन घंटे की नींद पर्याप्त है; उससे अधिक सुस्ती है, तमस—यह अच्छा नहीं है, यह बुराई है। यह विचार पुराने लोगों के लिए अच्छा है।

अब यह युवा संन्यासी अनावश्यक रूप से चिंतित है। उसने हर तरह से कोशिश की है; उसका पूरा जीवन वह संघर्ष कर रहा है। यह बेकार है - सारा संघर्ष बेकार है! वास्तव में, अब यह एक सर्वविदित वैज्ञानिक तथ्य है कि हर किसी की अपनी बॉडी क्लॉक होती है और हर किसी को अपने शरीर की जरूरतों का पालन करना होता है।

एक बेहतर समाज में, जो अधिक वैज्ञानिक, अधिक तर्कसंगत, और अधिक बुद्धिमान है, हमारे पास काम के घंटों का पूरी तरह से अलग ढांचा होगा। यह अनुचित है कि हर किसी को एक ही समय पर काम पर जाना पड़ता है, स्कूल या विश्वविद्यालय जाना पड़ता है। यह अमानवीय है! विश्वविद्यालय, कार्यालय, और कारखाने चौबीसों घंटे खुले रहने चाहिए, और जब भी लोग अच्छा महसूस करते हैं तो उन्हें काम करना चाहिए और जब वे अच्छा महसूस करते हैं तो उन्हें सोना चाहिए। यह उनका जन्मसिद्ध अधिकार होना चाहिए!

अपनी बॉडी क्लॉक के अनुसार सोने और काम करने का प्रयास करें। अपनी जीवनशैली को अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित करें। एक लचीली दिनचर्या अपनाएं जो आपके लिए सबसे अच्छा काम करती हो। मेरा दृष्टिकोण स्वतंत्रता का है। मेरे संन्यासियों को एक जीवन-सकारात्मक दर्शन जीना चाहिए, जो कुछ भी है उसे स्वीकार करना और सम्मान करना, न कि चाहिए-चाहिए-नहीं। वे बदसूरत हैं, वे राक्षसी हैं!

सरल बनो, स्वाभाविक बनो, सहज बनो। मैं परमानंद सिखाता हूं - और साधारण जीवन में परमानंद। जीवन को किसी भी तरह से त्यागना नहीं, बल्कि रूपांतरित होना है। त्याग पलायनवाद है, यह कायरता है। और आपने अब तक कायरों को संत के रूप में पूजा है। आपने ऐसे लोगों की पूजा की है जो जीवन की सभी चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त साहसी नहीं थे। और लाखों चुनौतियां हैं - हर पल एक चुनौती है। कायर भाग जाता है। कायर की निंदा की जानी चाहिए, उसका सम्मान नहीं किया जाना चाहिए।

मेरे संन्यासियों को संसार में रहना है, पूरी तरह संसार में, हर चुनौती का जवाब देना है। जितना अधिक आप जीवन की चुनौतियों का सामना करते हैं, उतने ही बुद्धिमान हो जाते हैं। बुद्धि एक तलवार की तरह है: जितना अधिक आप इसका उपयोग करते हैं, उतना ही यह तेज रहती है। यदि आप इसका उपयोग नहीं करते हैं, तो यह जंग लगने लगता है और अपना तीखापन खो देती है - यह बिल्कुल बेकार हो जाती है।

इसलिए आपके संत नीरस और मृत दिखते हैं। लेकिन हमें इन मृत लाशों का सम्मान करने के लिए वातानुकूलित किया गया है। हमें हजारों सालों से बताया गया है कि ये असली लोग हैं। वे बिल्कुल भी वास्तविक नहीं हैं! वे प्लास्टिक और नकली हैं। एक कायर कभी भी वास्तविक व्यक्ति नहीं हो सकता। वास्तविकता को जीवन की सभी चुनौतियों, खतरों, और असुरक्षाओं की आवश्यकता है। तभी सत्यनिष्ठा, प्रामाणिकता, और जिम्मेदारी पैदा होती है। दुनिया में रहो, लेकिन इसके मत बनो। दुनिया में जियो, लेकिन इसे अपने अंदर रहने मत दो। यही मेरा संदेश है।

एक ज़ेन कहावत है:
जंगली गीज़ का इरादा नहीं है
अपने प्रतिबिंब डालने के लिए।
पानी का कोई मन नहीं है
उनकी छवि प्राप्त करने के लिए।

जंगली गीज़ को पानी में अपने प्रतिबिंब डालने की कोई इच्छा नहीं है, और पानी को अपनी छवि प्राप्त करने की कोई इच्छा नहीं है - हालांकि ऐसा होता है! जब जंगली गीज़ उड़ता है, तो पानी इसे दर्शाता है। प्रतिबिंब है, छवि है, लेकिन पानी को प्रतिबिंबित करने की कोई इच्छा नहीं है और जंगली गीज़ भी प्रतिबिंबित होने के लिए लालायित नहीं हैं।

मेरे संन्यासियों का यही तरीका होना चाहिए। संसार में रहो, समग्रता से जियो, बिना महत्वाकांक्षाओं के, बिना इच्छाओं के—क्योंकि सारी इच्छाएं जीने से विचलित करती हैं, सारी महत्वाकांक्षाएं वर्तमान का बलिदान कर देती हैं। लोभी मत बनो, क्योंकि लोभ तुम्हें भविष्य में ले जाता है; पजेसिव मत बनो, क्योंकि पजेसिवनेस अतीत से चिपकाए रखता है। एक आदमी जो वर्तमान में जीना चाहता है, उसे इन सबसे मुक्त होना होगा।

वर्तमान में जीने की कोशिश करें और ध्यान से सभी इच्छाओं और महत्वाकांक्षाओं को पहचानें। ध्यान का अभ्यास करें ताकि आप केंद्रित रहें और जीवन के चक्रवात में स्थिरता पा सकें। कमल के फूल की तरह बनें: कीचड़ में उगें लेकिन उससे अप्रभावित रहें। यह एक सच्चे संन्यासी का तरीका है: दुनिया में होना लेकिन अछूता रहना, इससे अप्रभावित रहना।

आनंद पूनम, जब ध्यान होता है—और इसे ही मैं ध्यान कहता हूं: संसार में होना और अछूता रहना—प्रेम एक उप-उत्पाद के रूप में आता है।

ये मेरे संन्यासियों के स्तंभ हैं: पहला, जीवन-प्रतिज्ञान, बिना शर्त जीवन का सम्मान; दूसरा, ध्यान; तीसरा, प्रेम; और चौथा... जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता, इसे केवल चौथा, तुरिया कहा जा सकता है। अगर आप जीवन को समग्रता, ध्यानपूर्वक, प्रेमपूर्वक जीते हैं, तो आपको कुछ ऐसा अनुभव होता है जो अकथनीय है। लाओत्सु इसे ताओ कहते

हैं, बुद्ध इसे धम्म कहते हैं, जीसस इसे लोगो कहते हैं: अलग-अलग नाम अनाम अनुभव की ओर इशारा करते हैं। यदि आप चाहें तो आप इसे भगवान कह सकते हैं। मेरी अपनी पसंद इसे "भगवत्ता" कहना है, न कि "ईश्वर", क्योंकि भगवान आपको एक व्यक्ति का ख्याल देता है और भगवत्ता केवल उपस्थिति का ख्याल देती है।

ये मेरे मंदिर के चार स्तंभ हैं, और प्रत्येक संन्यासी को इन चार स्तंभों को विकसित करना है क्योंकि प्रत्येक संन्यासी को भगवत्ता का मंदिर बनना है।

जीवन की कला
प्रेम है द्वार प्रभु का-2

मैं अत्यंत आनंदित हूं। छोटे छोटे बच्चों के बीच बोलना अत्यंत आनंदपूर्ण होता है। एक अर्थ में अत्यंत सृजनात्मक होता है। बूढ़ों के बीच मुझे बोलना इतना सुखद प्रतीत नहीं होता। क्योंकि उनमें साहस की कमी होती है, जिसके कारण उनके जीवन में क्रांति होना करीब करीब असंभव है। छोटे बच्चों में तो साहस अभी जन्म लेने को होता है। इसलिए उनके साहस को पुकारा जा सकता है और उनसे आशा भी बांधी जा सकती है। एक बिल्कुल ही नई मनुष्यता की जरूरत है। शायद उस दिशा में तुम्हें प्रेरित कर सकूं इसलिए मैं खुश हूं।

मैं थोड़ी सी बातें बच्चों से कहना चाहूंगा, कुछ अध्यापकों से और कुछ अभिभावकों से जो यहां मौजूद हैं, क्योंकि शिक्षा इन तीनों पर ही निर्भर होती है।

पहली बात तो मैं यह कहूं कि विद्यालय सारी दुनिया में बनाए जा रहे हैं, विश्वविद्यालय बनाए जा रहे हैं। सारी दुनिया का ध्यान बच्चों की शिक्षा पर दिया जा रहा है और ज्यादा से ज्यादा लोग शिक्षित भी होते जा रहे हैं, लेकिन परिणाम बहुत शुभ नहीं है। अभी हमारे मुल्क में शिक्षा कुछ कम है, कुछ दिनों में बढ़ जाएगी, लेकिन शिक्षा के साथ-साथ जगत में न शांति आ रही है, न आनंद आ रहा है। हम मानते हैं कि शिक्षा देकर बहुत कुछ हो जाएगा लेकिन ऐसा होता नहीं। जरूर शिक्षा के आधारों में भूलें होंगी, निश्चित ही कुछ आधार भूत गड़बड़ होगी। शिक्षा का उपक्रम असफल होंगी, निश्चित ही कुछ आधारभूत गड़बड़ होगी। शिक्षा का उपक्रम असफल ही है। एक विवेकपूर्ण संस्कृति पैदा करने में वह बिल्कुल विफल है। हम देखते हैं कि जो मनुष्य शिक्षित हैं, वे मनुष्यता की दृष्टि से उन मनुष्यों से भी नीचे हो गए है, जो कि अशिक्षित हैं। पहाड़ों में जो आदिवासी हैं, वे हमसे ज्यादा प्रेमपूर्ण हैं। हम जो बहुत ज्यादा कठोर, असय, वा पाषाण हृदय होते जा रहे हैं, वह सब शिक्षा से ही हो रहा है। वही शिक्षा तुम्हें भी मिल रही है, वही शिक्षा सारी दुनिया में सारे बच्चों को मिल रही है। इससे डर मालूम हो रहा है। तुम्हारा भविष्य कुछ बहुत प्रकाशपूर्ण नहीं है। अगर इस शिक्षा पर तुम निर्भर रहे तो तुम्हारे संबंध में बहुत आशा नहीं बांधी जा सकती। क्योंकि आज तक इस दीक्षा से जो कुछ पैदा हुआ है वह किसी भी भांति सुखद नहीं है।

जैसा कि अभी यहां कहा गया कि विद्याक्रम में धार्मिक शिक्षा जोड़ी जाए, लेकिन वह भी हो तो भी कुछ होने वाला नहीं है। क्योंकि दुनिया में धार्मिक शिक्षा बहुत दिनों से दी जा रही है, उसके परिणाम अच्छे नहीं हैं। धर्म की शिक्षा के नाम पर क्या सिखाया जाता है? अगर जैन धर्म से संबंधित विद्यालय है तो जैन धर्म की शिक्षा सिखाई जाती है और किसी दूसरे धर्म का, तो दूसरे धर्म के शास्त्र पढ़ाए जाते हैं। लेकिन शास्त्र जानने से क्या होता है? सिखाने के नाम पर बच्चों से शब्द और शास्त्र कंठस्थ करा लिए जाते हैं। कोरी बातें तुम्हारे दिमाग में डाल दी जाती हैं। तुम्हें बता दिया जाता है कि आत्मा है, स्वर्ग है, मोक्ष है। तुम्हें बता दिया जाता है कि कैवल्य-ज्ञान का क्या अर्थ है, सम्यक दर्शन क्या है, सम्यक चरित्र क्या है। यह सब तुम सीख लेते हो, उसकी परीक्षा दे देते हो और परीक्षा में अत्तीर्ण भी हो जाते हो। लेकिन इससे कोई बेहतर आदमी पैदा नहीं होता। मैं ऐसी धार्मिक शिक्षा के विरोध में हूं, क्योंकि उससे परिणाम भले की जगह बुरे ही निकलते हैं।

ऐसी शिक्षा के परिणाम स्वरूप छोटे-छोटे बच्चे यदि जैन स्कूल में पढ़े तो जैन ही हो जाते हैं, मुसलमान स्कूल में पढ़ें तो मुसलमान हो जाते हैं, ईसाई स्कूल में पढ़ें तो ईसाई हो जाते हैं, और फिर ये जैन, मुसलमान, ईसाई आपस में झगड़ाकर परेशानी पैदा करते हैं। इन सांप्रदायिक बुद्धि के लोगों से मनुष्यता का निरंतर घात होता है। इस भांति की शिक्षा से तुम्हारे भीतर धर्म का नहीं, वरना धार्मिक संकीर्णता और जड़ता का जन्म होता है। तुम संप्रदायों से बंध जाते हो; सारी मनुष्यता के साथ, एकात्मकता के साथ न बंधकर एक अलग छोटे से टुकड़े के साथ बंध जाते हो और इन टुकड़ों के कारण दुनिया में बहुत संघर्ष, बहुत वैमनस्य और बहुत ईष्र्या चली है। इसके इतने दुखद परिणाम हुए है, इतनी हिंसा बढ़ी है, कोई हिसाब

नहीं। तो फिर क्या करें? मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि धार्मिक शिक्षा की जरूरत नहीं है, धार्मिक साधना की जरूरत है। और यह बड़े आश्चर्य की बात है कि धार्मिक शिक्षा या तो जैनियों की होगी या मुसलमानों की होगी या हिंदुओं की होगी..लेकिन धार्मिक साधना न तो जैन की होती है, न मुसलमान की होती है, न हिंदू की होती है। धार्मिक साधना तो बात ही अलग है..उसका संप्रदाय से कोई संबंध नहीं है। धार्मिक साधना का क्या अर्थ है?

धार्मिक साधना का अर्थ है: बच्चों को सत्य के लिए तैयार करो, प्रेम के लिए तैयार करो। धार्मिक साधना का अर्थ है: बच्चे को शांति के लिए तैयार करो, ध्यान के लिए तैयार करो, आत्मा के भीतर जाने के लिए तैयार करो। सत्य न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिंदू का होता है। प्रेम न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिंदू का होता है। ध्यान किसी संप्रदाय का नहीं होता। लेकिन हम देते हैं धार्मिक शिक्षा और देनी चाहिए धार्मिक साधना। लेकिन आज धार्मिक साधना देने के लिए कोई उत्सुक नहीं है। बच्चों को मनुष्य बनाने की किसी की भी उत्सुकता नहीं है। हिंदू डरा हुआ है कि उसका लड़का ईसाई न हो जाए इसलिए उसके दिमाग में रामायण और गीता भर दी जाती है। ऐसे ही ईसाई भी भयभीत है। यह भय है सारी दुनिया में। और इस भय की वजह से सभी धर्म कहते हैं कि बच्चों को धार्मिक शिक्षा दी जाए। उनकी कोई इच्छा मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाने की नहीं है। उनकी इच्छा तो हिंदू बनाने की है, जैन बनाने की है, मुसलमान बनाने की है। और जो मनुष्य ऐसे विशेषणों के साथ है, वह ठीक मनुष्य नहीं है। मैं पूछना चाहता हूं कि क्यों बच्चों को हिंदू बनाया है, जैन बनाना है, ईसाई बनाना है..क्या सांप्रदायिक मूढ़ताओं और संकीर्णताओं और वैमनस्यों ने मनुष्य जाति की काफी हानि नहीं कर ली है? धर्म का जन्म इन धर्मों के कारण ही तो नहीं हो पाता है। इसलिए जिनका धर्म से प्रेम है, उनके सामने पहला लक्ष्य है: मनुष्य जाति की धर्मों से मुक्ति। जिसे धर्म का होना है, उसके लिए धर्मों के होने का कोई भी मार्ग नहीं है।

अगर मनुष्य बनाना है तो धार्मिक शिक्षा में नहीं, धार्मिक साधना में जाना पड़ेगा। और धार्मिक साधना का रास्ता बिल्कुल अलग है धार्मिक शिक्षा से। धार्मिक शिक्षा से थोथा पांडित्य पैदा होता है, धार्मिक साधना से धार्मिक चित्त पैदा होता है। पांडित्य और ज्ञान में अंतर है। थोथा पांडित्य दुनिया में मिट जाए तो बेहतर। दुनिया में ज्ञान चाहिए। धार्मिक चित्त से संतत्व पैदा होता है। और संतत्व बहुत कम है, क्योंकि जिस संत को यह ख्याल हो कि मैं जैन हूं, हिंदू हूं, मुसलमान हूं, तो समझ लेना कि वह अभी पंडित ही है। अभी तो तथाकथित संत भी इस हालत में नहीं है कि पूर्ण मनुष्यता के साथ अपना तादात्म्य कर सके। संत घर द्वार को छोड़ देता है, बच्चे छोड़ देता है, पत्नी को छोड़ देता है, वस्त्र भी छोड़ देता है लेकिन मुझे शक है उसने समाज को छोड़ा या नहीं। अगर वह हिंदू घर में पैदा हुआ तो उसने हिंदू पन को तो छोड़ा ही नहीं और यदि वह जैन घर में पैदा हुआ है तो वह अभी भी जैन बना हुआ है। वह कहता है कि मैंने समाज को छोड़ा लेकिन समाज को कहां छोड़ा? जिस समाज ने सिखाया कि तुम जैन हो, हिंदू हो, मुसलमान हो..वह उसी का तो हिस्सा बना हुआ है। पत्नी को छोड़ना बहुत आसान है, पत्नी को छोड़ना बहुत कठिन नहीं है। यदि मौका मिल जाए तो पत्नी छोड़ने को हर कोई राजी हो सकता है। पत्नी को छोड़ना कठिन नहीं है, क्योंकि पत्नी को, झेलना एक उत्तरदायित्व है। अपने बच्चों को छोड़कर भागना भी कठिन हनीं है, हर कोई कमजोर और काहिल बच्चों को छोड़कर भागना भी चाहेगा। वह कोई कठिनाइयां नहीं हैं। और जिस समाज में छोड़कर भागनेवाले को आदर मिलता हो वहां तो यह बहुत ही सरल बात है। छोड़ने से व्यक्ति उत्तरदायित्व से तो बच ही जाता है और आदर को भी उपलब्ध हो जाता है। अहंकार की भी तृप्ति होती है और बोझ भी कह हो जाता है।

यदि छोड़ना है तो समाज के उन संस्कारों को, उसके दिए गए विचारों को, समाज के द्वारा भीतर डाले गए ख्यालों को छोड़ो, किंतु समाज के द्वारा डाले गए घेरे को तोड़ना कठिन है। इसे जो जोड़ता है मेरी दृष्टि में वही साधु है। और जो इसके भीतर खड़ा है, वह पंडित से ज्यादा कभी नहीं है। दुनिया में साधना की जरूरत है। ऐसे साधु यदि दुनिया में हो सकें तो दुनिया एक अलग ढंग की दुनिया हो सकती है। एक बहुत बड़ी दुनिया का निर्माण हो सकता है जहां सारी दुनिया के बीच

प्रेम का सागर लहरा सके। यह कौन करेगा? अगर यह छोटे छोटे बच्चे नए ढंग से तैयार किए जाए तो यह हो सकता है। नहीं तो नहीं हो सकता है। मगर यह छोटे बच्चे भी उन्हीं ढांचों में ढाले जा रहे हैं, जिनमें हजारों सालों से ढलाई चल रही है। ये भी उन्हीं ढांचों में डालकर तैयार किए जाएंगे और उन्हीं लड़ाइयों को लड़ेंगे, ईष्र्याओं को पालेंगे और उन्हीं घृणाओं में जीएंगे जिनमें इनके मां बाप जिए थे।

दुनिया को बदलने के लिए शिक्षा बुनियादी से धार्मिक होनी चाहिए, लेकिन धार्मिक शिक्षण नहीं, धार्मिक साधना। इन बातों का स्पष्टी करण हो जाए तो इस गुरुकुल में भी एक क्रांति हो सकती है। धार्मिक साधना की फिकर कीजिए। बच्चों को हिंदू या जैन बनाने की कोशिश छोड़ दीजिए। बहुत दिन दुनिया में हिंदू, जैन टिकने वाले नहीं हैं। दुनिया में धर्म बचेगा, हिंदू, जैन नहीं। न यह दुनिया में बचने ही चाहिए। क्योंकि इनके कारण दुनिया में परेशानियां ही हुई हैं। यह भी मैं निवेदन करना चाहता हूं कि दुनिया से अगर हिंदू, जैन, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई चले जाए तो कोई हर्जा नहीं, महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट भी नहीं जाते। जैन के मिटने से महावीर नहीं मिटते बल्कि जैनों के होने से महावीर मिटे हुए हैं। जैनों की वजह से महावीर सबके हो नहीं पाते। एक घेरा डाले है जैनी महावीर के चारों तरफ और इनकी वजह से दूसरों के लिए दरवाजा बंद है। कितने जैन हैं जिन्होंने बाइबिल को पढ़ा हो, क्योंकि बाइबिल को ईसाइयों ने बांधकर रखा है। क्या आपको पता नहीं कि बाइबिल में अदभुत हीरे भरे हैं? कितने ईसाई हैं जिन्होंने महावीर की वाणी पढ़ी है, क्योंकि महावीर को जैन बांधकर रखे हुए हैं। और महावीर की वाणी में अदभुत खजाने भरे हैं। दुनिया में जितने भी महत्वपूर्ण खजाने थे उस खजानों पर दुष्टों ने कब्जा कर लिया है, और पूर्ण मनुष्य जाति को उससे वंचित कर दिया है। यह घेरे टूटने चाहिए ताकि यह सारी संपत्ति सबकी हो जाए। महावीर सबके हों, राम सबके हों, कृष्ण सबके हों, क्राइस्ट सब के हों।

विज्ञान तो तुम सब पढ़ते होगे। विज्ञान की खोज तो सारी दुनिया की खोज होती है। एडीसन अगर कोई खोज करता है तो वह किसकी होती है? आईन्स्टीन अगर कोई खोज करे तो वह खोज सारी दुनिया की हो जाती है। कोई भी वैज्ञानिक दुनिया में खोज करता है तो सारी दुनिया की हो जाती है। लेकिन धर्म के संबंध में जो बहुमूल्य खोज हुई है वह सारी दुनिया की अभी तक नहीं हो पाई है। इससे दुनिया बहुत दरिद्र है। इससे दुनिया की जो आध्यात्मिक समृद्धि हो सकती थी वह नहीं हो पाई।

बच्चों को इस भांति तैयार किया जाना चाहिए कि वे मनुष्य बने, धार्मिक बनें। धार्मिक होना तथाकथित धर्म भेदों में उलझने से दूसरी बात है। एक दिन एक साधु मेरे पास ठहरे हुए थे। सबेरे ही उठकर उन्होंने पूछा कि जैन मंदिर कहां है? मैंने पूछा कि क्या करिएगा जैन मंदिर को जानकर? उन्होंने कहा कि मैं आत्मध्यान के लिए वहां जाना चाहता हूं, सामायिक के लिए वहां जाना चाहता हूं। मैंने कहा कि आप निश्चित हैं कि आपका आत्मघात ही करना है? और कोई बात तो नहीं है? उन्होंने कहा कि निश्चित हूं, मुझे शांति चाहिए और आत्मघात करना चाहता हूं, और कुछ नहीं। मैंने कहा कि यहां जो जैन मंदिर है, वह जो बाजार में है, हमारे बगल में एक चर्च हैं, वहां एकदम सन्नाटा है, एकदम शांति है और आज रविवार भी नहीं है, इस लिए वहां कोई ईसाई भी नहीं आएगा, आप वहां जाए और आत्मध्यान करें, चर्च का नाम सुनते ही साधु सटपटाए और कहने लगे चर्च में? मैंने कहा आपको तब आत्मध्यान से कोई संबंध नहीं है। जिसे चर्च शब्द से बाधा है, वह आत्मा को जान सकेगा यह असंभव है। यह मारे साधु की बुद्धि है। जिसको चर्च जैसी छोटी चीज से बाधा है वह आत्मा जैसी विराट शक्ति से कैसे परिचित हो सकता है? यह असंभव है। मैंने कहा कि आपको जैन मंदिर जाना है, आपको आत्मघात से कोई मतलब नहीं है, न ध्यान से कोई मतलब है। जैन मंदिर इसलिए जाना है कि बचपन से ही सिखाया गया है कि मंदिर जाना धर्म है।

मैं आपसे कहना चाहूंगा कि आत्मा में जाना धर्म है, किसी मंदिर में जाना धर्म नहीं। लेकिन शिक्षा अगर होगी तो वह सिखाएगी कि जैन मंदिर में जाना धर्म है, और साधना अगर होगी तो वह सिखाएंगी कि भीतर जाना धर्म है। एक ईसाई से भी मैं यही कहता हूं कि चर्च अगर दूर है और जैन मंदिर पड़ोस में हैं तो वहीं बैठ जाओ, हिंदू मंदिर पड़ोस में है तो वहीं बैठ

जाओ। सवाल महत्वपूर्ण यह नहीं है कि आप किस मंदिर में बैठे हैं, सवाल महत्वपूर्ण यह है कि आप अपने भीतर प्रवेश करते हैं या नहीं? जहां आप अपने भीतर प्रवेश करते हों वहां धर्म से संबंधित होते हैं और जहां आप मकानों का हिसाब-किताब रखते हैं वहां आपका धर्म से कोई संबंध नहीं है।

मैं एक महानगरी में जाता था। वहां एक मित्र के यहां ठहरता था। उनकी बगल में ही चर्च था। बहुत सन्नाटे का स्थान था। मैं सुबह ही उठता और चर्च में चला जाता। मेरे मित्र ने कहा, आपने मुझे क्यों नहीं कहा, मैं आपको मंदिर ले चलता। मैंने कहा, मेरा काम तो यही पूरा हुआ। लेकिन में चर्च में गया इस कारण से बहुत दुखी हुए। फिर पांच वर्षों के बाद दोबारा उनके यहां मेहमान हुआ। सुबह से वे मुझ से बोलः धर्मस्थान चलिए। गया तो हैरान हो गया। वे उसी चर्च में ले गए थे उसको अब ईसाइयों ने बेच दिया था। अब स्थान मंदिर हो गया था। मैंने उनसे पूछा, यह वही जगह है, जहां मैं पहले आया था। उस समय आप नाराज हुए थे। इस बार इस जगह आप बड़ी खुशी से मुझे लेकर आए हैं। इस जगह में तो कोई भी फर्क नहीं पड़ा है। उन्होंने कहा: बहुत फर्क पड़ गया है, पहले चर्च था अब पवित्र मंदिर है।

जिनकी बुद्धि इन तख्तियों में लटकी हो, उनको भी कभी आत्मा से संबंध हो सकता है? यह असंभव है लेकिन यह तख्ती तुम्हें भी सिखाई जा सकती है, इस नाम पर कि तुम्हें धार्मिक शिक्षा दी जा रही है और यह खतरनाक होगी। यह कोई धार्मिक शिक्षा नहीं है। बच्चों को सिखाया जाना चाहिए कि तुम भीतर कैसे जा सको और यह बड़े मजे की बात है कि बूढ़े की बजाए बच्चे बड़ी आसानी से आत्म प्रवेश कर सकते हैं, क्योंकि बूढ़ों की बजाय बच्चे ज्यादा सरल हैं, ज्यादा सौम्य हैं, ज्यादा भावयुक्त हैं। इसलिए बच्चों में बहुत शीघ्रता से भीतर प्रवेश हो सकता है। बच्चे बहुत शीघ्रता से ध्यान में और सामायिक में प्रवेश पा सकते हैं। लेकिन बच्चे को कोई सिखाने वाला नहीं है। और सिखाएगा कौन? क्योंकि जो सिखानेवाला है उसे भी कोई पता नहीं। वह शिक्षक जो बच्चों के लिए धर्म शिक्षा के लिए नियुक्त किया गया है उसका भी आत्मा से कोई संबंध नहीं। और यही सारी कठिनाई हो गई है।

शिक्षकों को भी पुनः स्थिति होने की आवश्यकता है। लेकिन यदि वे सोच विचार करें तो वे स्वयं ही सम्यक दिशा में दीक्षित हो सकते हैं। वे स्वयं ही अपने विवेक को जागृत कर सकते हैं। और जिन शिक्षकों की ध्यान में गति हो, वे छोटे-छोटे बच्चों को ध्यान में ले जा सकते हैं। ध्यान कठिन भी नहीं है। ध्यान अत्यंत सरल प्रक्रिया है और एक बार उसकी छोटी सी भी झलक मिल जाए तो उसे छोड़ना कठिन है। एक बार थोड़ा सा आनंद मिल जाए तो मनुष्य का मन ऐसा है कि वह अपने आप आनंद की तरफ बहता है। मैं यहां बोल रहा हूं और एक व्यक्ति पास में वीणा बजाने लगे तो आपमें से बहुतों का मन उसकी तरफ अपने आप बह जाएगा। क्योंकि वीणा मग जो आनंद की झलक है वह मन को अपने भीतर की ओर ले जाती है। एक बार पता चल जाए कि भीतर एक आनंद है, उसकी थोड़ी सी भी झलक तुम्हीं मिल जाए तो तुम्हारा मन बार-बार वहीं लौट जाता है। दुनिया में बहुत से कामों के बीच चैबीस घंटे में यदि दो चार बार भी मन भीतर प्रवेश कर जाए तो जीवन में एक ताजगी होगी, एक आनंद होगा, जो अदभुत होगा। इस ताजगी और आनंद का यह परिणाम होगा कि तुम्हारे भीतर क्रोध और वासनाएं क्षीण होती चली जाएगी।

गुरुकुल के भीतर सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह नहीं है कि बहुत बड़े मकान बनाए जाए, यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वहां धर्म की शिक्षा दी जाए। यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वहां खास ढंग से कपड़े पहनाए जाए, खास तरह का खाना खिलाया जाए, खास समय पर उठा जाए, ये सब बातें बहुत महत्वपूर्ण नहीं हैं। यह जीवन का अत्यंत क्षुद्र अनुशासन है। और इनमें ही यदि विद्यार्थियों को बहुत अधिक बांध दिया जाए तो बाद में वे ऊंचा उठने में असमर्थ हो जाते हैं। विवेकानंद से किसी ने अमेरिका में पूछा कि आपके देश में धर्म की बहुत चचा है, लेकिन धार्मिक लोग तो दिखाई नहीं पड़ते? विवेकानंद ने कहा किः मेरे देश मग दुर्भाग्य हो गया है, मेरे देश का सारा धर्म चैके और चूल्हे का धर्म हो गया है। इसलिए सब गड़बड़ हो गई है। हमारा। मन चैके और चूल्हे में उलझ गया है। हमारा सारा चिंतन एक जगह केंद्रित है: क्या खाओ,

क्या न खाओ, किस समय खाओ और किस समय न खाओ। यह सब अच्छी बातें हो सकती हैं लेकिन खतरा यह है कि तुम्हारा मन इन्हीं सारी बातों में उलझ जाए तो तुम इनसे ऊपर उठ कर विराट शक्ति तक न पहुंच पाओगे।

गुरुकुल में जीवन की बहुत बुनियादी शिक्षा दी जानी चाहिए। मात्र आजीविका की शिक्षा पूरी शिक्षा नहीं है। तुम पांच-छह वर्षों तक रहोगे इस बीच तुम किसी न किसी तरह आत्मा से संबंधित होने के मार्ग को पा जाओ तो इसको मैं जीवन की शिक्षा और साधना कहूंगा। यही धर्म की साधना है। जीवन जीने की सम्यक कला ही तो धर्म है। धर्म जीवन विरोधी नहीं है। और जो धर्म जीवन विरोधी हो उसे धर्म ही न जानना। वह जरूर मृत्युमुख रुग्ण मस्तिष्कों की उपज होगा। ऐसी मृत्युमुख शिक्षाओं ने ही जीवन से धर्म का संबंध तोड़ दिया है। फिर शिक्षाओं को जबरदस्ती ही थोपना पड़ता है। क्योंकि हमारे भीतर जो जीवन है, वह उनका विरोध करता है।

सम्यक धर्म का तो जीवन में सदा स्वागत है क्योंकि वैसे धर्म के आधारों पर ही तो जीवन आनंद को, सौंदर्य को, सत्य को और अमृतत्व को उपलब्ध होता है। मिथ्या धर्म सदा ही नकारात्मक होता है। यही उसकी पहचान है। सम्यक धर्म होता है सदा विधायक। मिथ्या धर्म आत्म कलह में डालता है। वह कहता है यह न करो, वह न करो। विधायक धर्म आत्मसृजन में संलग्न करता है। वह जीवन की सभी शक्तियों को ऊर्ध्वमुखी बनाता है। वह कहता है: यह करो, यह करो, यह करो। वह छोड़ने को नहीं, पाने को कहता है। उसका जोर सदा ऊपर उठने पर होता है। निश्चय ही जो ऊपर उठता है, उससे बहुत कुछ अपने आप छूटता जाता है। लेकिन बल पाने के लिए है, खोने के लिए नहीं। वह कहता है: संसार को नहीं छोड़ना है बल्कि परमात्मा को पाना है।

इस संबंध में यह ध्यान रहे कि धर्म की साधना बच्चों पर थोपी न जाए क्योंकि जो थोपा जाता है प्राण उसके प्रति विरोध से भर जाते हैं। छोटे छोटे बच्चों के प्राण भी विरोध से भर जाते हैं और फिर यह विरोध जीवन भर उनके साथ रहता है। मैं एक बार थोड़े दिन के लिए एक संस्कृत महाविद्यालय में था। वहां के छात्रालय में सौ के करीब विद्यार्थी थे। वे सभी विद्यार्थी शासन से छात्रवृत्ति पाते थे। छात्रवृत्ति के कारण उनसे कुछ भी करवाया जा सकता था। उन्हें तीन बजे रात्रि से उठकर स्नान करके प्रार्थना करनी पड़ती थी। सर्दियों के दिन थे। पहले ही दिन जब मैं स्नान करने कुएं पर गया तो एकदम अंधकार था। मैंने देखा कि विद्यार्थी वहां स्नान भी करने जाते थे और प्रिंसिपल से लेकर परमात्मा तक को गालियां भी देते जाते थे। यह स्वाभाविक ही था। उस गहरी सर्दी में स्नान करने के लिए बाध्य करने में प्रिंसिपल का हाथ था, इसलिए वे पुरस्कार स्वरुप प्रिंसिपल को गालियां देते थे और प्रिंसिपल के सत्संग के कारण बेचारे परमात्मा को भी गालियां खानी पड़ती थी।

धर्म के प्रति अरुचि पैदा करना बहुत आसान है। प्रश्न तो है रुचि पैदा करने का। और धार्मिक शिक्षा देनेवाले रुचि पैदा करने में अक्सर ही असफल होते हैं। शायद मनुष्य के मन के अत्यंत सीधे सादे नियमों पर भी हम ध्यान नहीं देते है, इसीलिए उस महाविद्वालय में जिस भांति प्रार्थना करवाई जा रही थी, उससे प्रार्थना के साथ भावों का संबंध होना असंभव है। प्रार्थना तो प्रेम और आनंद से स्फुरित हो, तो ही सार्थक हो सकती है। इसलिए मेरा कहना है: बच्चों के साथ जल्दबाजी न करना। भय से, दंड से, धर्म का संबंध न जोड़ना। ऐसी बातें उनके चित्त को सदा के लिए अधार्मिक बना देती हैं। मैंने उस महाविद्यालय के प्रिंसिपल को यह कहा था तो वे मानने को राजी नहीं हुए थे, उलटे उन्होंने कहा: हम कोई जबरदस्ती नहीं करते हैं। मैंने कहा: एक सूचना निकालिए कि कल से जिसे स्वेच्छा से प्रार्थना में आना हो वे ही आवें। सूचना निकली गई। दूसरे दिन सौ में से एक भी नहीं आया। तब वे हैरान हुए। मैंने कहा: ऐसी प्रार्थना का क्या मूल्य है? फिर मैं उन बच्चों को सुबह सात बजे लेकर प्रार्थना के लिए बैठता था। प्रार्थना क्या थी, बस हम मौन होकर बैठते और सुबह की चिड़ियों के गीत सुनते। प्रभातकालीन मौन में बच्चों को आनंद आने लगा। धीरे धीरे वे सभी बच्चे स्वेच्छा से सम्मिलित होने लगे। यदि किसी दिन कोई बच्चा न आ पाता तो दुखी होता, क्योंकि सुबह की प्रार्थना का जो आनंद था, उसकी कमी उसे दिन भर

खलती। उस छात्रावास में प्रार्थना एक आनंद हो गई। वे क्षण अमूल्य हो गए। उस आनंद और शांति के लिए बच्चे के हृदय सहज ही परमात्मा के प्रति कृतज्ञात से भर जाते थे। और ये वे ही बच्चे थे जो पहले परमात्मा को गालियां देते थे।

गुरुकुल जैसे स्थानों में जबरदस्ती जरा भी नहीं होनी चाहिए। और धर्म के संबंध में तो जरा भी नहीं होनी चाहिए। इस बात से बहुत बड़ी हानि नहीं है कि बच्चा देर तक सोता रहा, लेकिन हम बात से हानि है कि बच्चा जबरदस्ती उठाया गया। देर से सोने में दुनिया में कोई हानि नहीं हुई। दुनिया में बहुत से महापुरुष देर से सोकर उठते रहे हैं। देर से उठने या जल्दी उठने का इतना महत्वपूर्ण मामला नहीं है। यह ठीक है कि कोई जल्दी उठे, सुखद है, स्वास्थप्रद है, लेकिन कोई बड़ी हानि नहीं होती है। लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि बच्चों के साथ किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होनी चाहिए। शिक्षक और मां-बाप बच्चों के साथ बहुत प्रकार की हिंसा करते हैं, और उनको ख्याल नहीं होता कि वे हिंसा कर रहे हैं। वे समझते हैं कि बहुत प्रेम प्रकट कर रहे हैं। वे समझते हैं कि हम बच्चों को बड़ा सुधार रहे हैं। अगर इस ढंग से बच्चे सुधरे होते तो आज सारी दुनिया सुधर गई होती। दुनिया तो सुधरती नहीं और आप उन्हें सुधार जा रहे हैं। आपके सुधार में जरूर गड़बड़ होगी। और अक्सर यह होता है कि जो मां-बाप बच्चे को सुधारने में लगे हैं, उनके बच्चे उतने बिगड़ते हैं, जितने दूसरे के नहीं बिगड़ते हैं।

अति अनुशासन के घातक परिणाम होते हैं। अनुशासन की जगह बच्चों के विवेक को जगाए। उनमें स्वयं की विचार शक्ति को पैदा करें। यांत्रिक अनुशासन नहीं, चाहिए सजग विवेक। लेकिन यांत्रिक अनुशासन थोपना आसान है, इसलिए हम उसे ही चुन लेते हैं। नहीं मित्रों, चाहे विवेक जगाना कितना ही कठिन हो, और उसके लिए कितना ही श्रम और प्रतीक्षा करनी पड़े, तो भी यांत्रिक अनुशासन चुनना उचित नहीं है। मनुष्य की विकृति में यांत्रिक अनुशासन से अधिक और किसी चीज का हाथ नहीं है। यांत्रिक अनुशासन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही अच्छृंखलता खड़ी होती है। क्या आज तक यही नहीं देखा गया कि जिनके मां-बाप बच्चों को सुधारने में लग जाते हैं, उसके विपरीत ही बच्चे खड़े होते हैं? इसके पीछे कारण हैं। क्योंकि अच्छा करने के पीछे आप बच्चों के साथ हिंसा करने लगते हैं, क्योंकि आपके पा ताकत है..लेकिन बच्चा प्रतिहिंसा को इकट्ठी करता रहेगा और वह आज नहीं कल उसका बदला लेगा और बदला खतरनाक होगा। जब भी लड़के के हाथ में ताकत आएगी वह आपके विरोध में खड़ा हो जाएगा। और जो जो आपने सिखाया था, उसके उल्टा वह चलने लगेगा। दुनिया में इतनी अनैतिकता है, दुनिया में इतनी अनुशासनहीनता है, लड़के आज्ञा तोड़ रहे हैं, लड़के मां-बाप की मर्यादाएं नष्ट कर रहे हैं। इसमें मां-बाप और शिक्षक का ही हाथ है। सारी मर्यादाएं जबरदस्ती थोपी जा रही हैं और उनके विरोध में प्रतिक्रिया खड़ी होती है।

इन बच्चों के साथ आपकी बहुत बड़ी कृपा यह होगी कि इन बच्चों के साथ किसी भी तरह हिंसा का वातावरण गुरुकुल में न हो। इन पर किसी भी प्रकार का बलपूर्वक अनुशासन न हो। अच्छे करने के लिए भी नहीं, क्योंकि दुनिया में जबरदस्ती से कोई कभी अच्छा हुआ ही नहीं है। आप कहेंगे कि फिर तो स्वच्छंदता हो जाएगी, फिर इन बच्चों का क्या होगा? तो मैं यह निवेदन करुं कि बच्चे प्रेम से बदलते हैं, जबरदस्ती से नहीं। जितना ज्यादा से ज्यादा प्रेम दिया जा सके, उतना वे अनुगृहीत होते हैं। जितनी स्वतंत्रता दी जा सके, उतना वे आदर से भरते हैं। जितना बच्चों को ज्यादा ज्यादा प्रोत्साहन दिया जा सके, मुक्त किया जा सके, उतना ही उनके मन में पैदा होती है और वे मानने को तैयार होते हैं। बच्चों को जितना ज्यादा दबाया जाए उतना ही विरोध पैदा होती है।

फ्रायड का नाम आपने सुना होगा। वह बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक हो गया है। एक दिन वह, उसकी पत्नी और उसका बच्चा बगीचे में घूमने गए। जब रात हो गई और वे घर को लौटने लगे तो बच्चा दिखाई नहीं दिया। पत्नी घबड़ाई गई और बोलीः अब बच्चे को कहां खोजें? क्या आप सोच सकते हैं कि फ्रायड ने क्या पूछा? उसने पूछः तुमने बच्चे को कहीं जाने के लिए मना तो नहीं किया था? पत्नी ने कहा: बड़े फुहारे पर जाने के लिए मना किया था। फ्रायड बोला: तो चलें, वहीं चल कर देख लें। वह वहां फुहारे पर पैर लटकाए बैठा हुआ था। उसकी पत्नी बोली कि आपने कैसे पहचान लिया कि बच्चा बड़े

फुहारे पर ही गया होगा? फ्रायड ने कहा कि पूरी मनुष्य जाति का अनुभव यही है। जिन बातों के लिए मां-बापों ने मना किया, बच्चे वहीं गए। इसलिए मना करनेवाले मां-बाप जिम्मेवार हैं। उनकी मनाही में जिम्मा है।

बच्चे वहां जाएंगे जहां मना किया गया है। मना करते वक्त जरा सोच समझ कर ही मना करना। क्योंकि हम जिस बात को कह रहे हैं मत करो, वह करने की प्रेरणा बन रही है। बच्चे के मन में यह बात बल पकड़ रही है कि वहां कुछ होगा, कुछ रहस्यपूर्ण, जानने जैसा और कुछ करने जैसा। आप उसके भीतर खोज को जगा रहे हैं। भीतर जिज्ञासा को जगा रहे हैं। दुनिया में जो पतन हुआ है, वह मत करो की शिक्षा के कारण ही हुआ है। अभी भी धर्म-गुरु, संन्यासी यह कहते हैं कि यह मत करो, वह मत करो, इन सब बातों का परिणाम यह हो रहा है कि पतन रोज करीब आता जा रहा है। मनुष्य नीचे गिरता जा रहा है।

मत करो कि शिक्षा से विषाक्त और जहरीली शिक्षा न कोई है, न हो सकती है। इसलिए इन बच्चों को मत करो की शिक्षा देना ही नहीं। इन बच्चों की यह सिखाना कि कुछ चीजें करने जैसी हैं। यह मत सिखाओ कि कौन सी चीजें न करने जैसी हैं। नकारात्मक नहीं, विधायक शिक्षा होनी चाहिए। दुनिया में कौन सी चीजें करने जैसी हैं और उन चीजों में कौन सा आनंद है, उस आनंद की ओर इन्हें प्रेरित करें। बच्चों से यदि यह कहें कि मांस मत खाना तो वह मांस अवश्य ही खाएंगे। उन्हें यह कहा जाए कि शराब मत पीना तो वे आज नहीं कल शराब जरूर पीएंगे। इसमें कसूर होगा उन लोगों का जो इन्हें समझा रहे हैं, सिखा रहे हैं। उनको क्या सिखाया जाए फिर।

बच्चों को कुछ करने के लिए बताया जाए, न झरने के लिए नहीं। जीवन के सृजनात्मक द्वार उनके लिए खोले जावें। निषेध नहीं, विधेय ही शिक्षा का लक्ष्य हो। उन्हें सृजनात्मक आनंद की ओर उन्मुख किया जाए। फिर तो वे दुख से और अशांति से स्वयं ही दूर रहेंगे। उन्हें प्रकाश के लिए दीक्षित किया जाए फिर तो अंधकार उन्हें खुद ही प्रीतिकर न रहेगा। और हम करते हैं उलटा ही। प्रकाश की दीक्षा तो नहीं देते, हां अंधकार से बचने की शिक्षा जरूर देते हैं।

एक बार एक मित्र मेरे पास आए। उन्होंने आकर कहा कि मैं बहुत दिनों से आपके पास आना चाहता था, लेकिन नहीं आया कि आपके पास आऊंगा तो आप मांस और शराब छोड़ने के लिए कहेंगे। ये दोनों काम मैं करता हूं। मैंने कहा कि: जिंदगी में मैंने तो कभी नहीं कहा कि यह छोड़ो, यह मत करो वे बोले कि यह जैसे ही ज्ञात हुआ मैं आपके पास आ गया हूं। उन्होंने कहा, मेरा मन बड़ा अशांत है। मैंने उनसे ध्यान करने के लिए कहा। मन कैसे शांत हो, इसके बारे में कहा। उन्होंने कहा कि इसके लिए मांस और शराब पीना छोड़ना तो जरूरी नहीं है? मैंने कहा: बिल्कुल नहीं। तीन बाद वापिस लौटे तो कहने लगे कि जैसे जैसे मन शांत होता गया, शराब पीना मुश्किल हो गया। शांत मन का व्यक्ति शराब ही नहीं पी सकता। छोड़नी ही पड़ती है। पीने का कारण ही नहीं रह जाता। अशांत मन भूलना चाहता है अपने को, इसलिए शराब पीता है, सिनेमा देखता है, गाना सुनता है। यह सब भूने की तरकीबें हैं। अगर भूने की तरकीबें छीन ली जाए तो वह पागल हो जाएगा। मन अगर शांत है तो भुलाने के लिए उपाय करने की जरूरत ही नहीं है। उन्होंने मुझसे कहा: शराब तो गई, क्या मांसाहार भी छोड़ना पड़ेगा? मैंने कहा: मुझको पता नहीं। अभी भी आपकी मर्जी हो तो ध्यान छोड़ दे। उन्होंने कहा: अब ध्यान छोड़ना कठिन है। क्योंकि भीतर मुझे आनंद झरता हुआ मालूम होता है। वे तीन माह बाद वापिस लौटे और कहने लगे कि मांस खाना भी कठिन हो गया है। कल एक मित्र के साथ पार्टी में गया था। पार्टी में मांस खाने का आग्रह हुआ। मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि मैंने पहले मांस कैसे खाया होगा। और मुझे ग्लानि होने लगी। घर लौटते ही मुझे कै हो गई।

यह निश्चित है कि मन जब शांत होगा तो दूसरे को दुख देना असंभव हो जाता है। मन जब अशांत होता है, तो दूसरों को दुख देने में मजा आता है। यह सब भीतर अशांति के कारण होता है। तो बच्चों को विधायक रूप से शांति होने का उपाय समझाइए। उन्हें जीवन में शांत होने की प्रक्रिया दें। शांत चित्त ही समग्र बुराइयों और पापों के प्रति एकमात्र सुरक्षा है। इसके लिए एक ही उपाय है कि नकारात्मक शिक्षा को क्षीण करें। बच्चों के जीवन में आनंद जगाए। और जहां आनंद है, जहां शांति है, जहां बच्चों के भीतर विवेक है, वहां बच्चों को बुरे काम करने की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती। लेकिन हम

सिखाते हैं बुरे काम मत करो। हम गलत ही बात सिखाते हैं। और जब आदमी को गलत बातें करता देखते हैं तो जमाने को दोष देते हैं। कोई जमाने को खराबी नहीं है। क्योंकि हमारे दृष्टिकोण, हमारे आधार सबके सब गलत हैं। ये ही बच्चे अदभुत रूप से शांत, अदभुत रूप से मानवी गुणों को उपलब्ध हो सकते हैं। क्योंकि आज हम जो भी कर रहे हैं गलत है, परिणाम भी गलत निकल रहे हैं।

विधायक रूप से बच्चों के जीवन में कुछ करने की चेष्टा की जो तो यह गुरुकुल है, वरना गुरुकुल नाम ही रह जाता है। जैसे और स्कूल हैं, वैसे ही यह भी स्कूल है। हो सकता है, आप इस पर चिंतन करेंगे, विचार करेंगे, कुछ रास्ता खोजेंगे तो बच्चों को तेजस्वी जीवन दिया जा सकता है कि सारे देश में गुरुकुल के बच्चे अलग से दिखाई पड़ें। गुरुकुल के बच्चे यहां की खबर ले जावें, यहां की हवा ले जावें, यहां की सुगंध ले जावें और जहां जावें वहां यह स्पष्ट प्रतीति हो कि इन्होंने जीवन दृष्टि और तरह की पाई है, इन्होंने और तरह का व्यक्तित्व पाया है।

इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप में से दो चार डाक्टर हो जाएंगे। बहुत डाक्टर हैं दुनिया में, उससे क्या फर्क पड़ने वाला है। तुममें से दो चार इंजीनियर हो जावेंगे, दो चार युरोप चले जाएंगे। इससे फर्क पड़ने वाला है? लौट कर आएंगे तो और शोषण करेंगे, और उपद्रव करेंगे, समाज का और पैसा छीनेगा और कुछ नहीं करेंगे। यह कोई मूल्य की बात नहीं कि हमारे गुरुकुल से इतने डाक्टर होगे, इतने इंजीनियर होगे, इतने मिनिस्टर हो गए। क्या मिनिस्टर होना बहुत अच्छी बात है? रोज मिनिस्टर को देखते हो और फिर भी ऐसा सोचते हो तो अंधे हो। राजनीतिज्ञों के कारण ही तो मनुष्यता संकट में है। राजनीतिज्ञों के कारण ही दुनिया युद्धों में है। सो इस बात का बिल्कुल गौरव मत मानना कि तुम्हारे गुरुकुल से कोई बड़ा राजनीतिज्ञ पैदा हो गया है। इससे तो शर्मिंदा ही होना है।

डाक्टर और इंजीनियर तो फिर भी ठीक है, यह मिनिस्टर तो बिल्कुल भी ठीक नहीं है। मैं तो चाहूंगा कि तुम इतने अच्छे आदमी बनना कि तुम में से कोई भी मिनिस्टर न होना चाहे।

महत्वाकांक्षा तो रोग है और वह केवल उनमें ही जड़ पकड़ता है जो कि स्वयं में हीन ग्रंथि से पीड़ित होते हैं। महत्वाकांक्षा भी विक्षिप्तता का एक प्रकार है। स्वस्थ चित्त व्यक्ति महत्वाकांक्षी नहीं होता है। शिक्षा सम्यक हो तो जीवन में महत्वाकांक्षा का कोई स्थान न होना चाहिए। जीओ..गहरा से गहरा जीवन जीओ। लेकिन पद पर यश के लिए जो जीता है, वह जो गहरा कभी भी नहीं जी पाता है। वह तो अत्यंत उथले में जीता है। उसका कोई जीवन थोड़े ही है। वह तो महत्वाकांक्षा से खींचा जाता है। जीवन उसका एक शांति और आनंद नहीं बल्कि एक तनाव और पीड़ा है। इसलिए कितने महत्वाकांक्षी पागल पैदा किए गए, इससे गुरुकुल की प्रतिष्ठा बढ़ने वाली नहीं है। यह एक धर्म प्रतिष्ठान है, इसके लिए कोई और गौरव निर्मित करें। यह एक आदर की बात होगी कि गुरुकुल से निकला हुआ विद्यार्थी महत्वाकांक्षी न हो, पदाकांक्षी न हो, धनाकांक्षी न हो तो हम कह सकते हैं हमारे गुरुकुल से निकला हुआ विद्यार्थी महत्वाकांक्षी न हो, पदाकांक्षी न हो, धनाकांक्षी न हो तो हम कह सकते हैं कि हमारे गुरुकुल से निकला विद्यार्थी विक्षिप्त नहीं है, स्वस्थ चित्त है।

बच्चों को महत्वाकांक्षा नहीं, प्रेम सिखाइए। बच्चों को प्रथम आने की दौड़ में मत लगाइए। बच्चों को अंतिम खड़ा होने की सामथ्र्य और बल सिखाइए। क्राइस्ट ने कहा है: धन्य हैं वे लोग, जो अंतिम खड़ा होने में समर्थ हैं। उन लोगों को धन्य नहीं कहा जो प्रथम खड़े हो जाते हैं। क्राइस्ट ने उन लोगों को धन्य कहा है जो अंतिम खड़े होने में समर्थ हैं। गुरुकुल तो वह होगी कि बच्चे को हम यह सिखो कि वह सब भांति के पागलपनों में दूर पीछे खड़े रहने में समर्थ हों। वह प्रेम में इतना आगे हो कि प्रतिस्पर्धा में पीछे खड़ा हो सके। लेकिन हम तो प्रतिस्पर्धा सिखाते हैं, प्रेम नहीं, और तब यदि हमारी सयता रोज युद्धों में पड़ जाती हो तो आश्चर्य नहीं। शायद हम सोचते हैं कि बिना स्पर्धा के तो कुछ सिखाया ही नहीं जा सकता है, लेकिन यह भूल है। स्पर्धा का ज्वर पैदा करके जो सिखाया जाता है, वह सब घातक है, क्योंकि फिर वह ज्वर जीवन भर नहीं उतरता है।

सहयोगियों से स्पर्धा नहीं, वरन जो सिखाया जा रहा है, उसके प्रति प्रेम और आनंद पैदा करें। संगीत साथियों से स्पर्धा में भी सीखा जा सकता है और संगीत के प्रेम में भी। ऐसे ही गणित भी और ऐसे ही शेष सब कुछ निश्चय ही संगीत से प्रेम में भी एक स्पर्धा होगी, लेकिन वह स्वयं से ही होगी। वह होगी स्वयं को ही निरंतर अतिक्रमण करने की। मैं जहां आज हूं वहां कल मैं न रहूं। मैं जहां कल था, वही आज भी न ठहरा रहूं। ऐसी आत्मस्पर्धा शुभ है। लेकिन दूसरों से जो प्रतियोगिता है, वह जीवन को बहुत दुखों और तनावों में ले जाती है, क्योंकि उस सारी दौड़ का केंद्र अहंकार है और अहंकार नर्क का मार्ग है।

लेकिन अभी तो सभी भांति परोक्ष अपरोक्ष अहंकार ही सिखाया जाता है। वह देखो..दीवाल पर क्या लिखा है? लिखा है: राजा तो केवल अपने ही देश में लेकिन विद्वान सर्वत्र पूजता है। इसका क्या अर्थ है, क्या प्रयोजन है? निश्चय ही एक ही अभिप्राय है कि विद्वान बनो। लेकिन क्या पूजने की, पूजा पाने की इच्छा कोई शुभेच्छा है? इस भांति त्याग की शिक्षा भी दी जाती है। त्यागी बनो क्योंकि त्यागी पुजता है। लेकिन जो पूजना चाहता है क्या वह ज्ञानी या त्यागी हो सकता है? पूजा जाने की इच्छा तो अत्यंत गहरे अज्ञान और मूढ़ता से उत्पन्न होती है। वह तो निपट अहंकार है। और अहंकार से बड़ा न दुख है न दारिद्रय है, न दुर्भाग्य है।

सम्यक शिक्षा अहंकार से मुक्तदायी होनी चाहिए। क्या यह गुरुकुल ऐसे बच्चे पैदा नहीं करेगा जो निर-अहंकारी हों? यह एक बात ही हो सके तो जीवन में क्रांति हो जाती है। क्या हम ऐसे बच्चे तैयार नहीं कर सकते हैं जो सरल हों, सहज हों और जिन्हें जीवन में..दैनंदिन जीवन में आनंद हो? परमात्मा के सौंदर्य को जानने में उसके संगीत को अनुभव करने में केवल वे ही सफल हो सकते हैं जो कि सहज और सरल हैं।

मैं बहुत आशाओं से भरा हुआ आपसे विदा लेता हूं। मनुष्य तो अनगढ़ पत्थरों की भांति है। मैं अभी यहां की गुफाओं से लौटा हूं। उन पत्थरों को सृष्टा कारीगर मिल गए इसलिए वे साधारण से पोषण प्रतिमाएं बन कर अप्रतिम सौंदर्य को उपलब्ध हो गए हैं। प्यारे बच्चो, तुम्हारा जीवन भी ऐसे ही सौंदर्य को प्राप्त कर सकता है। लेकिन तुम्हें अपना सृष्टा बनना होगा। निश्चय ही तुम्हारे शिक्षक, तुम्हारा गुरुकुल, तुम्हारे मां-बाप इसमें बहुत सहयोगी हो सकते हज, लेकिन फिर भी अंतिम जिम्मेवारी तो तुम पर ही है।

मनुष्य के निर्माण में वह स्वयं ही पत्थर है और स्वयं ही कारीगर और स्वयं ही वे उपकरण, जिनसे कि एक पाषाण प्रतिमा में परिवर्तित होता है।

जीवन के प्रति अहोभाव
जीवन क्रांति की दिशा-1

मेरे प्रिय आत्मन्!

मैं एक नये बनते हुए मंदिर के पास से निकलता था। मंदिर की दीवालें बन गई थीं। शिखर निर्मित हो रहा था। मंदिर की मूर्ति भी निर्मित हो रही थी। सैकड़ों मजदूर पत्थर तोड़ने में लगे थे। मैंने पत्थर तोड़ते एक मजदूर से पूछा: मित्र क्या कर रहे हो? उस मजदूर ने बहुत गुस्से से मुझे देखा और कहा: क्या आपके पास आंखें नहीं हैं? क्या आपको दिखाई नहीं पड़ता? मैं पत्थर तोड़ रहा हूं। कोई क्रोध होगा उसके मन में, कोई निराशा होगी। और पत्थर तोड़ना कोई आनंद का काम भी नहीं हो सकता है।

मैं उस मजदूर को छोड़ कर आगे बढ़ गया और दूसरे मजदूर से पूछा। वह भी पत्थर तोड़ रहा था। मित्र क्या कर रहे हो? उस मजदूर ने क्रोध से तो नहीं लेकिन अत्यंत उदासी से मेरी तरफ देखा और कहा: आजीविका कमा रहा हूं, बच्चों के लिए रोटी कमा रहा हूं। क्या आपको दिखाई नहीं पड़ता? वह भी पत्थर तोड़ रहा था। लेकिन उसने कहा, बच्चों के लिए रोटी कमा रहा हूं।

निश्चित ही केवल रोटी कमाना भी कोई बहुत आनंद की बात नहीं हो सकती है। वह उदास था और दुखी था, लेकिन फिर भी पत्थर तोड़ने वाले से भिन्न थी उसकी दशा। वह क्रोधित नहीं था।

मैं और आगे बढ़ा और एक तीसरे पत्थर तोड़ने वाले आदमी से मैंने पूछा: मित्र क्या कर रहे हो? वह कोई गीत गुनगुनाता था। उसने आंखें ऊपर उठाईं। उसकी आंखों में किसी आनंद की झलक थी। उसने कहा: देखते नहीं हैं आप, भगवान का मंदिर बना रहा हूं? वह भी पत्थर तोड़ रहा था।

वे तीनों ही पत्थर तोड़ रहे थे..एक क्रोध से भरा था, एक उदासी से, एक आनंद से। वे तीनों एक ही काम कर रहे थे। लेकिन जो आदमी पत्थर तोड़ रहा था, वह क्रोध से भरेगा ही; क्योंकि जीवन पत्थर तोड़ने के लिए नहीं है। और जिनका जीवन पत्थर तोड़ने में ही नष्ट हो जाता है, वे यदि क्रोधित हो उठते हों, तो आश्चर्य नहीं। दूसरा व्यक्ति क्रोधित तो नहीं था, लेकिन उदास था। क्योंकि जिंदगी रोटी कमाने में ही व्यतीत हो जाए, तो उदासी के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं आ सकता। और वे लोग अभागे हैं, जो रोटी कमाने में ही जीवन को नष्ट कर देते हैं। लेकिन तीसरा व्यक्ति भगवान का मंदिर बना रहा था। वह भी पत्थर तोड़ रहा था। लेकिन भगवान का मंदिर बनाना एक आनंद है। और धन्य हैं वे लोग जो जीवन में भगवान के मंदिर को बनाने में समर्थ हो पाते हैं। इन तीन दिनों में हम भगवान के मंदिर बनाने वाले कैसे बन सकते हैं, इस संबंध में ही थोड़ी बातें मैं आपसे करूंगा।

आज की इस पहली चर्चा में यह बड़े दुख से मुझे कहना पड़ता है कि पृथ्वी पर अधिकतम लोग या तो पत्थर तोड़ते हैं या ज्यादा से ज्यादा रोटी कमाते हैं। मुश्किल से कोई सौभाग्यशाली कभी भगवान के मंदिर के बनाने में संलग्न हो पाता है। इसीलिए तो इतना दुख है, इतनी उदासी है, इतना क्रोध है, इतना फ्रस्ट्रेशन, इतना विषाद है।

लेकिन मनुष्य क्यों जीवन को भगवान का मंदिर नहीं बना पाता है? क्या कारण है कि जीवन एक आनंद नहीं हो पाता? क्या कारण है, जीवन एक नृत्य नहीं बन पाता? क्या कारण है, जीवन की वीणा पर संगीत पैदा नहीं होता है? जीवन एक दुख भरी रात क्यों हो? जीवन एक प्रकाश से भरा हुआ दिवस क्यों नहीं? जीवन कांटों का मार्ग ही क्यों हो? फूलों की बगिया से गुजर जाना क्यों नहीं हो? जीवन दुख और आंसू ही क्यों हो? एक आनंद और एक मुस्कुराहट क्यों नहीं? कोई बुनियादी कारण होगा! और उस कारण पर शायद एक व्यक्ति का सवाल नहीं है, पूरी मनुष्य-जाति का सवाल है। किसी एक व्यक्ति की भूल नहीं। जैसे पूरी मनुष्य-जाति किसी बुनियादी भूल को कर रही है। उस पहली भूल पर ही आज मुझे बात करनी है।

वह पहली भूल यह है..आज तक मनुष्य के इतिहास में, मनुष्य के अगुवा और नेता होने वाले लोग बीमार और रुग्ण रहे हैं। मनुष्य-जाति को अब तक स्वस्थ मस्तिष्क का नेतृत्व नहीं मिल सका है। मनुष्य को उन लोगों ने नेतृत्व दिया है जो अपने भीतर दुखी, रुग्ण, अस्वस्थ और विक्षिप्त थे। स्वस्थ व्यक्तित्व का नेतृत्व मनुष्य-जाति को नहीं उपलब्ध हो सका है। रुग्ण लोगों ने सारे जीवन के कुओं को विषाक्त कर दिया है। वे खुद जीवन में जिस आनंद को नहीं पा सके, अपनी असमर्थता को उन्होंने जीवन की ही भूल समझानी शुरु कर दी।

उस लोमड़ी की कथा हम सबने पढ़ी है, जो अंगूर के गुच्छों को तोड़ने में संलग्न थी। बहुत उछली और कूदी, उसने पूरी शक्ति लगाई लेकिन अंगूर के गुच्छों तक नहीं पहंुच सकी। फिर वह बहुत गरिमा और गौरव से, बहुत डिग्निटी से वापस लौट गई और राह पर जो लोग मिले उनसे उसने कहा, मुझे क्या पता था कि अंगूर खट्टे हैं। मैंने तो सोचा था अंगूर पक गए हैं, लेकिन निकट जाकर पता चला कि अंगूर खट्टे हैं। उन्हें तोड़ने में कोई सार नहीं है।

मनुष्य-जाति को भी ऐसे लोगों ने नेतृत्व दिया है जिन्हें जीवन के अंगूर उपलब्ध नहीं हो सके और उन्होंने कहा: सारा जीवन खट्टा है, असार है, व्यर्थ है। हमें क्या मालूम था कि जीवन इतना खट्टा है, अन्यथा हम तोड़ने ही नहीं जाते। सचाई दूसरी थी। जीवन के फल भरे रस वे उपलब्ध नहीं कर सके। लेकिन इस बात को स्वीकार करना कि जीवन के फल मुझे उपलब्ध नहीं हो सके हैं, अहंकार को बड़ी चोट लगती है। इसीलिए दूसरा उपाय आसान है कि जीवन असार है और व्यर्थ है। आज तक मनुष्य के मन को जीवन की असारता की शिक्षा ने ही विषाक्त किया है। और जमीन पर बहुत बड़े विष फैलाने वाले लोग पैदा हुए हैं। जीवन के सारे कुओं में जहर घोल दिया गया है। यही समझाया जाता रहा है आज तक..जीवन व्यर्थ है, जीवन दुख है। और जीवन में करने जैसी एक ही चीज है और वह है जीवन से छूट जाना। आवागमन से मुक्ति, मोक्ष।

झूठी हैं ये बातें और अंगूर खट्टे होने से ज्यादा इनका कोई अर्थ नहीं है। जीवन को छोड़ देने की बातें, जीवन को व्यर्थ कहने की बातें, जीवन को बुरा बताने की बातें, मनुष्य के मन में गहरे बैठा दी गई हैं। और ऐसा चित्त जो प्रारंभ से ही जीवन को दुख मान लेता हो, अगर जीवन में आनंद न पा सके, तो जिम्मेवार कौन है? हम सब जीवन में दुख से भरे हुए हैं। यह जीवन का दुख नहीं है। यह जीवन को देखने का हमारा गलत दृष्टिकोण है, जिसने जीवन को दुख से भर दिया है। जीवन बुरा नहीं है, हमारे मन विषाक्तहैं, हमारे मन रुग्ण हैं। जीवन में कांटे ही कांटे नहीं हैं, और न जीवन ऐसा है कि उसे छोड़ देना ही, उससे मुक्त हो जाना ही, उससे भाग जाना ही एक मात्र लक्ष्य हो।

नहीं, यह भगाने वाले लोगों ने सारी मनुष्य-जाति के मन को अंधकारपूर्ण कर दिया है। ये ही लोग जिन्होंने आदमी के जीवन की निंदा की है, जीवन अनुभव करने की क्षमता को, पात्रता को, कम करने वाले लोग भी हैं। लेकिन इनकी शिक्षाओं का प्रभाव रहा है। जीवन-विरोधी शिक्षाओं के प्रभाव ने ही मनुष्य की यह विकृत दशा पैदा कर दी है।

एक चर्च में एक सुबह उस चर्च के धर्मगुरु ने अपने सुनने वाले लोगों से कहा, हो सकता है आप भी वहां मौजूद रहे हों, शायद आपने यह बात सुनी भी हो। उस धर्मगुरु ने यह कहा कि मेरे मित्रो, तुममें से कितने लोग स्वर्ग जाना चाहते हैं? जो स्वर्ग जाना चाहते हों वे अपने हाथ ऊपर उठा दें। धर्मगुरु ने सोचा था, सभी लोग हाथ ऊपर उठा देंगे। करीब-करीब सभी लोगों ने हाथ ऊपर उठाए थे। लेकिन सामने बैठा हुआ एक व्यक्ति हाथ नीचे ही किए रहा। एक को छोड़ कर सभी लोगों ने हाथ ऊपर उठा दिए थे। सभी स्वर्ग जाना चाहते थे। धर्मगुरु को बहुत आश्चर्य हुआ। क्या ऐसा भी कोई आदमी हो सकता है जो नरक जाना चाहता हो! फिर उसने कहा कि अब आप अपने हाथ नीचे कर लें। और अब मैं पूछता हूं कि जो लोग नरक जाना चाहते हों, वे अपने हाथ ऊपर उठाएं। एक भी आदमी ने हाथ नहीं उठाया। उस आदमी ने भी नहीं जिसने स्वर्ग जाने के लिए हाथ नहीं उठाया था। वह धर्मगुरु हैरान हुआ। उसने कहा: मेरे भाई, तुमने न तो स्वर्ग जाने के लिए हाथ उठाया, न नरक जाने के लिए, तुम कहां जाना चाहते हो? उस आदमी ने कहा: मैं यहीं रहना चाहता हूं, जीवन में। और मैं जीवन को ही स्वर्ग बनाना चाहता हूं। न मैं स्वर्ग जाना चाहता हूं, न मैं नरक जाना चाहता हूं; क्योंकि जो स्वर्ग जाना चाहते हैं उन्होंने इस पृथ्वी

को नरक बना दिया है। क्योंकि उनकी आंखें आकाश के किसी काल्पनिक स्वर्ग में लगी हुई हैं। और वास्तविक पृथ्वी उपेक्षित पड़ी रह गई है।

जो लोग जीवन को छोड़ देना चाहते हैं, जीवन की किसी भूल के कारण नहीं, अपनी किसी रुग्णता, अपनी किसी बीमारी के कारण; जीवन को, जीवन के रस को, जीवन के आनंद को उपभोग न करने की क्षमता के कारण, वे लोग जीवन को नरक बनाने में सहयोगी हो जाते हैं।

तो उस आदमी ने कहा: जितने लोगों ने हाथ उठाए हैं स्वर्ग जाने के लिए, ये ही लोग पृथ्वी को नरक बनाए हुए हैं। मैं न स्वर्ग जाना चाहता हूं, न नरक जाना चाहता हूं। मैं इस पृथ्वी को स्वर्ग बनाना चाहता हूं।

आज तक मनुष्य को पृथ्वी को स्वर्ग बनाने की शिक्षा नहीं दी गई, इसलिए पृथ्वी नरक बन गई। इसलिए हमारा जीवन नरक बन गया है।

और मैं आपसे यह निवेदन कर दूं, जो इस जीवन में स्वर्ग में नहीं हो सकते, उनके लिए कोई स्वर्ग, कहीं भी नहीं है और न हो सकता है। और जो लोग इस जीवन को स्वर्ग में परिवर्तित कर सकते हैं, उनके लिए इस जगत में, किसी लोक में कोई नरक नहीं है। वे जहां भी होंगे, जहां भी उनका जीवन होगा, वे स्वर्ग में होने की कला में निष्णात हो गए होंगे।

जीवन एक अवसर है। उसे जो स्वर्ग बना लेता है वह आने वाले जीवन के स्वर्गों की बुनियाद रख देता है, और इस जीवन को जो नरक बना देता है वह आने वाले नरकों का रास्ता शुरू कर देता है। यात्रा शुरु कर देता है। हमने पृथ्वी को नरक बनाया है। और किन लोगों ने नरक बनाया है? उन लोगों ने...शायद मेरी बात बहुत कठोर मालूम पड़े। लेकिन उन्हीं लोगों ने, और मजबूरी है, सत्य कहना ही पड़ेगा। उन्हीं लोगों ने, जिन लोगों ने पृथ्वी के विरोध में और जीवन के विरोध में शिक्षाएं दी हैं।

जीवन का निषेध और लाइफ निगेशन सिखाया गया है। यही समझाया गया है..बुरा है जीवन, दुख है जीवन, पीड़ा है जीवन, बंधन है जीवन। पिछले जन्मों के, दुष्कर्मों का फल है जीवन। जब जीवन ऐसा हो तो फिर जीवन में आनंद का मंदिर कैसे बनाया जा सकता है? तब तो एक ही काम है हमारे हाथ में कि तोड़ दें इस मंदिर को हम, गिरा दें इसकी दीवालों को, आग लगा दें इसमें, और किसी काल्पनिक मोक्ष की तलाश करें, खोज करें।

यह मैं पहली बात आपसे कहना चाहता हूं जीवन क्रांति की दिशा में। जीवन के सृजन में पहली बात है जीवन के प्रति अहोभाव। जीवन के प्रति धन्यता का बोध, जीवन के प्रति आनंद की धारणा, जीवन के सौंदर्य और जीवन के रस के प्रति अनुग्रह, ग्रेटिट्यूड। जीवन के शत्रु जो हैं, उन्हें जीवन से कुछ भी नहीं मिलेगा। शत्रुता से कभी किसी को कुछ भी नहीं मिला है।

जीवन के मित्र जो हैं, जीवन अपनी निधियों के द्वार केवल उनके लिए ही खोलता है जो प्रेम से जीवन के द्वार पर दस्तक देते हैं, जो प्रेम से जीवन को आलिंगन करने के लिए तत्पर होते हैं, जो प्रेम से जीवन के द्वार पर प्रार्थना करते हैं, जो प्रेम से जीवन को पुकारते हैं और बुलाते हैं। और जिनके हृदय में जीवन के विरोध में कोई कांटा नहीं होता है, जीवन के स्वागत के लिए फूलों की मालाएं होती हैं, केवल उनके लिए ही जीवन एक मंदिर बन पाता है। अन्यथा फिर जीवन एक पत्थर तोड़ने से ज्यादा नहीं हो सकता है। जीवन का निषेध घातक सिद्ध हुआ है, पाय.जनस सिद्ध हुआ है। लेकिन धर्मों के नाम पर जीवन का निषेध ही प्रचलित रहा है। हम उसी आदमी को धार्मिक कहते हैं जो जीवन को जितना तोड़ दे और जीवन से जितना दूर भाग जाए, जो जीवन का जितना शत्रु हो, जीवन का जितना कंडेमनेशन, जितनी निंदा कर सके, जीवन को जितना कुत्सित, जीवन को जितना बुरा सिद्ध कर सके, जीवन को जितनी गालियां दे सके, वह आदमी उतना ही बड़ा धार्मिक प्रतीत होता है।

यही लोग हैं अधार्मिक। यही लोग हैं जिन्होंने जीवन को धार्मिक होने से वंचित रखा है। लेकिन इनका प्रभाव रहा है जीवन पर। और आज तक मनुष्य-जाति इनकी ही अंधेरी छाया के नीचे बढ़ती रही है। और जिन्हें हमने मार्ग-दर्शक समझा है,

वे ही मार्ग को भ्रष्ट करने वाले लोग हैं। इनकी तरकीब क्या रही है? इन्होंने किस भांति जीवन को बुरा और निंदित कर दिया? इन्होंने जीवन को किस भांति विकारग्रस्त सिद्ध कर दिया? इन्होंने किस भांति मनुष्य के मन में जीवन और आवागमन से छूटने का भाव पैदा कर दिया? इनकी तरकीब क्या है? इनका टेक्नीक क्या है? इन्होंने किस विधि का उपयोग किया है, जिससे जीवन के सब कुएं विषाक्त हो गए?

बड़ी, बड़ी अदभुत तरकीब है। शायद आपको ख्याल में भी न आई हो। इनकी तरकीब है एनालिसिस, इनकी तरकीब है विश्लेषण। इसे समझना बहुत जरूरी है, क्योंकि हम इसे समझ लें, तो जीवन कैसे नष्ट किया गया है, वह हमारी समझ में आ जाएगा।

मैं एक जलप्रपात देखने गया था। एक वाटरफॉल देखने गया था। एक बड़ी सुंदर रमणीक पहाड़ी से नदी गिरती थी। उसकी मर्मर ध्वनि, उसके पास खड़े हुए वृक्षों का आनंद, उस नदी की तीव्रता और वेग, सब अदभुत था और प्राणों के किसी बहुत अनजाने तलों को छू लेता था। अपने एक मित्र के साथ मैं उस जगह को देखने गया था। हम दोनों गाड़ी से उतर कर पहाड़ियों में प्रवेश करने लगे, तो मैंने अपने मित्र को कहा कि आप अपनी गाड़ी के ड्राइवर को भी बुला लें, वह भी देख लेगा। मैंने उस ड्राइवर को कहा कि तुम भी आ जाओ। उसने कहा: वहां क्या रखा हुआ है? पहाड़ और पानी! और कुछ भी नहीं। वहां है क्या? वहां है क्या पहाड़ और पानी के सिवाय? और मुझे हैरानी होती है, लोग सैकड़ों मील से चल कर देखने क्या आते हैं वहां। कुछ पत्थर पड़े हैं साहब। कुछ पानी गिरता है। और कुछ भी नहीं है।

मैंने अपने मित्र को कहा कि तुम्हारा ड्राइवर कोई धर्मगुरु होने के योग्य है। उसे विश्लेषण की, उसे एनालिसिस की कला का पता है। उसने जलप्रपात के उस सौंदर्य को दो छोटी सी चीजों में तोड़ कर स्पष्ट कर दिया है। पत्थर पड़े हैं वहां और पानी है वहां। और क्या है? बात खत्म हो गई, कुछ भी नहीं है वहां।

एक बहुत बड़े चित्रकार पिकासो के पास एक अमरीकी करोड़पति ने अपना एक चित्र बनवाया था। बहुत बड़ा धनपति था वह। उसने उचित न समझा कि पिकासो से पैसे ठहरा ले पहले से कि कितने पैसे लोगे। सोचा था कितने भी लेगा तो कितने लेगा। दो बरस लग गए चित्र बनने में। बार-बार उसने पुछवाया। पिकासो ने कहा कि देर है। फिर दो बरस बाद उसने कहा कि चित्र बन गया है। आप ले जाएं।

वह करोड़पति चित्र लेने गया। चित्र लेकर उसने कहा: कितने रुपये हुए इसके? पिकासो ने कहा: पचास हजार डालर। समझा उस करोड़पति ने मजाक की जा रही है। उसने कहा: पागल तो नहीं हैं आप? मजाक करते हैं? डरवाना चाहते हैं? इस छोटे से चित्र के पचास हजार डालर? छोटा सा कैनवस का टुकड़ा और थोड़े से रंग, दस-पांच रुपये की चीज है। है क्या इसमें? थोड़े से रंग हैं और थोड़ा सा कैनवस का टुकड़ा है, है क्या इसमें? पिकासो ने कहा: चित्र वापस रख दें। मैं एक कैनवस का टुकड़ा और थोड़े से रंग आपको दिए देता हूं। और उसने अपने सहयोगी को कहा कि जाओ और इससे भी बड़ा कैनवास का टुकड़ा ले आओ। और रंग की साबित डिबियां ले आओ और भेंट कर दो इनको। और फिर जो भी दाम आपको देना हो दे दें। उस करोड़पति ने कहा: लेकिन कैनवस को, रंग को लेकर मैं क्या करूंगा? पिकासो ने कहा: फिर भूल करते हैं आप। यह चित्र है, कैनवस और रंग नहीं। कैनवस और रंग से कोई और चीज प्रकट हुई है। लेकिन कोई चाहे तो कह सकता है, सुंदर चित्र में क्या है? थोड़े से रंग हैं और क्या है? यह विश्लेषण, जीवन की सब चीजों में पूछता है, और क्या है?

एक सुंदर चेहरे पर धर्मगुरु पूछता है..है क्या इसमें हड्डियां और मांस के सिवाय? आदमी के शरीर में क्या है? पीब है, मज्जा है, खून है, हड्डियां हैं और क्या है?

यह एनालिसिस, और है क्या? एक फूल में क्या है? कुछ भी तो नहीं है। कुछ थोड़े से केमिकल्स, क्लोरोफिल। और है क्या? एक फूल के सौंदर्य की तारीफ करें, धर्मगुरु कहेगा, है क्या इसमें? थोड़े से रंग हैं, थोड़े से रसायन हैं, और है क्या? एक कविता को धर्मगुरु के सामने रखें, एक काव्य को। वह कहेगा, है क्या? कुछ शब्दों का जोड़, और कुछ भी नहीं। अगर जीवन को हम इस भांति देखना शुरू करें तो जीवन असार हो जाएगा। पाया जाएगा, जीवन में कुछ भी नहीं है।

तीन हजार वर्षों से एनालिसिस ने, विश्लेषण ने, आदमी को बड़े धोखे में, बहुत इल्युजन में डाला है। हर चीज को तोड़ कर देखा जा सकता है, और कुछ भी नहीं पाया जाएगा। एक जिंदा आदमी को हम काट डालें और खोजें क्या है इसमें, तो हड्डियां मिलेंगी, मांस मिलेगा, आदमी कहीं भी नहीं मिलेगा। एक चित्र को काट-पीट डालें, एक मूर्ति को तोड़ डालें, तो पत्थर के टुकड़े मिलेंगे। कोई सौंदर्य की प्रतिमा नहीं खोजे से मिलेगी। एक कविता को तोड़ डालें, तो शब्द मिलेंगे, कोई काव्य नहीं, कोई पोएट्री नहीं मिलेगी। एक सुंदर चेहरे को काट-पीट डालें तो क्या मिलेगा भीतर? यह चीजों को खंड-खंड टुकड़ों में तोड़ने की कला ने सारे जीवन को असार सिद्ध करने की तरकीब धर्मगुरुओं के हाथ में दे दी थी। किसी भी चीज को तोड़-फोड़ डालो, और पूछो क्या है इसमें? प्रेम में क्या है? सौंदर्य में क्या है? स्वाद में क्या है? रस में क्या है? किसी भी चीज में कुछ नहीं है, अगर विश्लेषण किया जाए। बात असल यह है कि विश्लेषण में केवल क्षुद्र हाथ लगता है। जो सूक्ष्म है, वह विलीन हो जाता है। उसका कोई दर्शन नहीं हो पाता। विश्लेषण करने में, एनालिसिस करने में, जो व्यर्थ है वह हाथ लगता है, जो सार्थक था वह तिरोहित हो जाता है। और तब हम कह सकते हैं..कोई सार नहीं! जीवन क्या है? जन्मना, रोटी कमाना, बच्चे पैदा करना और फिर मर जाना। और जीवन क्या है? विश्लेषण पूरा हो गया और जीवन में कुछ भी हाथ नहीं लगा..तो जीवन है असार।

फिर यही तरकीब धर्मगुरुओं की वैज्ञानिकों के हाथ में लग गई। क्योंकि तीन हजार वर्षों में धर्मगुरुओं ने विश्लेषण में, एनालिसिस में, आदमी को दीक्षित कर दिया। फिर विज्ञान का जन्म हुआ, तो उसके हाथ में एनालिसिस की तरकीब लग गई। उसने कहा: कहां है आत्मा आदमी में? हम तो काट-पीट कर देखते हैं, कहीं मिलती नहीं! आत्मा नहीं है। धर्मगुरुओं ने कहा था, संसार असार है। वैज्ञानिकों ने कहा, आत्मा भी असार है। क्योंकि उसका भी विश्लेषण करते हैं तो पाई नहीं जाती। खोज-बीन करते हैं, चीजें तोड़ते हैं, कुछ भी नहीं मिलता। धर्मगुरुओं को पता नहीं था कि जिस तोड़ने की तरकीब से वे जीवन को असार कह रहे हैं, उसी तोड़ने की तरकीब से एक दिन धर्म भी असार हो जाएगा। कोई आत्मा नहीं है, क्योंकि तोड़ने से उसका कोई पता नहीं चलता है।

एक संगीतज्ञ था। उसने अपनी वीणा पर एक गीत गाया। बहुत सुंदर था। एक वैज्ञानिक भी वहां बैठा सुनता था। उसने सोचा, जरूर वीणा में कोई बात होनी चाहिए। रात जब संगीतज्ञ सो गया, वह वैज्ञानिक उसके घर में घुस गया। उसने पूरी वीणा तोड़ कर देख डाली, तार-तार कर डाली, टुकड़े-टुकड़े कर डाली। हाथ में कुछ तार लगे, कुछ टुकड़े लगे लकड़ी के, कोई संगीत पकड़ में नहीं आया। उसने कहा: सब असार है। मालूम होता है धोखा था संगीत। संगीत था नहीं, मुझे धोखा दिया गया है। वीणा को पूरा खोज लेता हूं, कहीं कोई संगीत मिलता नहीं।

जीवन का सत्य, एनालिसिस से उपलब्ध नहीं होता। जीवन का सत्य सिंथेसिस से उपलब्ध होता है। जीवन का सत्य विश्लेषण से नहीं मिलता है, संश्लेषण से मिलता है। जीवन उसके खंड-खंड टुकड़ों में नहीं, उसकी होलनेस में, उसकी परिपूर्णता में है। सौंदर्य भी परिपूर्णता में है..सत्य भी, जीवन भी, आनंद भी। जो लोग खंडों में तोड़ते हैं, वे वंचित रह जाते हैं।

लेकिन उस वंचित रह जाने को वे जीवन पर थोप देते हैं, कि जीवन में कुछ भी नहीं है। और जब जीवन में कुछ भी नहीं, तो छोड़ो इस जीवन को, भागो इस जीवन से, त्यागो इस जीवन को। फिर खोजो किसी परमात्मा को, खोजो किसी मोक्ष को, जहां सब कुछ होगा।

लेकिन अगर ये विश्लेषण करने वाले लोग किसी दिन मोक्ष पहुंच गए..जैसा कि कभी हुआ नहीं आज तक कि वे पहंुच गए हों, लेकिन अगर किसी दिन मोक्ष पहुंच गए..तो वे पाएंगे कि मोक्ष भी असार है..वहां भी कुछ नहीं है। क्योंकि मोक्ष में वे क्या पाएंगे? जो भी मिलेगा उनकी एनालिसिस सिद्ध कर देगी यहां भी कुछ नहीं है।

बर्ट्रेंड रसल ने एक बार यह कहा कि मैं सोचता हूं कि कहीं मुझे मोक्ष मिल गया, तो मोक्ष कैसा होगा? वहां न कोई दुख होगा, न सुख, न वहां शांति होगी, न अशांति। वहां न अंधकार होगा, न प्रकाश। वहां न प्रेम होगा, न घृणा। वहां होगा क्या?

और मोक्ष से लौटने का कोई उपाय नहीं है। मोक्ष में एंट्रेंस होता है, एक्झिट नहीं होती। वहां भीतर जा सकते हैं, बाहर आने का कोई मौका नहीं है। तो बर्ट्रेंड रसल ने कहा कि वहां करेंगे क्या? वहां जो लोग पहुंच गए हैं अब तक बहुत घबड़ा गए होंगे। बहुत बोर्डम पैदा हो गई होगी। वहां करेंगे क्या? वहां कोई अभाव नहीं, कोई दुख नहीं, कोई पीड़ा नहीं। वहां कोई कामना नहीं, कोई महत्वाकांक्षा नहीं। वहां लोग हैं, और हैं, और बने रहेंगे अनंत तक, बने रहेंगे अनंत तक।

नहीं, बर्ट्रेंड रसल ने कहा: मेरी तबीयत बहुत घबड़ाती है। ऐसे मोक्ष से तो नरक ही बेहतर। वहां कुछ करने को तो होगा। यह मोक्ष का विश्लेषण हो गया। रसल ने मोक्ष का विश्लेषण कर लिया। नहीं कुछ वहां भी दिखाई पड़ता।

महावीर, बुद्ध धोखे में पड़ गए मालूम होते हैं। शायद वे मोक्ष का विश्लेषण नहीं कर पाए। रसल ने मोक्ष का विश्लेषण किया तो पाया कि वहां भी कुछ नहीं हो सकता है। मनुष्य विश्लेषण की छाया में भटका है आज तक। यह मैं पहला सूत्र आपसे कहना चाहता हूं..अगर जीवन को एक मंदिर बनाना है, तो जीवन को संश्लेषण की दृष्टि, सिंथेटिक एटिट्यूड से देखने की क्षमता पैदा करनी होगी विश्लेषण की दृष्टि से नहीं। जब भी हम चीजों को तोड़ देते हैं तो स्मरण रहे, चीजें होती हैं अपनी पूर्णता में, और कोई भी चीज अपने खंडों का जोड़ नहीं होती केवल। खंडों के जोड़ से ज्यादा होती है।

एक कविता शब्दों का जोड़ ही नहीं होती, शब्दों के जोड़ से कुछ ज्यादा होती है। एक चित्र रंगों का जोड़ ही नहीं होता है, रंगों के जोड़ से कुछ ज्यादा होता है। एक संगीत केवल वीणा और वीणावादक की अंगुलियां नहीं होतीं, कुछ और भी ज्यादा होता है। और वह जो ज्यादा है, वही रहस्यपूर्ण, वही अदृश्य, वही न दिखाई पड़ने वाला जीवन का रस है, जीवन का आनंद है, जीवन में प्रभु है। जीवन जोड़ से कुछ ज्यादा है।

गणित में जोड़ होते हैं दो और दो चार होते हैं। जीवन में दो और दो चार नहीं होते। दो और दो के बाद चार तो हो जाते हैं। और एक नई चीज पैदा हो जाती है, जो दो और दो में होती ही नहीं..जो उनके मिलन में होती है।

अगर मैं किसी को प्रेम करता हूं, और उसे अपने हृदय से लगा लूं। और एक वैज्ञानिक विश्लेषण करे कि दो आदमियों की छाती की हड्डियां जब मिलती हैं तो आनंद कैसे होता होगा? तो हड्डियों के मिलने से कैसा आनंद हो सकता है? कैसा प्रेम हो सकता है? हड्डियों के मिलने से हो सकता है कोई विद्युत घर्षण पैदा हो जाती हो। यह हो सकता है कि हड्डियों को एक-दूसरे से गर्मी मिल जाती हो, लेकिन आनंद का क्या संबंध है? प्रेम का क्या संबंध है? अगर वैज्ञानिक किसी आलिंगन का विश्लेषण करे तो पाएगा, यह बेवकूफी है, एब्सर्ड है बिल्कुल। इससे कुछ नहीं मिल सकता, इसमें कुछ हो नहीं सकता।

लेकिन जो प्रेम में हैं वे जानते हैं कि आलिंगन में हड्डियां होती ही नहीं, शरीर मौजूद ही नहीं रह जाता। जब कोई किसी प्रेम से किसी को अपने हृदय के निकट लेता है, तो शरीर मौजूद ही नहीं रह जाते, शरीर अनुपस्थित हो जाते हैं। कोई और चीज उपस्थित हो जाती है, जिसका शरीर से कोई वास्ता नहीं है। दिखाई पड़ते हैं कि दो शरीर निकट आए, लेकिन निकट कोई और चीज आती है जो दिखाई भी नहीं पड़ती। आत्मा निकट आती है। लेकिन शरीर के विश्लेषण में उस आत्मा को नहीं खोजा जा सकता। सो वह झूठ हो जाती है, अशुद्ध हो जाती है, असार हो जाती है।

धर्म ने यह काम किया पहले, कि सारे जीवन को असार करने के लिए हर चीज का विश्लेषण कर दिया। फिर वैज्ञानिकों के हाथ में विश्लेषण की ताकत आ गई। उन्होंने सब चीजों का विश्लेषण करके धर्म को भी असार कर दिया। और अब आदमी खड़ा रह गया है। उसके हाथ में कुछ नहीं बचा है। न प्रेम, न परमात्मा, न संसार, न मोक्ष। सब चीजों का विश्लेषण हो गया है। और आदमी खाली हाथ खड़ा हो गया है। यह आदमी अगर दुख से न भर जाए, यह आदमी अगर जीवन के प्रति उदासी से न भर जाए, अगर यह आदमी जीवन को अंत करने के लिए तत्पर न होने लगे, तो क्या करे?

धर्मगुरुओं के विश्लेषण ने एक-एक आदमी को आत्महत्या सिखाई है, सुसाइड सिखाया है। आत्महत्या दो तरह से हो सकती है..या तो एक आदमी होलसेल आत्महत्या कर ले, इकट्ठी, या दूसरा आदमी फुटकर-फुटकर आत्महत्या करे। एक आदमी सीधा जाए और पहाड़ से कूद जाए और मर जाए। एक आदमी छुरी मार ले, जहर पी ले, या एक आदमी धीरे-धीरे मरे। पहले घर छोड़े, फिर वस्त्र छोड़े, फिर भोजन छोड़े, संन्यासी हो जाए।

धीरे-धीरे मरने के नाम को हम अब तक संन्यास कहते रहे हैं, ग्रेज्युअल सुसाइड को, धीरे-धीरे मरो। और जो आदमी इस मरने की प्रक्रिया में जितना आगे निकल जाए, जितना सूख जाए, जितना सूखे पत्तों की भांति हो जाए, जीवन की निंदा जिसे जीवन के हर रस को गंदा करने की तीव्रता से भर दे, उस आदमी को हम उतना ही आदर देते हैं। धर्म के तथाकथित झूठे प्रभावों में हमने जीवन को नहीं, मृत्यु को आदर दिया है। और जो समाज मृत्यु को आदर देता हो, उसके जीवन में आनंद कैसे हो सकता है? आत्मघात को हमने सम्मान दिया है। हमने अब तक केवल मृत्यु के देवताओं के मंदिरों में पूजा की है। हमने दीये जलाए हैं मृत्यु के सामने, जीवन के सामने नहीं।

धर्म के हाथों में, मैंने कहा: व्यक्तिगत आत्महत्या की सूझ मिली आदमी को, और विज्ञान के हाथों में सामूहिक आत्महत्या का उपाय मिल गया है। धर्म ने कहा: छोड़ो जीवन को! आवागमन से मुक्ति चाहिए। जीवन ठीक नहीं, शुभ नहीं, पाप है। यही एक मात्र पाप है, जीवित होना। मैं पिछले जन्मों के पापों के कारण जीवित हूं। आप भी पिछले जन्म के पापों के कारण जीवित हैं। जिस दिन पाप नहीं रह जाएंगे, जीवन की कोई जगह नहीं रह जाती, आप जीवित नहीं होंगे। आप जीवन में नहीं होंगे।

जो लोग पाप से मुक्त हो जाते हैं, वे जीवन से भी मुक्त हो जाते हैं। जीवन और पाप पर्यायवाची हैं, एक ही अर्थ रखते हैं। जीवित होने और पापी होने का एक ही मतलब है। क्योंकि जो पाप से मुक्त हो जाते हैं वे जीवन से भी मुक्त हो जाते हैं। तो जीवन है पाप। फिर क्या करें हम? जीवन से हटें? जीवन को छोड़ें? जीवन से मुक्त हों? आवागमन से बाहर जाने की कोशिश करें?

जीवन से हटने की सारी कोशिश मृत्यु में जाने की कोशिश ही हो सकती है, और कोई विकल्प नहीं, और कोई आल्टरनेटिव नहीं है। या तो जीवन की परिपूर्णता है, या तो जीवन के रस और आनंद में प्रवेश है, और या फिर जीवन से पीठ फेर लेनी है, जीवन से भागना है, जीवन से हटना है।

जिसे हम संन्यास कहते हैं, वह मृत्यु की ओर मुख करने का नाम है, जीवन की और पीठ फेर लेने का; मृत्यु की तरफ गति करने का नाम है। धर्मों ने व्यक्तिगत आत्मघात सिखाया। विज्ञान और आगे बढ़ गया। असल में विज्ञान हर चीज को सामूहिक बनाने का उपक्रम है।

एक व्यक्ति जिसका उपभोग कर सकता है, विज्ञान की कोशिश है कि सभी उसका उपभोग कर सकें। अकबर के महल में जितनी रोशनी होती थी, विज्ञान ने व्यवस्था कर दी कि उतनी रोशनी बंबई के झोपड़े में भी हो सके। अकबर जितने अच्छे भोजन करता था, विज्ञान कोशिश करता है हर आदमी उतने अच्छे भोजन कर सके। सम्राटों के पास जितने तीव्र वाहन थे, विज्ञान ने कोशिश की कि दरिद्रतम आदमी के पास उतने ही तीव्र वाहन हो जाएं। विज्ञान जीवन की घटनाओं को सामूहिक करने की कोशिश करता है। उसने मृत्यु को भी सामूहिक करने की व्यवस्था कर दी है। एक-एक आदमी क्यों आवागमन से मुक्त हो? सारी पृथ्वी एक ही साथ आवागमन से मुक्त क्यों न हो जाए? इसलिए हाइड्रोजन बम और एटमबम का इंतजाम किया। सभी को इकट्ठा मोक्ष क्यों न मिल जाए? सभी जीवन से छूट क्यों न जाएं? जब जीवन दुख है तो जीवन को बचाने की जरूरत क्या है? और जब जीवन पीड़ा है और उससे छूटना ही एकमात्र लक्ष्य है तो सभी सामूहिक रूप से क्यों न मोक्ष में प्रवेश पा जाएं? एक-एक आदमी कब तक मुक्त होता रहेगा? एक-एक आदमी को मोक्ष जाने में कितना समय लग जाएगा? इकट्ठा, टोटल, हम क्यों न मुक्त हो जाएं?

तो विज्ञान ने मृत्यु को भी सामूहिक, कलेक्टिव करने का उपाय कर दिया है। इन दोनों बातों में विरोध नहीं है। विश्लेषण मृत्यु पर ले ही जाता है। चाहे धार्मिक विश्लेषण हो, चाहे वैज्ञानिक विश्लेषण हो। एनालिसिस मौत पर ही ले जाती है, जीवन पर नहीं ले जाती। क्योंकि एनालिसिस का मतलब है: तोड़ना। तोड़ना, खंड-खंड करना। जो चीज तोड़ी जाती है, मर जाती है। जिसे हम खंड-खंड करते हैं वह नष्ट हो जाती है। जीवन का अर्थ है: जोड़ना। जोड़ना, अखंड करना। मृत्यु का अर्थ है: तोड़ना।

आप मरते हैं तो होता क्या है? आपके भीतर जो चीज सिंथेटिक थी वह टूट जाती है अपने एलीमेंट्स में। आपके भीतर जो जीवन था, वह खंड-खंड में बंट जाता है। और क्या होता है? मृत्यु का और अर्थ क्या है? मृत्यु का अर्थ है, जो जुड़ा था वह बिखर गया। जो संयुक्त था, वह वियुक्त हो गया। जो साथ-साथ था, वह अलग-अलग हो गया।

जीवन की प्रक्रिया है अखंडता में, इंटीग्रेशन में, सिंथेसिस में। और मृत्यु की प्रक्रिया है खंड-खंड होने में, विश्लिष्ट होने में, टूट जाने में। जो भी विश्लेषण का मार्ग पकड़ेगा..चाहे धर्म, चाहे विज्ञान..अंत में मृत्यु हाथ में आएगी। धार्मिकों ने भी एक तरह की मृत्यु हाथ में ला दी थी, विज्ञान ने दूसरी तरह की मृत्यु हाथ में ला दी है। लेकिन जीवन अब तक हाथ में नहीं आ सका।

न तो जीवन का धर्म पैदा हुआ है और न जीवन का विज्ञान पैदा हुआ है। जोड़ने का, इकट्ठेपन का, समग्रता का, होलनेस का अब तक कोई भाव जीवन पर नहीं प्रकट हो सका। इसलिए हम दुख में जीते हैं, इसलिए हम पीड़ा में जीते हैं, इसलिए हम अंधकार में जीते हैं। इसलिए जीवन से हमारा कोई संपर्क नहीं हो पाता है। न हम आनंद को जान पाते हैं, न आलोक को। हम कुछ भी नहीं जान पाते हैं। हम बिना जाने जीते हैं, और बिना जाने मर जाते हैं।

पहली बात आपसे कहना चाहता हूं। जीवन के मंदिर बनाने वाले बनना, पत्थर तोड़ने वाले नहीं, रोटी-रोजी कमाने वाले नहीं। अपमान जनक है ये बातें, कि कोई आदमी सिर्फ रोटी-रोजी कमाता है या पत्थर तोड़ता है। उसे पता ही नहीं उस आनंद का, उस गीत का, जो परमात्मा के मंदिर को बनाने में उपलब्ध होता है। जो किसी क्रिएटिविटी में..जो किसी सृजन में उपलब्ध होता है, जो खुद के जीवन को रोज-रोज बनाने में उपलब्ध होता है, उसे पता ही नहीं उस ग्रेटर सिंथेसिस की तरह, उस बड़े समन्वय की तरह, जहां भीतर का जीवन और नये-नये जोड़ को उपलब्ध होता है। रोज नये शिखर छूता है, रोज नई ऊंचाइयां छूता है, उसे पता ही नहीं।

भगवान कहीं बना-बनाया रेडीमेड नहीं बैठा है कि आप पहुंच गए और मुलाकात हो गई। भगवान क्रिएट करना होता है अपने भीतर! भगवान को जानना और पहंुचना निरंतर, सतत सृजन से गुजरने का नाम है, कॉस्टेंट क्रिएटिविटी से गुजरने का नाम है। जो अपने जीवन को नये-नये संयोगों में जोड़ता है, श्रेष्ठतर संयोगों में जोड़ता है, जोड़ता चला जाता है, जोड़ता चला जाता है, उस अल्टीमेट यूनिटी तक, जिसके आगे फिर कोई जोड़ नहीं रह जाता, कोई सिंथेसिस नहीं रह जाती उस दिन वह जानता है कि परमात्मा क्या है।

जैसे हम एक मंदिर बनाते हैं, नींव बहुत बड़ी भरनी पड़ती है। फिर हम ईंटें जोड़ते चले जाते हैं, फिर मंदिर ऊपर उठने लगता है और छोटा होने लगता है। शिखर पर पहुंच कर फिर बहुत ईंटें नहीं रह जाती, एक ही ईंट रह जाती है। छोटा होता चला जाता है शिखर, फिर अकेली ईंट रह जाती है ऊपर, फिर आगे उठने का कोई उपाय नहीं रह जाता। वहीं शिखर आ जाता है।

जीवन के मंदिर में बड़ी विस्तृत भूमि होती है, बुनियाद में, आधार में। फिर जोड़ते चलते हैं हम। और छोटी इकाई, और छोटी इकाई पैदा होती चली जाती है। जिस दिन जोड़ आखिरी हो जाता है, उस दिन जिसका अनुभव होता है, वही आत्मा है! मनुष्य के भीतर जो श्रेष्ठतम एकता पैदा होती है, जो महानतम यूनिटी पैदा होती है, जो बड़े से बड़ा समन्वय पैदा होता है, वही जीवन के देवता का अनुभव है। लेकिन हम तो जीवन को तोड़ते हैं।

हम तो एक मंदिर में जाकर कह सकते हैं क्या है यहां? कुछ ईंटें लगा दी हैं और जोड़ हो गया, और क्या है? मेरे कपड़े को हम कह सकते हैं कि क्या है इस कपड़े में। कुछ भी तो नहीं है, कुछ धागे आड़े और सीधे डाल दिए हैं, और कुछ तो नहीं है? कपड़ा सिर्फ धागा नहीं है, क्योंकि धागे से कोई शरीर नहीं ढक सकता। कपड़ा धागों से कुछ ज्यादा है, क्योंकि धागे जो नहीं करते, वह कपड़ा करता है। नहीं तो आदमी पागल था धागे से काम चला लेता। कपड़े की क्या जरूरत थी। कपड़ा धागों की कोई यूनिटी है, कोई सिंथेसिस है, कोई समन्वय है, कोई जोड़ है। और उस जोड़ में कुछ नई उपयोगिता पैदा हो जाती है। कोई नया अर्थ पैदा हो जाता है।

वह जो नया अर्थ है, उसकी तलाश, उसकी खोज ही धर्म है।

लेकिन निषेध के धर्म यह नहीं कर पाए। उन्होंने मनुष्य को मरना सिखाया है, जीना नहीं। और जो आदमी जितनी कुशलता से मर सकता है, उसको उतना सम्मान दिया। जो आदमी मरने में बड़ा अग्रणीय हो सकता है उसे शहीद कहा। यह शहीद है? लेकिन जो आदमी जीवन को जीता है कुशलता से, उसे आज तक कोई शहीद कहने वाला नहीं मिला। बदल देने चाहिए ये वैल्यूज, ये मूल्य बदल देने चाहिए। मरने वालों को शहीद कहने की क्या जरूरत है? लेकिन जो जीते हैं और जीवन को पूरे अर्थों में जीते हैं, वे ही शहीद हैं। मरना बहुत आसान है, जीना बहुत कठिन है। क्योंकि मरने में सिर्फ मरना पड़ता है, और कुछ भी नहीं करना पड़ता है। जीने में बहुत कुछ करना पड़ता है। तोड़ना बहुत आसान है, क्योंकि सिर्फ तोड़ना पड़ता है। जोड़ना बहुत कठिन है, क्योंकि जोड़ने के लिए कला चाहिए। तोड़ने के लिए तो कोई भी तोड़ सकता है।

एक मंदिर गिराना हो तो हम किन्हीं बड़े आर्किटेक्ट को खोजने नहीं जाते। गांव के कोई भी मजदूर काम दे देंगे। लेकिन एक मंदिर बनाना हो, तो गांव के मजदूर काम नहीं देते। हमें किसी आर्किटेक्ट को खोजना पड़ता है जो बनाना जानता हो, बनाने की कला जानता हो, जो जोड़ने की कला जानता हो।

अब तक धर्म के नाम पर हमने केवल तोड़ना सिखाया है, छोड़ना सिखाया है, भागना सिखाया है। यह कोई भी कर सकता है। इसके लिए कोई जीवन की कला जाननी जरूरी नहीं है। लेकिन वह धर्म अब तक पैदा नहीं हो सका जो जोड़ना सिखाए। जीवन का आर्किटेक्ट, जीवन की कला सिखाए, जीवन को निर्माण करने के सूत्र सिखाए।

पहला सूत्रः आज की सांझ मुझे आपसे बात करनी है और वह यह है कि जीवन को विश्लेषण की दृष्टि से देखना बंद कर दें, अन्यथा आपके हाथ में राख के सिवाय कुछ भी नहीं लगेगा। जीवन को देखें संश्लेषण की दृष्टि से और आपके हाथ में रस उपलब्ध होना शुरु हो जाएगा। और सब कुछ निर्भर करता है कि आप कैसे देखते हैं। जीवन वही हो जाता है जो आपकी देखने की दृष्टि होती है।

जापान से एक आदमी अफ्रीका के लिए यात्रा किया। उसी जहाज से एक अमरीकी भी यात्रा कर रहा था। वे दोनों अफ्रीका पहंुचे। वे दोनों एक ही जहाज से पहुंचे। एक ही समय पहुंचे। एक ही काम से पहुंचे, यह उन्हें पता नहीं था। वह जो अमरीकी युवक था वह भी एक बहुत बड़ी जूतोें की कंपनी का बेचने वाला एजेंट था, सेल्समैन था। वह भी अफ्रीका गया था कि अपनी कंपनी के जूते वहां बिकने की व्यवस्था कर सके और वह जापानी भी जापान की एक जूता बेचने वाली कंपनी का विक्रेता था। वह भी इसीलिए गया हुआ था।

वे दोनों एक ही जहाज से अफ्रीका में उतरे। रास्तों से गुजर कर वे अपने होटल तक पहंुचे। एक ही होटल में ठहरे। एक ही रास्ते से गुजरे। उन्हीं लोगों को दोनों ने देखा। अमरीकी ने जाकर वहां से अमेरिका केबल किया, मैं लौटते जहाज से वापस आ रहा हूं। अफ्रीका में जूते नहीं बिक सकेंगे, क्योंकि यहां कोई जूता पहनता ही नहीं है। सभी लोग नंगे पैर हैं। यहां हमारे लिए कोई सुविधा नहीं, यहां सब व्यर्थ है हमारा आना। मैं वापस लौट रहा हूं। जापानी ने भी उसी वक्त केबल किया जापान कि एक लाख जूते की जोड़ियां फौरन भेज दें, यहां बिक्री की बहुत संभावना है। कोई भी जूता नहीं पहने हुए है। एक भी आदमी के पास जूते नहीं हैं। बहुत बड़ा बाजार है। फौरन एक लाख जोड़ी तो भेज ही दें; क्योंकि एकदम से बिक्री शुरु हो जाएगी।

अमरीकी वापस लौट गया, क्योंकि कोई आदमी जहां जूता ही नहीं पहनता; वहां जूता कौन खरीदेगा? जहां जूते पहनने का रिवाज ही नहीं वहां जूते का सवाल ही क्या उठाना है?

इन दोनों की दृष्टियां भिन्न थीं। एक ने बाजार खोज लिया, एक ने बाजार खो दिया।

जीवन के बाजार में हम सब उतरते हैं। कुछ लोग बाजार खो देते हैं, कुछ लोग बाजार को उपलब्ध कर लेते हैं। जो लोग विश्लेषण से देखते हैं, उन्हें जीवन असार दिखाई पड़ता है। वे फौरन केबल करते हैं परमात्मा को आवागमन से छुटकारा दिलाओ, हम वापस आना चाहते हैं, जीवन व्यर्थ है! यहां कोई सार नहीं। हे पतितपावन! हमें जल्दी वापस बुला लो। यहां

हम नहीं रहना चाहते। लेकिन जो जीवन को संश्लेषण की दृष्टि से देखते हैं, वे परमात्मा से कहते हैं, धन्यवाद है तुझे, कि जीवन में हमें भेजने का मौका तूने दिया और इस योग्य समझा। जीवन में बड़ा आनंद है, जीवन में बड़े मौके हैं, जीवन एक बड़ी ॲापरच्युनिटी, एक बड़ा अवसर है। अनुगृहीत हैं हम तेरे कि तूने हमें इस योग्य समझा कि इस जीवन में भेजा।

रवींद्रनाथ ने मरने के दो दिन पहले एक गीत लिखा। और उस गीत में कहा कि हे परमात्मा! मैं किन शब्दों में तुझे धन्यवाद दूं, कि तूने मुझे जीने का मौका दिया। तेरा जीवन बहुत अदभुत था। और अगर कुछ दुख भी इस जीवन में मुझे मिले होंगे, तो वह मेरी भूल से मिले होंगे, तेरे जीवन के कारण नहीं।

फिर से दोहराता हूं, रवींद्रनाथ ने गाया कि अगर तेरे जीवन से कुछ दुख भी मुझे मिले होंगे, तो वह मेरी भूल से मुझे मिले, तेरे जीवन के कारण नहीं। तेरा जीवन तो बहुत धन्य था। और मेरी एक ही प्रार्थना है कि अगर तूने मुझे इस जीवन में देख कर अपात्र न समझ लिया हो, तो बार-बार मुझे जीवन के दर्शन का मौका देना, मैं बार-बार लौट आना चाहता हूं। शायद अगली बार मैं आऊं तो मैं ज्यादा पात्र होकर आऊं। जो भूलें मैंने आज की वे कल न करूं। जीवन तूने दिया, धन्यवाद! और आगे भी जीवन देना इसकी प्रार्थना है।

इस हृदय को मैं धार्मिक हृदय कहता हूं। इस हृदय को मैं जानने वाला हृदय कहता हूं। इस हृदय ने जीवन के मंदिर को बनाया और जाना, ऐसा मैं कहता हूं। जीवन का निषेध नहीं, लाइफ निगेशन नहीं, जीवन का स्वीकार, लाइफ अफर्मेशन पहला सूत्र है जीवन की क्रांति की दिशा में। जो लोग अपने जीवन को बदलना चाहते हैं, पहले तो उन्हें जीवन से मित्रता साधनी होगी, शत्रुता नहीं। पहले तो उन्हें जीवन से आलिंगन लेना होगा, पीठ नहीं फेर लेनी होगी। पहले तो उन्हें जीवन के रस में विभोर होना होगा।

लेकिन हम तो जीवन को देखते ही नहीं। सूरज उगता है, आपने कभी उसे धन्यवाद दिया है? और चल पड़े परमात्मा की खोज में। और चल पड़े आनंद की खोज में। सुबह आंख खुलती है और जीवन आपके भीतर करवट लेता है; कभी आपने धन्यवाद दिया जीवन को कि एक दिन और मिला मुझे, अनुगृहीत हुआ मैं? कृतज्ञता ज्ञापन की कभी?

आकाश में चांद-तारे होते हैं। मुफ्त, बिना आपसे कुछ लिए रोज निकल आते हैं। फूल बिना कुछ आपसे मांगे रोज खिल जाते हैं। श्वास बिना किसी चीज के व्यय किए आपके भीतर आनंद की बहुत खबरें लाते हैं। लेकिन हम वे लोग हैं जो जीवन को देखते ही नहीं। न हवाओं में, न चांद-तारों में, न सूरज में, न आदमी की आंखों में, न बच्चों की आंखों में, न स्त्रियों की आंखों में, न बूढ़ों की आंखों में। हम तो जीवन को देखते ही नहीं। हम तो ऐसे जीते हैं जैसे एक बोझ ढोते हों। हम तो ऐसे जीते हैं जैसे एक सजा काटते हों।

मैं कारागृह में गया था एक बार। वहां मैंने लोगों से पूछा, कैसे जी रहे हो? उन्होंने कहा: जीने का कोई सवाल नहीं, हम केवल सजा काट रहे हैं। मैंने कहा: अगर तुम ही सजा काटते होते तो भी ठीक था, मैं बाहर की बड़ी जेल से आ रहा हूं, वहां भी लोग सजा ही काट रहे हैं। वहां भी कोई जी नहीं रहा है, क्योंकि जीने के प्राथमिक सूत्रों का ही कोई बोध नहीं।

पहला सूत्र है: जीवन के प्रति अहोभाव, ग्रेटिट्यूड। जीवन के प्रति अनुग्रह का भाव। और जिस दिन आप अनुग्रह से देखेंगे, उसी दिन वे द्वार खुल जाएंगे जो बंद रहे हैं अब तक। और आप हैरान हो जाएंगे, यह भी मौजूद था जो मैंने कल तक देखा नहीं और मैं क्या देख रहा था?

दो कैदी एक कारागृह में बंद थे। वे दोनों कारागृह के सींखचे पकड़े हुए खड़े थे। सींखचों के सामने ही एक गंदा डबरा था, जिसमें तरह-तरह के कीड़े-मकोड़े पल रहे थे, और जिससे बेहद बदबू उठ रही थी। एक कैदी उस डबरे को देखे जा रहा था और गालियां दे रहा था कि कैद में रखा वह तो ठीक, लेकिन इस डबरे के पास? दूसरा कैदी भी उसके पास ही खड़ा था, उसकी आंखें आकाश की तरफ उठीं थीं, आकाश में पूर्णिमा का चांद निकल आया था और उससे अमृत की वर्षा हो रही थी, और उस कैदी ने अपने बगल के पड़ोसी को हिलाया और कहा: पागल, लेकिन चांद भी है, तू चांद को देखता ही नहीं? किसने कहा कि तू डबरे को देख? डबरा है, यह तो ठीक, लेकिन किसने कहा कि तू डबरे को देख? तू खुद ही चुनाव

कर रहा है डबरे को देखने का, क्योंकि चांद भी मौजूद है। और पागल, जब मैंने चांद को देखा और चांद को देख कर जब मेरी आंखें डबरे पर गईं तो मैं हैरान हो गया। वह डबरा भी बदल गया था, उस में चांद की प्रतिछाया बन रही थी। उस डबरे में भी मुझे चांद दिखाई पड़ा। क्योंकि चांद को मैंने देखा, चांद से मैं परिचित हुआ। फिर उस डबरे में मुझे कीड़े-मकोड़े ख्याल नहीं आए। चांद की प्रतिछवि ही मुझे दिखाई पड़ी और तू डबरे को देख रहा है? और मैं जानता हूं, अगर तू चांद को भी देखेगा तो डबरे की प्रतिछवि चांद में दिखाई पड़ेगी। यह बिल्कुल स्वाभाविक है।

हमारी दृष्टि हमारे जगत को निर्मित करती है। धर्मगुरुओं ने मनुष्य के जगत को विषाक्त कर दिया असार दुखपूर्ण कह कर। और उन्होंने कहा और हो गया, उनका अभिशाप फलित हो गया।

क्या हम इस दुनिया को ऐसे ही जीते रहें या जीवन की दृष्टि को बदलेंे? परमात्मा अगर कहीं है, तो जीवन के मंदिर में विराजमान है। और जिन्हें भी उस मंदिर में प्रवेश करना है, वे अहोभाव, जीवन के प्रति धन्यता का बोध, जीवन के प्रति कृतज्ञता का बोध लेकर ही प्रवेश कर सकते हैं।

पहली सीढ़ी है: जीवन के प्रति अहोभाव। और उस सीढ़ी तक पहुंचने की दृष्टि है..संश्लेषण, सिंथेसिस, होलनेस। एनालिसिस नहीं, विश्लेषण नहीं, खंड-खंड कर देना नहीं। अखंड को देखें, खंड-खंड को नहीं। जो अखंड को देखता है वह धार्मिक है, जो खंड-खंड को देखता है वह अधार्मिक है। यह जीवन क्रांति की दिशा में पहला सूत्र है।

एक छोटी सी कहानी और मैं अपनी बात पूरी करूंगा।

आने वाले दो दिनों में दो सूत्रों की और आपसे बात करूंगा।

बड़ी झूठी कहानी है। स्वर्ग में, स्वर्ग के एक रेस्तरां में बुद्ध, कनफ्यूशियस और लाओत्सु, तीनों बैठ कर गपशप कर रहे हैं। स्वर्ग में भी रेस्तरां होते हैं। क्योंकि जो आदमी जमीन से गया है वह जमीन की बहुत सी चीजें वहां ले जाता है। नहीं ले जाता तो वहां बना लेता है। फिर बुद्ध, कनफ्यूशियस और लाओत्सु तीनों ही पृथ्वी पर शायद ही किसी रेस्त्रां में गए हों। जो जमीन पर चूक गए, सोचा होगा स्वर्ग में पूरा कर लें। वे तीनों रेस्त्रां में बैठ कर गपशप करते हैं। एक अप्सरा एक बहुत सुंदर सुराही में जीवन का रस लेकर आती है। बुद्ध यह देखते ही कि जीवन का रस है आंख बंद कर लेते हैं और कहते हैं, बस। जीवन दुख और असार है, हटो यहां से, अन्यथा मैं यहां से हट जाऊंगा। लेकिन कनफ्यूशियस कहता है, थोड़ा सा चख कर देख लूं, कैसा है? क्योंकि बिना चखे कुछ भी कहना उचित नहीं। एक घूंट देख लूं कैसा है, क्योंकि बिना घूंट लिए कोई निर्णय देना उचित नहीं, योग्य नहीं। छोटी सी प्याली में एक घूंट जीवन का रस लेकर वह चखता है और कहता है, नहीं, कोई सार नहीं है, कोई सार नहीं है। वह भी आंख बंद कर लेता है। लाओत्सु कहता है कि पूरी सुराही मुझे दे दे। क्योंकि जब तक मैं पूरे को न चख लूं, कुछ भी कहना उचित नहीं। हो सकता है जो एक घूंट में न हो वह पूरे में हो। हो सकता है जो खंड में न हो अखंड में हो। तो मैं पूरे ही जीवन को पी जाऊं, फिर कुछ कहूं। वह पूरी प्याली पी जाता है और नाचने लगता है। और बुद्ध से कहता है, तुमने बिना चखे कहा कि कुछ भी नहीं है। और कनफ्यूशियस, तुमने एक घूंट पीया और कहा व्यर्थ है। लेकिन जीवन तो उसकी पूर्णता में ही जाना जा सकता है।

और मैं तुमसे कहता हूं, जो जीवन को नहीं जानता, वही कहता है, व्यर्थ है; वही कहता है, असार है। और मैं जीवन को जान कर कहता हूं, सारभूत जो कुछ है सब जीवन में है। परमात्मा जीवन में है और मोक्ष भी। लेकिन पूरे जीवन को जो जानते हैं वे ही केवल इस सत्य को अनुभव कर पाते हैं।

जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना ही प्रार्थना है, पूजा है। जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना ही संन्यास है, साधुता है। जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना ही मनुष्य का अंतिम और चरम लक्ष्य, अंतिम और चरम उद्देश्य है। धर्म उसका द्वार है, पहला सूत्र। दो सूत्रों की कल-परसों आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, और ऐसी बातों को जिनके विरोध में हमेशा साधु और संन्यासी बोलते रहे हैं। आपकी बड़ी कृपा है। शांति और प्रेम से मेरी बातों को सुनने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

जो मैंने कहा वह शब्दों का जोड़ ही नहीं है, उसका विश्लेषण मत कर लेना, अन्यथा वह व्यर्थ हो जाएगा। जो मैंने कहा उसे पूरा का पूरा देखना। उसमें शब्दों से कुछ ज्यादा भी मैंने कहने की कोशिश की है, कोई इशारा किया है जो शब्दों के पार ले जाता है। काश वह दिखाई पड़ जाए तो परमात्मा का मंदिर दूर नहीं।

अंत में सबके भीतर बैठे हुए जीवन के देवता को मैं प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन में रहस्य-भाव
जीवन क्रांति की दिशा-2

मेरे प्रिय आत्मन्!

जीवन ही परमात्मा है। जीवन के अतिरिक्त कोई परमात्मा नहीं। जीवन को जीने की कला जो जान लेते हैं वे प्रभु के मंदिर के निकट पहुंच जाते हैं। और जो जीवन से भागते हैं वे जीवन से तो वंचित होते ही हैं, परमात्मा से भी वंचित हो जाते हैं। इस संबंध में थोड़ी सी बातें कल मैंने आपसे कहीं। पहला सूत्र मैंने कल आपसे कहा है: जीवन के प्रति अहोभाव, जीवन के प्रति आनंद और अनुग्रह की भावना।

लेकिन आज तक ठीक इससे उलटी बात समझाई गई है। आज तक यही समझाया गया है..जीवन से पलायन, एस्केप, जीवन की तरफ पीठ फेर लेनी, जीवन से दूर हट जाना, जीवन से मुक्त होने की कामना। आज तक यही सिखाया गया है। और इसके दुष्परिणाम हुए हैं। इसके कारण ही पृथ्वी एक नरक और दुख का स्थान बन गई है। जो पृथ्वी स्वर्ग बन सकती थी वह नरक बन गई है।

मैंने सुना है, एक संध्या स्वर्ग के द्वार पर किसी व्यक्ति ने जाकर दस्तक दी। पहरेदार ने पूछा, तुम कहां से आते हो? उसने कहा: मैं मंगल ग्रह से आ रहा हूं। पहरेदार ने कहा: तो अभी नरक जाओ। यह द्वार तुम्हारे लिए नहीं है। स्वर्ग के दरवाजे तुम्हारे लिए नहीं हैं। अभी नरक जाओ। वह आदमी अभी गया भी न था, कि उसके पीछे एक और आदमी ने द्वार खटखटाया। पहरेदार ने फिर पूछा, तुम कौन हो और कहां से आते हो? उसने कहा, मैं एक मनुष्य हूं और पृथ्वी से आता हूं। द्वारपाल ने दरवाजे खोल दिए और कहा, तुम भीतर आ जाओ। यू हैव बीन थ्रू हेल ॲालरेडी। तुम नरक मे रह कर ही आ रहे हो। अब तुम्हें और किसी नरक जाने की कोई जरूरत नहीं है।

मनुष्य ने पृथ्वी की जो दुर्गति कर दी है, वह बड़ी आश्चर्यजनक और देखने जैसी है। हैरानी जैसी है। और बहुत भले लोगों ने इस दुर्गति में हाथ बंटाया है। उन सारे लोगों ने, जिन्होंने जीवन की निंदा की है और जीवन का कंडेमनेशन किया है, जिन्होंने जीवन को असार और बुरा कहा है, जिन्होंने जीवन के प्रति घृणा सिखाई है, उन सारे लोगों ने पृथ्वी को नरक बनाने में हाथ बंटाया है।

इस संबंध में कल मैंने आपसे कहा, यह दुर्भाव छोड़ना होगा। धार्मिक मनुष्य के मन में, जीवन के प्रति एक धन्यता का, एक ग्रेटिट्यूड का भाव लाना होगा। जीवन उसे असार नहीं दिखाई पड़ता। और अगर कहीं जीवन असार मालूम होता है, तो वह समझता है कि मेरी कोई भूल होगी जिससे जीवन गलत दिखाई पड़ रहा है। जब भी जीवन गलत दिखाई पड़ता है, तो धार्मिक आदमी अपने को गलत समझता है। लेकिन मनुष्य की पुरानी भूलों में से एक यह है कि अपनी भूल को दूसरे पर थोप देने की हमारी पुरानी प्रवृत्ति है। अपनी गलती को, अपने दोष को, अपनी व्यर्थता को, अपनी मीनिंगलेसनेस को हम जीवन पर थोप कर मुक्त हो जाते हैं। जीवन ही दुख है। हम क्या करें?

सच्चाई दूसरी है, हम जिस चित्त को लिए बैठे हैं, वह दुख का सृजन करने वाला चित्त है। हम जिस मन को लिए बैठे हैं, हम जिन वृत्तियों को लिए बैठे हैं, वे वृत्तियां दुख को पैदा करने वाली हैं। और दुख को जन्म देने वाली वृत्तियां हैं। पृथ्वी वैसी ही हो जाती है जैसे हम हैं। हम, हम हैं मौलिक रूप से केंद्रीय, पृथ्वी नहीं।

एक छोटे से गांव के बाहर एक सुबह ही सुबह एक बैलगाड़ी आकर रुकी थी। और उस बैलगाड़ी में बैठे हुए आदमी ने उस गांव के द्वार पर बैठे हुए एक बूढ़े से पूछा, इस गांव के लोग कैसे हैं? मैं इस गांव में हमेशा के लिए स्थायी निवास बनाना चाहता हूं। उस बूढ़े ने कहा: मेरे मित्र, अजनबी मित्र, इसके पहले कि मैं तुम्हें बताऊं कि इस गांव के लोग कैसे हैं, क्या मैं पूछ सकता हूं कि उस गांव के लोग कैसे थे, जिससे तुम आ रहे हो?

उस आदमी ने कहा: उनका नाम और उनका ख्याल ही मुझे क्रोध और घृणा से भर देता है। उन जैसे दुष्ट लोग इस पृथ्वी पर कहीं भी नहीं होंगे। उन शैतानों के कारण ही, उन पापियों के कारण ही तो मुझे वह गांव छोड़ना पड़ा है। मेरा हृदय जल रहा है। मैं उनके प्रति घृणा से और प्रतिशोध से भरा हुआ हूं। उनका नाम भी न लें। उस गांव की याद भी न दिलाएं।

उस बूढ़े ने कहा: फिर मैं क्षमा चाहता हूं। आप बैलगाड़ी आगे बढ़ा लें। इस गांव के लोग और भी बुरे हैं। मैं उन्हें बहुत वर्षों से जानता हूं।

वह बैलगाड़ी आगे बढ़ी भी नहीं थी कि एक घुड़सवार आकर रुक गया और उसने भी यही पूछा उस बूढ़े से कि इस गांव में निवास करना चाहता हूं। कैसे हैं इस गांव के लोग?

उस बूढ़े ने कहा: उस गांव के लोग कैसे थे जहां से तुम आते हो? उस घुड़सवार की आंखों में आनंद के आंसू आ गए। उसकी आंखें किसी दूसरे लोक में चली गईं। उसका हृदय किन्हीं की स्मृतियों से भर गया और उसने कहा, उनकी याद भी मुझे आनंद से भर देती है। कितने प्यारे लोग थे। और मैं दुखी हूं कि उन्हें छोड़ कर मुझे मजबूरियों में आना पड़ा है। लेकिन एक सपना मन में है कि कभी फिर उस गांव में वापस लौट कर बस जाऊं। वह गांव ही मेरी कब्र बने, यही मेरी कामना है। बहुत भले थे वे लोग। उनकी याद न दिलाना। उनकी याद से ही मेरा दिल टूटा जाता है। उस बूढ़े ने कहा: इधर आओ, हम तुम्हारा स्वागत करते हैं। इस गांव के लोगों को तुम उस गांव के लोगों से भी अच्छा पाओगे। मैं इस गांव के लोगों को भलीभांति जानता हूं।

काश, वह पहला बैलगाड़ी वाला आदमी भी इस बात को सुन लेता। लेकिन वह जा चुका था।

लेकिन आपको मैं ये दोनों बातें बताए देता हूं। इसके पहले कि आपकी बैलगाड़ी पृथ्वी के द्वार से आगे बढ़ जाए, मैं आपको यह कह देना चाहता हूं कि इस पृथ्वी पर आप वैसे ही लोग पाएंगे जैसे आप हैं। इस पृथ्वी को आप आनंदपूर्ण पाएंगे, अगर आपके हृदय में आनंद की वीणा बजनी शुरु हो गई हो। और इस पृथ्वी को आप दुख से भरा हुआ पाएंगे, अगर आपके हृदय का दीया बुझा है और अंधकारपूर्ण है। आपके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है पृथ्वी! जीवन वही है जो आप हैं।

जीवन को हम किस दृष्टि से देखते हैं? धार्मिक व्यक्ति जीवन से भागने वाला व्यक्ति नहीं है। भागने वाले होते होंगे कमजोर! भागने वाले होते होंगे सुस्त और आलसी! भागने वाले होते होंगे डरपोक, कावर्ड, जिन्हें जीवन का सामना करने का साहस और हिम्मत नहीं है!

धार्मिक व्यक्ति से ज्यादा साहसी तो कोई होता ही नहीं। उससे ज्यादा करेज तो किसी के भीतर होता नहीं। धार्मिक व्यक्ति भागता नहीं, स्वयं को बदलता है। और स्वयं की बदलाहट के साथ ही पाता है कि सारा जीवन बदल गया है। जिस दिन वह खुद को बदल लेता है, उसी दिन पाता है कि सारे जीवन की पूरी स्थिति बदल गई है, जीवन कुछ और हो गया है।

हमारी आंखों पर निर्भर है वह, जिसे हम देखते हैं। और हमारे प्राणों पर निर्भर है वह, जिसका हम अनुभव करते हैं। यह बात मैंने कल आपसे कही..आनंदभाव, जीवन के प्रति अहोभाव, जीवन के प्रति अनुग्रह का बोध। यह धार्मिक व्यक्ति की पहली जीवन-क्रांति का सूत्र है। आज दूसरे सूत्र पर मुझे बात करनी है।

दूसरा सूत्र है: जीवन के प्रति आश्चर्य का बोध! तीन हजार वर्षों में अगर मनुष्य ने कोई चीज खो दी है, तो आश्चर्य खो दिया है। आश्चर्य के साथ ही खो गया है धर्म! आश्चर्य के साथ ही खो गया है जीवन का रहस्य। आश्चर्य के साथ ही खो गया है वह सब जो मिस्टीरियस है, वह सब जो रहस्यपूर्ण है।

आश्चर्य हमने कैसे खो दिया है? छोटे बच्चे तो आज भी आश्चर्य को लेकर पैदा होते हैं। लेकिन मां-बाप उनके आश्चर्य की गर्दन घोंट देते हैं। छोटे बच्चे तो आज भी वैसे ही पैदा होते हैं जैसे पहले होते थे। लेकिन उनके आश्चर्य को हम उनके बोध के जगने के पहले ही नष्ट कर देते हैं। हमारी सारी शिक्षा-संस्थाएं, हमारी सारी संस्कार देने वाली व्यवस्था, हमारा समाज, हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति, एक चीज की बुनियादी शत्रु है, और वह चीज है आश्चर्य का भाव।

पहले तो धर्मों ने आश्चर्य के भाव को नष्ट कर दिया। कैसे किया? जीवन में जो-जो अज्ञात था, अननोन था और अज्ञात ही नहीं, जो-जो अज्ञेय था, अननोएबल था, धर्मों ने यह घोषणा कर दी कि हम सब जानते हैं। धर्मों ने कह दिया कि सृष्टि कैसे बनी, हमें पता है। कितने दिन में बनी है, हमें पता है। किस तारीख पर, किस सदी में और किस सन् में बनी है, यह हमें पता है। परमात्मा ने क्यों प्रकृति और सृष्टि बनाई, यह हमें पता है। धार्मिक लोगों ने बहुत बड़ा असत्य बोला है। दुनिया में इससे बड़ा कोई असत्य नहीं हो सकता था कि हमें पता है कि जीवन कैसे जन्मा? कि हमें पता है कि परमात्मा क्या है?

परमात्मा और जीवन है अज्ञात। अज्ञात ही नहीं, अज्ञेय। अननोन ही नहीं, अननोएबल।

लेकिन धर्मों ने यह घोषणा की कि हमें पता है। धर्मगुरुओं ने यह घोषणा की कि हमें मालूम है। उन्होंने इतने जोर से दावा किया कि हमें पता है। और फिर उन्होंने यह भी कहा कि अगर कोई कहेगा कि हमें पता नहीं है, या कोई अगर सिद्ध करना चाहेगा कि तुम अज्ञानी हो, तो हम अपनी दलील को तलवार से सिद्ध करके बता देंगे कि हम जो कहते हैं वह ठीक है। जिसके हाथ में तलवार है, वह जो कहता है, ठीक है। मनुष्य को पता नहीं है कुछ भी। मनुष्य का अज्ञान बहुत गहरा है। लेकिन कुछ अहंकारी लोगों ने, कुछ ऐसे लोगों ने, जो यह स्वीकार नहीं कर सकते थे कि हम नहीं जानते हैं। क्योंकि न जानने की स्वीकृति बहुत बड़ी ह्युमिलिटी है, बहुत बड़ी विनम्रता है। जो वस्तुतः धार्मिक होता है, उसी में यह विनम्रता होती है कि मैं नहीं जानता हूं। लेकिन पंडित में यह विनम्रता नहीं होती कि मैं नहीं जानता हूं। उसकी घोषणा होती है कि मैं जानता हूं। न केवल यही, कि मैं जानता हूं बल्कि दूसरे जो जानते हैं, गलत जानते हैं। ठीक तो केवल मैं ही जानता हूं। मेरी किताब ठीक, मेरा संप्रदाय ठीक, मेरे तीर्थंकर ठीक, मेरे पैगंबर ठीक, मेरे अवतार ठीक। मैं जो जानता हूं, वही ठीक है और बाकी सब गलत है। इस तरह की घोषणाओं की निरंतर पुनरुक्ति ने, और बच्चों के मन में बचपन से ही इन बातों को प्रविष्ट करा देने से, वह जो जीवन में अज्ञात था, वह विलीन हो गया, छिप गया। हमें लगने लगा कि हम सब कुछ जानते हैं। और जब मनुष्य को लगने लगता है कि मैं सब कुछ जानता हूं, तब आश्चर्य की कोई संभावना नहीं रह जाती। तब विस्मय का कोई कारण नहीं रह जाता। तब मिस्टीरियस के प्रविष्ट होने का कोई द्वार नहीं रह जाता। आदमी अपने ज्ञान के कारागृह में ही बंद हो जाता है। और वह चारों तरफ जो अज्ञात मौजूद है, उसके लिए कोई दरवाजा, कोई खिड़की नहीं रह जाती कि उससे प्रवेश कर सके।

तो पहले तो धर्मों ने मनुष्य के आश्चर्य की हत्या की..धर्मशास्त्रों ने, धर्मगुरुओं ने। फिर पीछे उनके आया विज्ञान। और विज्ञान ने और भी मनुष्य को यह ख्याल दे दिया कि हम सब जानते हैं। विज्ञान ने भी फिक्शन खड़े किए। धर्मों ने भी खड़े किए थे। कल्पना के लोक विज्ञान ने भी खड़े किए।

क्रिश्चियन कहते हैं: ईसा से चार हजार वर्ष पूर्व दुनिया की सृष्टि की परमात्मा ने। छह दिन में सृष्टि की और सातवें दिन विश्राम किया..रविवार के दिन। यह सब इन्हें पता है। फिर विज्ञान आया और विज्ञान ने पुरानी कल्पनाओं के लिए तो कहा कि ये कल्पनाएं हैं, फिक्शंस हैं! लेकिन नई कल्पनाएं खड़ी कर दीं। वैज्ञानिक कहते हैं कि नहीं, परमात्मा ने सृष्टि की, यह तो पता नहीं, लेकिन अरबों वर्ष पहले धुएं की नीहारिकाएं थीं। उन्हीं नीहारिकाओं से सूरज का जन्म हुआ, सूरज से पृथ्वी का जन्म हुआ। पृथ्वी पर जो बड़े-बड़े गड्ढे हैं, यह जो हिंद महासागर है, पैसिफिक है, अटलांटिक है, ये गड्ढे पृथ्वी से चांद का टुकड़ा अलग निकल गया, इसलिए गड्ढे पैदा हो गए। पृथ्वी से चांद पैदा हुआ है। ये सब बातें भी अत्यंत झूठी और बेबुनियाद हैं। इन बातों के लिए भी न कोई कारण है, न कोई वजह है। और न कोई वैज्ञानिक आधार है इन बातों को कहने का। लेकिन आदमी अपने अज्ञान को स्वीकार ही नहीं करना चाहता। किसी न किसी भांति वह यह भ्रम पैदा करना चाहता है कि हम जानते हैं।

एडीसन का नाम आपने सुना होगा। एक हजार आविष्कार किए एडीसन ने। शायद दुनिया में किसी एक आदमी ने इतने आविष्कार नहीं किए। विद्युत की बाबत एडीसन जितना जानता था, शायद कोई नहीं जानता था।

एडीसन अमरीका के एक छोटे से गांव में गया। उस गांव के स्कूल के बच्चों ने एक प्रदर्शनी सजाई थी। उसमें कुछ विद्युत के खेल खिलौने बनाए थे, जो बिजली से चलते थे। मोटर बनाई थी, जहाज बनाया था। एडीसन भी देखने गया। बच्चों को क्या पता था कि जो देखने आया है वह जगत का विद्युत के संबंध में जानने वाला सबसे बड़ा विचारक है। एडीसन उन बच्चों के खिलौनों को देख कर खूब खुश होने लगा। उसने पूछा, बच्चो, ये चलते कैसे हैं? बच्चों ने कहा: इलेक्ट्रिसिटी से, विद्युत से। एडीसन ने पूछा, क्या मैं पूछ सकता हूं, वॉट इ.ज इलेक्ट्रीसिटी? यह विद्युत क्या है? वे बच्चे ठगे रह गए। बच्चों के अध्यापक भी ठगे रह गए, प्रधानाध्यापक भी डरा रह गया। उनको किसी को पता नहीं कि वही आदमी एडीसन है।

फिर एडीसन ने कहा: आप घबड़ाएं नहीं, मेरा नाम है एडीसन। आपने सुना होगा। वे बोले, सुना है। आप ही तो विद्युत की सब खोज-बीन किए हैं।

एडीसन ने कहा: तुम निश्चिंत रहो, चिंतित मत होओ। मैं भी नहीं जानता हूं। मैं भी उत्तर नहीं दे सकता हूं, वॉट इ.ज इलेक्ट्रिसिटी। मुझे भी कोई पता नहीं कि विद्युत क्या है।

हम केवल विद्युत का उपयोग करना सीख गए हैं। विद्युत क्या है, हमें पता नहीं। अणु क्या है, हमें पता नहीं। अणुबम जरूर हम बनाना सीख गए हैं।

एक माली बगीचे में एक बीज बो देता है और एक पौधा बड़ा हो जाता है। पूछें माली से, पौधा क्या है? पूछें माली से, बीज पौधा कैसे बन जाता है? माली कहेगा, मुझे पता नहीं। हालांकि बीज को मैं बो देता हूं और पौधा बन जाता है। मैं बीज से पौधा बनाना सीख गया हूं। लेकिन पौधा क्या है, बीज क्या है, मुझे पता नहीं है।

विज्ञान भी बगीचों में काम करने वाले मालियों की तरह है, जो बीज से पौधा बनाना सीख गया है। लेकिन जीवन क्या है, विज्ञान के पास भी कोई उत्तर नहीं है। और मैं आपसे कहता हूं: इसका मतलब यह मत समझ लेना कि धर्मों के पास उत्तर है। धर्मों के पास भी उत्तर नहीं है। विज्ञान के पास भी उत्तर नहीं है।

आज तक आदमी के लिए जीवन के जो चरम प्रश्न हैं, उनका कोई उत्तर उपलब्ध नहीं हुआ है। पहले धार्मिक लोग धोखा देते रहे कि हमें उत्तर पता है। अब वैज्ञानिक धोखा दे रहे हैं, कि हमें उत्तर पता है। और चाहे धार्मिक धोखा दें, चाहे वैज्ञानिक, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आदमी को धोखा दिया जाता रहा है।

आज तक इस सीधे से सत्य को हम स्वीकार करने का साहस नहीं कर सके कि हमें ज्ञात नहीं है कि सत्य क्या है। सत्य अज्ञात है। जीवन और परमात्मा, सब अज्ञात हैं। मैं प्रार्थना करना चाहता हूं, अगर दुनिया में चाहते हैं आप कि धर्म वापस लौट आए, तो रहस्य के बिना, मिस्टिरीयस के बिना, विस्मय के बिना, आश्चर्य के बिना धर्म वापस नहीं लौट सकता है।

पंडितों ने, दार्शनिकों ने, फिलासफर्स ने बड़े कल्पना के जाल रचे, शब्दों के जाल रचे, अनुमानों के जाल रचे और इतने तर्क दिए उन अनुमानों के लिए कि सामान्य मनुष्य को यह भ्रम पैदा हो जाता है कि शायद ये लोग जानते हैं, शायद इन्हें पता है। और इस जानने के भ्रम ने, इस ख्याल ने कि हम जान गए हैं, जीवन के प्रति हमारे जो कदम उठ सकते थे..रहस्य के, विस्मय के, आश्चर्य के, वे उठने बंद हो गए हैं। बचपन से ही हम बच्चे के आश्चर्य की हत्या करते हैं।

शायद आपको ख्याल भी न हो, बच्चों के साथ किए जाने वाले बहुत बड़े-बड़े अपराधों में यह एक बड़ा अपराध है। बच्चा पूछता है, वृक्ष क्या है? दरख्त हरे क्यों हैं? आकाश में तारे क्यों हैं? तारों में रोशनी क्यों है? आदमी कहां से पैदा होता है? ये फूल इतने रंगीन क्यों हैं? यह तितली इतनी सुंदर क्यों है?

और हम सब इस भांति सिर उठा कर उत्तर देते हैं, जैसे हमें पता है। छोटे बच्चे समझ लेते होंगे कि पिता जो कहते हैं, ठीक कहते होंगे। मां जो कहती है, ठीक कहती होंगी। गुरु जो कहते हैं, ठीक कहते होंगे।

छोटे बच्चों को धोखा दिया जा रहा है, उनकी इनोसेंस का, उनकी निर्दोषता का शोषण किया जा रहा है। ईमानदार मां-बाप और ईमानदार शिक्षक कहेंगे: हमें कुछ भी पता नहीं। हम भी तितलियों के मामले में, आकाश के तारों के मामले में उतने ही बच्चे हैं जितने तुम हो, हमें कुछ भी पता नहीं। जीवन के संबंध में हम भी उतने ही अज्ञानी हैं जितने तुम हो, हमें कुछ भी पता नहीं है। तो बच्चों के भीतर आश्चर्य का और विस्मय का विकास होगा। तब वे युवा होते-होते अत्यंत आश्चर्य से भर जाएंगे। उनके हृदय में आश्चर्य लहरें लेने लगेगा, वे विस्मय से भर जाएंगे। वे जीवन के प्रति जानते हैं, इस भाव से नहीं, नहीं जानते हैं इस भाव से जीवन को देखेंगे। लेकिन हम, हम इस भूल में पड़ जाते हैं। हम परिचय को ज्ञान समझ लेते हैं। एक्वेंटेंस को हम नालेज समझ लेते हैं।

एक मां अपने बेटे को जन्म देती है। निश्चित ही अपने पेट में बड़ा करती है। लेकिन क्या वह जानती है जो पेट में बड़ा हो रहा है वह क्या है? अगर मां इस भूल में पड़ जाए, तो गलती करती है। यद्यपि उसके ही पेट में जो जन्म ले रहा है और बड़ा हो रहा है, उसके ही खून और मांस-मज्जा से जो बन रहा है। वह भी उसके लिए अज्ञात है, अननोन है। वह भी उसे पता नहीं कौन है और क्या है। वह बच्चा पैदा होगा। मां सोचती होगी, मैं जानती हूं अपने बेटे को।

झूठी है यह बात। कोई मां अपने बेटे को नहीं जानती। कोई बाप अपने बेटे को नहीं जानता। लेकिन परिचय हो जाता है, तो हम सोचते हैं, हम जानते हैं। फिर हम नाम रख लेते हैं बेटे का, नाम..राम और कृष्ण और कुछ और सोचते हैं हम पहचान गए। उसका कोई नाम नहीं है जो पैदा हुआ है। नाम झूठे हैं जो हम दे रहे हैं। और इन्हीं नामों को हम ही देंगे। और हम ही इन नामों को पुकारेंगे, और हम कहेंगे कि मैं भलीभांति जानता हूं कि यह राम है।

यह राम नाम झूठा है। वह जो पीछे है वह अनाम, नेमलेस, उसका हमें कोई पता नहीं है कि उसका क्या नाम है। जो घर में जन्म लेता है, हमसे अपरिचित है, लेकिन रोज-रोज उसे देखते हैं, रोज-रोज पहचानते हैं, तो लगता है हम जानते हैं। पति सोचता है कि वह पत्नी को जानता है, पत्नी सोचती है कि वह पति को जानती है। कोई किसी को नहीं जानता। पति और पत्नी तो बहुत दूर, हम अपने को भी नहीं जानते हैं। स्वयं का भी हमें कोई पता नहीं है। और जिन्हें स्वयं का भी पता नहीं है उन्हें और किस चीज का पता हो सकता है? जिन्हें अपना ही ज्ञान नहीं उन्हें किस चीज का ज्ञान हो सकता है?

हमारा अज्ञान बहुत गहरा है, लेकिन इस अज्ञानको हम ज्ञान के शब्द सीख कर छिपा लेते हैं और ज्ञानी बन जाते हैं। अज्ञान से भी खतरनाक वह ज्ञान है जो अज्ञान को छिपाने में सहयोगी बनता है। वे वस्त्र ज्ञान के जो अज्ञान को छिपा लेते हैं बहुत खतरनाक हैं। आदमी के जीवन में जो भी सत्य है और सुंदर है और श्रेष्ठ है, उसे ज्ञान के वस्त्रों में ही खो दिया है।

पता है आपको सौंदर्य क्या है? पता है आपको सत्य क्या है? पता है आपको शुभ क्या है? कुछ भी हमें पता नहीं है। लेकिन चूंकि किसी को भी कुछ पता नहीं है, और हम सभी यह घोषणाएं करते हैं कि हमें पता है। इसलिए मनुष्य-जाति में से कोई भी अंगुली उठा कर नहीं कहता कि झूठ बोल रहे हो आप। हम सब एक ही नाव पर सवार हैं। हम सब एक ही बीमारी से पीड़ित हैं, इसलिए हमें पता भी नहीं चलता कि कोई बड़ा झूठ जीवन में बोला जा रहा है। बहुत बड़े झूठ प्रचलित हुए हैं, लेकिन अगर झूठ सभी को पकड़ लें, तो उनका पता चलना बंद हो जाता है।

एक बार ऐसा हो गया था, एक गांव में एक जादूगर आ गया था। और उसने आकर गांव के कुएं में कोई मंत्र पढ़ा और कोई चीज डाल दी और कहा कि इस कुएं का पानी जो भी पीएगा वह पागल हो जाएगा। सांझ होते-होते गांव के सभी लोगों को उस कुएं का पानी पीना पड़ा। क्योंकि प्यास नहीं सही जा सकती, पागलपन सहा जा सकता है। मजबूरी थी, जानते हुए कि पागल हो जाएंगे, पानी पीना पड़ा। सारा गांव सांझ होते-होते पागल हो गया। सिर्फ राजा और उसकी रानी और उसका वजीर बच गए। उनके मकान में दूसरा कुआं था। वे गांव के कुएं से पानी नहीं पीते थे, उनका अपना कुआं था। वे तीनों बच गए। वे बड़े प्रसन्न थे कि हम अच्छे बच गए हैं। पूरा गांव तो पागल हो गया है। लेकिन सांझ उन्हें पता चला कि भूल हो गई हमारे बचने में। पूरे गांव के लोग जुलूस बना कर घर के सामने आ गए और नारे लगाने लगे और उन्होंने कहा कि ऐसा मालूम होता है राजा का दिमाग खराब हो गया है। राजा को बदलेंगे हम। यह राजा नहीं चल सकता अब। यह

लोकतंत्र का जमाना है। पागल राजे नहीं चल सकते। उतरो नीचे महल से। तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। हम तुम्हारा इलाज करवाएंगे।

राजा बहुत घबड़ाया। उसके सिपाही भी पागल हो गए थे। उसके नौकर-चाकर भी पागल हो गए थे। उसके सैनिक भी पागल हो गए थे। उसने अपने वजीर से कहा, क्या करें हम? बात उलटी है। पागल ये लोग हो गए हैं। लेकिन भीड़ जब पागल हो जाती है तो बताना बहुत कठिन है कि पागल हो तुम। क्या करें हम?

वजीर ने कहा: एक ही रास्ता है, पीछे के दरवाजे से हम भागें, जितनी तेजी से भाग सकते हों, और उस कुएं का पानी पी लें जिस कुएं का पानी इन लोगों ने पीया है। तो ही हम बच सकते हैं। वह राजा और वजीर भागे। उन्होंने जाकर उस कुएं का पानी पी लिया। उस रात उस गांव में बड़ा जलसा मनाया गया, और गांव के लोगों ने बड़ी खुशी मनाई और भगवान को धन्यवाद दिया कि राजा का दिमाग ठीक हो गया।

जब सारा समूह एक ही पागलपन से पीड़ित होता है तो पहचानना कठिन हो जाता है कि पागलपन क्या है। और अगर कोई आदमी पहचान ले, तो वही आदमी उलटा पागल मालूम पड़ता है, भीड़ पागल नहीं मालूम पड़ती।

जीसस क्राइस्ट पागल मालूम पड़ते हैं, इसलिए भीड़ ने उन्हें सूली पर लटका दिया। सुकरात पागल मालूम पड़ता है, इसीलिए भीड़ ने उसे जहर पिला दिया। मंसूर पागल मालूम पड़ता है, भीड़ ने उसकी चमड़ी खींच ली। गांधी पागल मालूम पड़ते हैं, भीड़ ने गोली मार दी। आज तक जितने लोगों ने भीड़ के कुएं का पानी नहीं पीया, उनके साथ यही दुर्व्यवहार हुआ है। और भीड़ निश्चिंत है। भीड़ को शक पैदा नहीं होता, क्योंकि चारों तरफ सभी लोग गवाह ही होते हैं कि ठीक हैं हम।

मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं: मनुष्य-जाति की सबसे बड़ी विक्षिप्तताओं में, सबसे बड़ी मैडनेसेस में, सबसे बड़े पागलपनों में ज्ञान का पागलपन है। और इस ज्ञान के कुएं से हम सभी ने पानी पी लिया है। चाहे उस ज्ञान के कुएं का नाम हिंदुओं का कुआं हो, चाहे उस कुएं का नाम मुसलमानों का कुआं हो, चाहे उस ज्ञान के कुएं का नाम जैनों का कुआं हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कुएं का नाम कुछ भी हो, लेकिन ज्ञान के कुओं से जिन्होंने भी पानी पी लिया है, उनके जीवन से आश्चर्य का भाव नष्ट हो जाता है। और जहां आश्चर्य गया, वहां धर्म गया, वहां दर्शन गया। और जहां विस्मय गया, जहां जीवन को विस्मय से देखने वाली आंखें चली गईं, वहां सब कुछ चला गया। वहां फिर कुछ भी शेष नहीं रह जाता। फिर परमात्मा की कोई खोज नहीं हो सकती, क्योंकि परमात्मा अगर कुछ है तो वही है जिसे हम मिस्टीरियस कहते हैं, जिसे मापने और जांचने का कोई उपाय नहीं, जिसे तौलने के लिए कोई तराजू नहीं, जिसको इशारा करने के लिए कोई शब्द नहीं, जिसको बताने के लिए कोई शास्त्र नहीं, कोई सिद्धांत नहीं। लेकिन शास्त्रों और सिद्धांतों और ज्ञान की दीवालें बीच में खड़ी हो जाती हैं और जीवन उस तरफ बह जाता है।

बहुत दिन हुए, चीन के एक गांव में बहुत बड़ा मेला लगा हुआ था। हजारों लोग वहां इकट्ठे थे। कहीं इकट्ठे होने का मौका भर मिल जाए, फिर आदमी इकट्ठे होने से चुकता नहीं है, जरूर इकट्ठे हो जाते हैं। असल में अकेले, अकेले होने से आदमी इतना घबड़ाया होता है कि जहां भी भीड़ का मौका मिलता है जरूर पहुंच जाता है। बहुत लोग इकट्ठे हो गए थे। बड़ा मेला था। एक कुआं था उस मेले के किनारे ही। उस कुएं पर कोई पाट न थी, कोई घेरा न था। एक आदमी उस कुएं में गिर गया। वह बहुत कुएं के भीतर से चिल्लाने लगा कि मुझे बचाओ! मैं मरा जा रहा हूं! लेकिन उस मेले में इतना शोरगुल था कि कौन सुनता। एक बौद्ध भिक्षु कुएं के पास से निकला। उसे सुनाई पड़ा कि कोई कुएं के भीतर चिल्लाता है कि मैं मरा जा रहा हूं, मुझे बचाओ। उस भिक्षु ने झांक कर नीचे देखा और कहा, मेरे मित्र, जीवन में आनंद भी क्या है, जो बचने की तुम कामना करते हो? जीवन है दुख, जीवन है पाप। बचने से प्रयोजन? और यह जो तृष्णा है बचने की, यह जो लस्ट फॉर लाइफ है, यही अगले जन्म का कर्म बंधन हो जाएगा। शांत रहो! उस आदमी ने कहा कि मुझे उपदेश नहीं चाहिए, कृपा करके मुझे बाहर निकालिए। लेकिन भिक्षु ने कहा: मैं किसी के कर्मों के बीच में बाधा नहीं बनता। तुमने कुछ किया होगा। किसी को कुएं में गिराया होगा, सो तुम गिरे हो। किसी पिछले जन्म का कर्मफल भोगते हो मित्र। सुनी नहीं तुमने यह

सिद्धांत की बात? और अब मरते क्षणों में मोह छोड़ो जीवन का। शांति से मरो, तो निर्वाण हो जाएगा। नहीं तो फिर लौट-लौट कर आना पड़ेगा। भिक्षु आगे बढ़ गया।

उसके पीछे ही एक कनफ्यूशियन मांक, कनफ्यूशियस का एक संन्यासी आया। उसने भी कुएं में चिल्लाते हुए आदमी की आवाज सुनी। वह किनारे के पास झांका। उसने कहा कि समझ गया, कनफ्यूशियस ने लिखा है अपनी किताब में कि वही राज्य श्रेष्ठ है जो अपने कुओं पर पाट बांध देता है। जो कुओं पर पाट नहीं बांधता है वह राजा अन्यायी है। तुम घबड़ाओ मत। हम आंदोलन उठाएंगे, हम जाकर जनता को समझाएंगे। अभी हम मेले में जाते हैं। और अभी हम राजा के महल पर पहुंचते हैं। हर कुएं पर पाट होनी ही चाहिए, ताकि कोई गिर न सके।

उस आदमी ने कहा: वह पीछे करना। मैं मरा जा रहा हूं, मुझे बाहर निकालो। लेकिन उसने कहा: सवाल तुम्हारा नहीं है, सवाल जनता-जनार्दन का है। यह तुम्हारा सवाल नहीं है। एक आदमी बचता है कि मरता है, यह सवाल नहीं है। कुएं पर पाट होना चाहिए। और तुम घबड़ाओ मत, तुम निश्चिंत रहो, तुम्हारे बच्चे ऐसी दुनिया में रहेंगे जहां कुओं पर पाट होंगे।

उसने कहा: बच्चों का सवाल नहीं है। मैं मरा जाता हूं।

उस आदमी ने कहा कि बच्चों के लिए बड़ी कुर्बानी मां-बाप को करनी पड़ती है। तुम मरो, लेकिन बच्चे ऐसी दुनिया में रहेंगे जहां कोई कुएं में नहीं गिर सकेगा। तुम बेफिकर रहो।

वह कनफ्यूशियस मांक आगे बढ़ गया। उसने जाकर भीड़ में शोरगुल मचा दिया। वह एक मंच पर सवार हो गया और उसने समझाना शुरू कर दिया कि ऐसे कुएं नहीं होने चाहिए जिन पर पाट न हों।

उन दोनों के चले जाने के बाद एक ईसाई साधु, एक ईसाई मिशनरी वहां से निकला। कुएं में किसी को चिल्लाता देख कर वह तत्क्षण कूदा और उसने निकाला उस आदमी को बाहर। और उस आदमी ने कहा कि बहुत धन्यवाद! तुम्हीं सच्चे धार्मिक आदमी मालूम पड़ते हो। एक बौद्ध भिक्षु निकला, उसने कहा कि कर्मों का फल भोग रहे हो अपना। कनफ्यूशियस का भिक्षु निकला उसने कहा कि हम राज्य को परिवर्तन करने के लिए आंदोलन चलाएंगे। तुम्हीं सच्चे धार्मिक हो।

उस ईसाई मिशनरी ने कहा: नहीं मित्र, माफ करो। मैंने तो तुम्हें इसलिए निकाला है कुएं से, क्योंकि जीसस क्राइस्ट ने कहा है: जो सेवा करते हैं स्वर्ग उनको उपलब्ध होता है। तो हम तो यही चाहते हैं कि रोज-रोज लोग कुएं में गिरते रहें और हम उन्हें निकालते रहें। जितने ज्यादा लोग कुएं में गिरेंगे उतनी ही हमारी सेवा, उतना ही स्वर्ग का हमारा अधिकार, वह किंग्डम ऑफ गॉड जो है, उसके हम मालिक हो जाएंगे। तुम रोज-रोज गिरो। अपने घर भी लोगों को समझाओ, क्योंकि सेवा बहुत जरूरी है। बिना सर्विस के कोई परमात्मा तक कभी पहुंचता नहीं है।

आदमी कुएं में मर रहा है, लेकिन उसे देखने वाला कोई भी नहीं है, क्योंकि शास्त्र बीच में आ जाते हैं। जीवन चारों तरफ है, लेकिन उसे देखने वाला कोई भी नहीं है, क्योंकि शब्द बीच में आ जाते हैं। परमात्मा हर क्षण मौजूद है, लेकिन उससे पहचान नहीं होगी, क्योंकि ज्ञान बीच में आ जाता है।

ज्ञान से बड़ी चीज जीवन और मनुष्य के बीच दूसरा कोई अवरोध, दूसरा कोई हिंडरेंस, दूसरा कोई पहाड़ नहीं है। लेकिन ज्ञान को हम समझते हैं कि बड़ी ऊंची बात है। हम समझते हैं कि ज्ञान अर्जित कर लिया तो बहुत कुछ कमाई कर ली।

ज्ञान नहीं, जो इस सरलता से कहते हैं कि हम नहीं जानते हैं, केवल वे ही विनम्र लोग, केवल वे ही विनम्र चित्त, वे ही हंबल माइंड्स, जो जानते हैं हमें कुछ भी पता नहीं, केवल वे ही उस परम सत्य के निकट पहुंच पाते हैं और उसे जान पाते हैं।

ज्ञान के भ्रम वाले लोग कभी ज्ञान को उपलब्ध नहीं होते। अज्ञान में ही जीते और नष्ट हो जाते हैं। यह बात बड़ी उलटी मालूम होगी। मैं आपसे यह कह रहा हूं: आपको अगर अपने अज्ञान का परिपूर्ण बोध हो जाए, तो आपके जीवन में

ज्ञान का जन्म हो सकता है। लेकिन वह ज्ञान बहुत दूसरा है उस ज्ञान से जो शास्त्रों से मिलता है..गीता, कुरान और बाइबिल से, उपनिषदों और वेदों से, महावीर और बुद्ध से जो ज्ञान मिलता है वह नहीं है। शब्दों से जो ज्ञान मिलता है वह नहीं। शब्द हैं डेड, मुर्दा। उनका कोई मूल्य नहीं, उनमें कोई जीवन नहीं।

खुद के प्राणों के साक्षात से जो ज्ञान मिलता है, वह बात और है। और उसे जानने के लिए अज्ञान, अज्ञान का स्पष्ट बोध होना चाहिए। जिसे अज्ञान का बोध हो जाता है, जो जानता है कि मैं नहीं जानता, उसके लिए रहस्य के द्वार खुल जाते हैं। लेकिन हमने बहुत संग्रह कर रखा है। हमने कंठस्थ कर रखे हैं ग्रंथ। हमने शब्द सीख रखे हैं। हम तोतों की भांति हैं, जिन्हें सब कुछ सिखा दिया गया है और याद करा दिया गया है। और हम इन्हीं शब्दों को दोहराते रहते हैं।

कोई पूछे आपसे, ईश्वर है? कौन सा उत्तर आता है आपके भीतर? मैं आपसे पूछता हूं, ईश्वर है? कोई उत्तर आता है आपके भीतर? किसी के भीतर आता होगा, है। अगर उसकी किताबों में ऐसा लिखा है, अगर उसके गुरुओं ने ऐसा बताया है, किसी के भीतर आता होगा, नहीं है। अगर उसकी किताबों में ऐसा लिखा है और उसके गुरुओं ने ऐसा बताया है।

हिंदुस्तान में पूछो, ईश्वर है? तो उत्तर आता है, है। और रूस में पूछो, तो उत्तर आता है, नहीं है। हम सोचते हैं हिंदुस्तान बड़ा आस्तिक है और रूस बड़ा नास्तिक है। नहीं साहब। दोनों रटे हुए तोते बोल रहे हैं। हिंदुस्तान के तोतों को बताया जा रहा है ईश्वर है, तो वे कहते हैं, ईश्वर है। रूस के तोतों को बताया जा रहा है ईश्वर नहीं है, तो वे कहते हैं, ईश्वर नहीं है। सीखी हुई बातें जो दोहरा रहा है वह आदमी के पद से नीचे गिर रहा है। सीखी हुई बातें जो दोहरा रहा है वह अपने को तोता बना रहा है, अपने को मशीन बना रहा है। लेकिन अगर मैं पूछूं कि ईश्वर है और आपके भीतर कोई उत्तर न उठे, न हां, न न; मैं पूछूं ईश्वर है और आपके भीतर सन्नाटा छा जाए। और सत्य यही होगा कि सन्नाटा छा जाए। क्योंकि आप नहीं जानते हैं कि है या नहीं। मैं पूछूं कि ईश्वर है और आपके भीतर साइलेंस हो जाए, आपके भीतर कोई उत्तर न आए, आप मौन रह जाएं, आपके भीतर कोई शब्द घनीभूत न हो, आपके भीतर कोई रिस्पांस न हो, आपके भीतर नो-रिस्पांस की स्थिति हो जाए।

मैं पूछूं ईश्वर है और आपके भीतर सब सन्नाटा हो जाए, इस स्थिति को मैं कह रहा हूं अज्ञान का बोध कि मुझे पता नहीं है। और इसी सन्नाटे में उसकी पगध्वनियां सुनाई पड़नी शुरु होती हैं जो परमात्मा है। इसी मौन में, इसी साइलेंस में जीवन का संस्पर्श उपलब्ध होता है।

और तब फिर खोजने हिमालय नहीं जाना पड़ता है। और तब फिर खोजने गंगा के तट की यात्राएं नहीं करनी होती हैं। और तब फिर खोजने काशी और मक्का और मदीना नहीं जाना पड़ता है। फिर जेरुसलम की यात्रा नहीं करनी होती है। फिर मंदिरों और मस्जिदों में सिर नहीं टेकने पड़ते हैं।

इतने शांत मन से, ऐसे मन से, ऐसे माइंड से, जिसके पास उत्तर नहीं हैं..क्योंकि उत्तर सब सीखे हुए हैं..और मैं तो कुछ भी नहीं जानता हूं, अगर आपका मन उस अवस्था में आ जाए जहां से कोई उत्तर नहीं आता, सिर्फ चुप्पी और मौन रह जाता है, तो आप एक अदभुत द्वार को खोलने में समर्थ हो जाएंगे, जिसकी आपको कल्पना भी नहीं हो सकती। उस विनम्र मौन में, उस हंबल साइलेंस में कुछ घटित होता है, कोई क्रांति हो जाती है और एक नये मनुष्य का जन्म हो जाता है।

अब तक जिन लोगों ने भी जाना है, उन्होंने ज्ञान से नहीं जाना है, मौन से जाना है। ज्ञान बहुत बकवासी है, ज्ञान बहुत मुखर है। और परमात्मा के निकट तो वे पहुंचते हैं, जो सब भांति मौन और शांत हैं..जिनके भीतर कोई उत्तर नहीं।

इसलिए मैं आज की रात आपसे सब उत्तर छीन लेना चाहता हूं। सब उत्तर आप यहीं छोड़ जाएं। आपकी ज्ञान की झोली में जितने कंकड़-पत्थर हों, वे यहीं छोड़ जाएं। आमतौर से साधु समझाते हैं कि हमने जो समझाया ह उसे अपनी गांठ में बांध कर घर ले जाना, यहां मत छोड़ जाना। मैं उलटी बात समझाता हूं। मैंने जो समझाया है वह, और मुझसे पहले भी जिन्होंने जो समझाया हो, कृपा करके सब आप यहीं छोड़ जाएं। और आप खाली, बिल्कुल खाली मन को लेकर, अगर घर जाकर आज रात ही सो सकें, तो आज निद्रा में ही कोई द्वार खुल सकते हैं। अगर आज ही सारे ज्ञान को आप छोड़ कर बिस्तर पर चुपचाप लेट सकें, तो हो सकता है कोई अनजान अतिथि आपके द्वार खटखटाने लगे और कहे कि खोलो, मैं आ

गया। क्योंकि जो आदमी अपने ही ज्ञान से भरा है, परमात्मा के ज्ञान के लायक अवकाश उसके भीतर नहीं होता, स्पेस नहीं होती। जो अपने ज्ञान को छोड़ देता है उसके भीतर परम के ज्ञान का अवतरण शुरु हो जाता है।

आकाश से वर्षा होती है, वर्षा के दिनों में पहाड़ों पर भी पानी गिरता है, झीलों में भी पानी गिरता है, गड्ढों में भी पानी गिरता है, लेकिन पहाड़ पानी से खाली रह जाते हैं, क्योंकि वे खुद ही पहले से भरे हुए हैं। लेकिन गड्ढे पानी से भर जाते हैं, क्योंकि वे पहले से खाली हैं। बादल कोई भेद नहीं करते कि तुम पहाड़ हो कि तुम गड्ढे हो। दोनों पर पानी पानी गिरा देते हैं। लेकिन पानी गिरा हुआ व्यर्थ हो जाता है। पहाड़ खाली के खाली रह जाते हैं, क्योंकि अपने में भरे हैं वे पहले से ही। उनके पास कोई रिक्त-स्थान नहीं है। कोई जगह नहीं है जहां पानी भर सके। गड्ढों में पानी भर जाता है। परमात्मा की वर्षा भी प्रतिक्षण हो रही है, प्रतिपल, प्रति श्वास, लेकिन जो अपने भीतर भरे बैठे हैं वे खाली रह जाएंगे और जो अपने भीतर खाली हैं वे उसके ज्ञान और प्रकाश से भर जाते हैं।

जीवन क्रांति का दूसरा सूत्र है: स्वयं को ज्ञान से खाली कर लें।

बड़ी मुश्किल है यह बात। आदमी और सब कुछ छोड़ सकता है, ज्ञान छोड़ने में प्राण कंपते हैं। धन छोड़ सकता है। हजारों लोग धन छोड़ कर त्यागी हो जाते हैं। पत्नी बच्चों को छोड़ सकते हैं। सैकड़ों लोग संन्यासी हो जाते हैं। लेकिन ज्ञान, ज्ञान नहीं छोड़ पाता आदमी। एक आदमी संन्यासी हो जाता है, फिर भी मुसलमान बना रहता है, फिर भी हिंदू बना रहता है।

मैं तो हैरान हो गया कि कैसे पागलों की दुनिया है! अगर गृहस्थ हिंदू हो, मुसलमान हो, ईसाई हो, जैन हो, तो समझ में आता है। लेकिन साधु भी जैन, हिंदू, मुसलमान कैसे हो सकता है? जिसने समाज ही छोड़ दिया, उसने समाज का ज्ञान नहीं छोड़ा अब तक? समाज ने जो ज्ञान दिया था, उसको पकड़े हुए बैठा है। एक साधु भी कहता है..मैं जैन हूं, हिंदू हूं, मुसलमान हूं। साधु कहता है! ये बीमारियां साधु के पास नहीं होनी चाहिए।

लेकिन नहीं, धन छोड़ सकता है, घर छोड़ सकता है, लेकिन ज्ञान नहीं छोड़ सकता। ज्ञान मनुष्य के अहंकार की गहरी से गहरी पकड़ है। न तो धन है मनुष्य का अहंकार, न पद है अहंकार, न यश है अहंकार। अहंकार की सूक्ष्मतम, गहरी से गहरी पकड़ है ज्ञान। इसलिए जिनको यह ख्याल हो जाता है कि हम जानते हैं, वे भटक जाते हैं। उनके जानने के रास्ते बंद हो जाते हैं।

सुकरात बूढ़ा हो गया था। बुढ़ापे में सुकरात ने बड़ी अजीब बात कहना शुरु कर दी थी। सुकरात बुढ़ापे में कहने लगा था: मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। एक आदमी ने कहा कि हम तो यह सुन कर आए थे कि तुम परम ज्ञानी हो।

सुकरात ने कहा: किसी ने गलती से कह दिया होगा। या जब मैं जवान था तब मुझे ऐसा भ्रम था, ऐसा इलुजन मुझे भी था कि मैं जानता हूं। लेकिन जैसे-जैसे मेरा अनुभव बढ़ा, जैसे-जैसे मैंने जीवन का संपर्क पाया, जैसे-जैसे जीवन में मेरी गति हुई, जैसे-जैसे मैं जीवन की धारा में डूबा, वैसे-वैसे मुझे पता चला: मैं क्या जानता हूं? मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। और आज मैं कह सकता हूं कि मुझे कुछ भी पता नहीं। मुझसे बड़ा अज्ञानी कोई भी नहीं। सुकरात ने जान लिया होगा। सुकरात जान ही लेगा। सुकरात के जानने के बीच की सारी बाधाएं गिर गईं। एक ही बाधा थी..इस बात का ख्याल कि मैं जानता हूं। मैं जानता हूं..यह इतना कठोर पाषाण खड़ा कर देता है मन के भीतर, फिर और जानने का सवाल ही नहीं रह जाता है।

एक फकीर मर रहा था, मरणशय्या पर पड़ा था। कुछ मित्र इकट्ठे थे। जिंदा फकीरों के पास कभी कोई इकट्ठा नहीं होता। या तो मरते हुए फकीरों के पास लोग इकट्ठे होते हैं, या मर चुके जो उनके पास इकट्ठे होते हैं। आदमी मुर्दों का बड़ा पुराना पूजक है। मरते हुए उस फकीर के पास लोग इकट्ठे थे और पूछने लगे कि तुमने ज्ञान कहां पाया? तुम्हें ज्ञान कैसे मिला? तुमने कैसे जाना जीवन को? तुम प्रभु को कैसे उपलब्ध हुए? उसने कहा: यह बड़ा कठिन मामला है। मैं एक गांव से गुजरता था। मैंने बड़े-बड़े गुरुओं की शरण ली, लेकिन कोई गुरु गुरु साबित न हुआ। असल में जो भी कहते हैं कि हम गुरु हैं, वे दुकानदार होते हैं, वे कभी गुरु हो भी नहीं सकते। तो बहुत-बहुत गुरु खोजे, कहीं कोई ज्ञान नहीं मिला। बहुत शास्त्र

देखे, बहुत से सिद्धांत याद हो गए, लेकिन जीवन में कोई फर्क न हुआ, कोई रोशनी न उतरी। लेकिन एक भ्रम मुझे पैदा हो गया कि मैं भी जानता हूं।

फिर मैं एक गांव से गुजरता था। और जिस आदमी को यह भ्रम पैदा हो जाता है कि मैं जानता हूं, उस भ्रम के बाद दूसरी चीज शुरु होती है। कोई फंस भर जाए उसके चंगुल में, वह बिना उपदेश दिए नहीं रह सकता। कोई उसकी मुट्ठी भर में आ जाए, फिर वह उपदेश जरूर देगा। तो उस फकीर ने कहा: मुझे ख्याल हो गया कि मैं जानता हूं। तब एक ही काम था, जो मैंने जान लिया, तो जो मुझे मिल जाए उसे समझा दूं। एक गांव से निकल रहा था। गांव के लोग बड़े नास्तिक मालूम होते थे, कोई सभा में आया ही नहीं। बड़े अश्रद्धालु मालूम होते थे। और दिन भर मैं नहीं बोल पाया था, तो मेरी तो बड़ी मुसीबत हो गई थी। तो मैं इस तलाश में था कि कोई एकाध श्रद्धालु मिल जाए, तो उसको उपदेश दे दूं। कोई तो नहीं मिला, एक छोटा सा बच्चा मिल गया। वह बच्चा एक हाथ में दीया लिए मंदिर में दीया रखने जाता था। मैंने उस बच्चे से कहा: बेटे ठहर, पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दे दे। इस दीये में रोशनी कहां से आई है, बता सकता है? इस दीये में ज्योति कहां से आई?

उस फकीर ने कहा: मैंने सोचा था कि बच्चा उत्तर नहीं दे सकेगा। फिर, फिर मुझे उपदेश देने का मौका मिल जाएगा। लेकिन बच्चे ने मुझे बड़ी मुश्किल में डाल दिया। वह बच्चा हंसने लगा और उसने फूंक मार कर दीया बुझा दिया और कहा कि स्वामी जी, ज्योति कहां चली गई, आप बता सकते हैं? अगर आप बता देंगे कि ज्योति कहां चली गई, तो मैं भी बता दूंगा कि ज्योति कहां से आई है। मेरे सारे पढ़े-लिखे शास्त्र व्यर्थ हो गए। मेरे गुरुओं से पाई सारी शिक्षा दो कौड़ी की हो गई। मैं निपट अज्ञानी की तरह खड़ा हो गया। और मुझे ख्याल आया, मैं यह भी नहीं बता सकता कि ज्योति कहां चली गई? मैं तो यह भी बताता हूं कि सृष्टि कहां से आई और सृष्टि कहां विलीन हो जाएगी। मैं तो यह भी बताता हूं कि परमात्मा पूरब में बैठा है कि पश्चिम में। मैं तो यह भी बताता हूं कि परमात्मा कौन सी प्रार्थनाएं सुन कर खुश होता है और कौन सी बातें सुन कर नाराज। और मुझे यह भी पता नहीं कि ज्योति कहां चली गई? मैंने उस बच्चे के चरणों पर सिर रख दिया और कहा: तूने मेरा ज्ञान छीन लिया। मैं कृत-कृत्य हो गया। तूने मेरा ज्ञान छीन लिया। तू मेरा पहला गुरु है।

क्या आप अपने ज्ञान को छोड़ देने की हिम्मत और साहस कर सकते हैं? अगर कर सकते हैं, तो आपके जीवन में क्रांति हो सकती है। क्योंकि ज्ञान का भाव छूटते ही जीवन भर जाएगा एक रहस्य से। सब अपरिचित हो जाएगा। और सब अज्ञात। जिस वृक्ष के पास से आप रोज-रोज निकले हैं, आज जब आप फिर उसके पास से निकलेंगे, तो पाएंगे कि यह वही वृक्ष नहीं है जो कल देखा था, ये वे ही पत्ते नहीं हैं।

जब आप घर लौटेंगे और उन्हीं बच्चों को देखेंगे जिनको कल देखा था, तो आप पाएंगे कि ये वे ही बच्चे नहीं हैं। गंगा में बहुत पानी बह गया। जीवन की गंगा भी बहुत बदल जाती है। सब नया हो जाएगा, सब अदभुत हो जाएगा, सब आश्चर्य से भर जाएगा।

और जिस दिन पूरा जीवन आश्चर्य से भर जाता है, उसी दिन, उसी दिन उसकी गंध मिलना शुरु होनी है, उसके संगीत की ध्वनि आती है, जिसे हम प्रभु कहते हैं। परमात्मा के मंदिर के निकट केवल वे ही पहुंचते हैं, जिनकी आत्माएं आश्चर्य से भर उठती हैं। यह दूसरा सूत्र है जीवन क्रांति का। कल मैंने कहा, अहोभाव, धन्यता। और आज कहता हूं: आश्चर्य, विस्मय, रहस्य।

कल तीसरे सूत्र की आपसे बात करूंगा। आप भी हाथ में दीये लेकर आए हैं। मैं फूंक मार कर बुझा देता हूं उनकी ज्योति को, और पूछता हूं, ज्योति कहां चली गई है? और अगर कोई उत्तर न मिले, कोई उत्तर पता न चले, और उसी अनुत्तर, उसी निरुत्तर दिशा में आप घर विदा हो जाएं, तो दूसरे सूत्र की झलक मिलनी शुरु हो जाएगी।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, इसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

स्वतंत्रता

सत्य की खोज-1

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक सम्राट ने जंगलों में गीत गाते एक पक्षी को बंद करवा लिया।

गीत गाना भी अपराध है, अगर आस-पास के लोग गलत हों! उस पक्षी को पता भी नहीं होगा कि गीत गाना भी परतंत्रता बन सकता है।

आकाश में उड़ते और वृक्षों पर बसेरा करने वाले उस पक्षी को यद्यपि सम्राट ने सोने के पिंजड़े में रखा था! उस पिंजड़े में हीरे-जवाहरात लगाए थे! करोड़ों रुपये का पिंजड़ा था वह!

लेकिन जिसने खुले आकाश की स्वतंत्रता जानी हो, उसके लिए सोने का क्या अर्थ है? हीरे-मोतियों का क्या अर्थ है? जिसने अपने पंखों से उड़ना जाना हो और जिसने सीमा-रहित आकाश में गीत गाए हों, उसके लिए पिंजड़ा चाहे सोने का हो, चाहे लोहे का, बराबर है।

वह पक्षी बहुत सिर पीट-पीट कर रोने लगा।

लेकिन सम्राट और उसके महल के लोगों ने समझा कि वह अभी गीत गा रहा है!

कुछ लोग सिर पीट कर रोते हैं, लेकिन जो नहीं जानते, वे यही समझते हैं कि गीत गाया जा रहा है!

वह पक्षी बहुत हैरान था, बहुत परेशान था। फिर धीरे-धीरे सबसे बड़ी परेशानी तो उसे यह मालूम होने लगी, उसे डर हुआ कहीं ऐसा तो नहीं हो जाएगा कि पिंजड़े में बंद रहते-रहते मेरे पंख उड़ना भूल जाएं?

कारागृह और कोई बड़ा नुकसान नहीं कर सकता है, एक ही नुकसान कर सकता है कि पंख उड़ना भूल जाएं।

उस पक्षी को एक ही चिंता थी कि कहीं ऐसा न हो कि खुले आकाश के आनंद की स्मृति ही मुझे भूल जाए। फिर एक दिन पिंजड़े से मुक्त भी हो गया तो भी क्या होगा! क्योंकि स्वतंत्रता तो केवल वे ही जानते हैं, जिनके प्राणों में स्वतंत्रता का अनुभव और आनंद है। अकेले स्वतंत्र होने से ही कोई स्वतंत्रता को नहीं जान लेता है। अकेले खुले आकाश में छूट जाने से ही कोई स्वतंत्र नहीं हो जाता है। उस पक्षी को डर था, कहीं परतंत्र रहते-रहते परतंत्रता का मैं आदी न हो जाऊं! वह बहुत चिंता में था कि कैसे मुक्त हो सकूं।

एक दिन सुबह एक फकीर को गीत गाते उस पक्षी ने सुना। फकीर गीत गाता था। जिन्हें मुक्त होना है, उन्हें एक ही रास्ता है-और वह रास्ता है सत्य। जिन्हें स्वतंत्र होना है, उनके लिए एक ही द्वार है--वह द्वार है सत्य। और सत्य क्या है?

उस फकीर ने अपने गीत में कहा, कि सत्य वह है, जो दिखाई पड़ता है। जैसा दिखाई पड़ता है, उसे वैसा ही देखना, वैसा ही जानना, वैसा ही जीने की कोशिश करना, वैसा ही अभिव्यक्त करना सत्य है। और जो सत्य को उपलब्ध हो जाते हैं, वे मुक्त हो जाते हैं।

उसके गीत का यह अर्थ। सड़कों पर गाते वह गुजरता था। मनुष्यों ने तो नहीं सुना, लेकिन उस पक्षी ने सुन लिया। क्योंकि पक्षियों को अभी खुले आकाश का अनुभव है। मनुष्यों को तो खुले आकाश का सारा अनुभव भूल गया! क्योंकि पक्षियों को भी अपने पंख उड़ने के लिए हैं--ये पता है। मनुष्य को तो पता ही नहीं कि उसके पास भी पंख हैं और वे भी उड़ सकता है--किसी आकाश में। सुना तो मनुष्यों ने भी, लेकिन वे नहीं सुन पाए। सिर्फ सुनने से कोई नहीं सुन पाया। अकेले सुनने से ही अगर आदमी सुन लेता होता तो अब तक सारे मनुष्य कभी के मुक्त हो गये होते।

महावीर भी चिल्लाते हैं, बुद्ध भी चिल्लाते हैं, क्राइस्ट भी चिल्लाते हैं, कृष्ण भी चिल्लाते हैं, सुनता कौन है!

वह फकीर गांव में चिल्लाता रहा, सुना एक पक्षी ने, आदमियों ने नहीं!

और उस पक्षी ने उसी दिन सत्य का एक छोटा सा प्रयोग किया। सम्राट महल के भीतर था, कोई मिलने आया था। पहरेदारों से सम्राट ने कहलवाया, कि कह दो कि सम्राट घर पर नहीं। उस पक्षी ने चिल्लाकर कहा कि नहीं, सम्राट घर पर है। और यह सम्राट ने ही कहलवाया है पहरेदारों से कि कह दो मैं घर पर नहीं हूं। सम्राट तो बहुत नाराज हुआ।

सत्य से सभी लोग नाराज होते हैं। क्योंकि सभी लोग असत्य में जीते हैं। और वे जो सम्राट हैं-चाहे सत्ता के, चाहे धन के, चाहे धर्मों के, जिनके हाथों में किसी तरह की सत्ता है, वे तो सत्य से बहुत नाराज होते हैं। क्योंकि सत्ता हमेशा असत्य के सिंहासन पर विराजमान होती है। इसलिए सत्ताधिकारी सत्य को सूली पर चढ़ा देते हैं। क्योंकि सत्य अगर जीवित रहे तो सत्ताधिकारियों की सूली बन सकता है।

सम्राट ने कहा कि इस पक्षी को तत्क्षण महल के बाहर कर दो।

महलों में सत्य का कहां निवास! वृक्षों पर बसेरा हो सकता है, लेकिन महलों में बसेरा सत्य के लिए बहुत कठिन है। वह पक्षी निकालकर बाहर कर दिया। लेकिन उस पक्षी को तो मन की मुराद मिल गई। वह आकाश में नाचने लगा। उसने कहा, ठीक कहा था उस फकीर ने कि अगर मुक्त होना है तो सत्य एक मात्र द्वार है।

वह पक्षी तो नाचता था। लेकिन एक तोता एक वृक्ष पर बैठ कर रोने लगा और कहा, पागल पक्षी, तू नाचता है सोने के पिंजड़े छोड़ कर! सौभाग्य से ये पिंजड़े मिलते हैं। ये सभी को नहीं मिलते। पिछले जन्मों के पुण्यों के कारण मिलते हैं! हम तो तरसते थे उस पिंजड़े के लिए, लेकिन तू नासमझ है; पिंजड़ों में रहने की भी कला होती है!

पिंजड़े में रहने की पहली कला यह है कि मालिक जो कहे, वही कहना। मत सोचना कि वह सच है या झूठ। जिसने सोचा, वह फिर पिंजड़ों में नहीं रह सकता। क्योंकि विचार विद्रोह है और जिसके जीवन में विचार का जन्म हो जाता है, वह परतंत्र नहीं रह सकता।

तूने विचार क्यों किया पागल पक्षी? विचार करना बहुत खतरनाक है। समझदार लोग कभी विचार नहीं करते! समझदार लोग अपने कारागृहों में रहते हैं और अपने कारागृह को ही भवन समझते हैं, मंदिर समझते हैं! अगर ज्यादा ही तकलीफ थी तो भीतर से अपने पिंजड़े के सींकचों को सजा लेना था। सजाया हुआ पिंजड़ा घर जैसा मालूम पड़ने लगता! ध्यान रहे, अनेक लोग पिंजड़ों को सजा कर घर समझते रहते हैं। जैसे मैंने सजा लिया। लेकिन सजाने की चीज है, मगर सच नहीं कहता।

उस पक्षी ने तो सुना ही नहीं, वह तो खुशी से नाच रहा था, उसके पंख हवाओं में डोल रहे थे! खुले आकाश में आ गए!

लेकिन उस तोते ने कहा कि अगर पिंजड़े में रहने का मजा लेना है तो तोतों से कला सीखो। हम वही कहते हैं, जो मालिक कहते हैं। हम कभी नहीं कहते, जो सच है। हम इसकी चिंता ही नहीं करते हैं कि सत्य क्या है। हम तो कहते हैं, जो मालिक कहता है--यही हम को सच है। मालिक क्या करता है, यह नहीं कहना है। अपनी आंख से देखना नहीं, अपने विचार से सोचना नहीं। मालिक की आंख से देखना और मालिक के विचार से सोचना। तोता यह सब चिल्लाता रहा! और खुले पिंजड़े में जहां से पक्षी छूट गया था, तोता जाकर भीतर बैठ गया! पिंजड़े को द्वारपाल ने बंद कर दिया।

वह तोता अब भी उस महल के पिंजड़े में है। अब वह वही करता है, जो मालिक कहते हैं। वह सदा वहीं बंद रहेगा, क्योंकि मुक्त होने का एक ही रास्ता है--सत्य। और तोते और सब-कुछ बोलते हैं, लेकिन सत्य कभी नहीं बोलते।

और तोते तो ठीक ही हैं, यहां आदमियों में भी तोतों की इतनी बड़ी तादाद है, जिसका कोई हिसाब नहीं! ये तोते भी वही बोलते हैं, जो मालिक कहते हैं। हजारों-हजारों साल से, ये वही बोलते चले जाते हैं, जो मालिक कहते हैं!

शास्त्रों के नाम पर तोते बैठ गए हैं, संप्रदायों के नाम पर तोते बैठ गए हैं, मंदिरों के नाम पर तोते बैठ गए हैं! सारी दुनिया, सारी आदमियत तोतों की आवाज से परेशान है। उन्हीं की आवाज सुन-सुन कर हम सब भी धीरे-धीरे तोते हो जाते हैं! और हमें पता भी नहीं रहता कि खुला आकाश भी है, हमारे पास पंख भी हैं, आत्मा भी है, मुक्ति भी है!

अगर परतंत्रता में शांति से जीना हो तो कभी सत्य का नाम भी मत लेना। अगर परतंत्रता को ही जीवन समझना हो तो सत्य की तरफ कभी आंख मत उठाना। और अगर कोई आदमी सत्य की बातें करे तो उसे दुश्मन समझना, क्योंकि सत्य खतरनाक है, क्योंकि सत्य स्वतंत्रता की तरफ ले जाता है।

स्वतंत्रता में बड़ी असुरक्षा है। परतंत्रता में बड़ी सुरक्षा है।

कहां, पिंजड़े की कितनी सुरक्षा है--न आंधी-पानी का कोई भय है, न आकाश में उठते हुए तूफानों का कोई डर है, न बरसते हुए बादल, न कड़कती हुई बिजलियां। नहीं, कोई भय नहीं है।

पिंजड़े के भीतर आदमी बिल्कुल सुरक्षित है। खुले आकाश में बड़े भय हैं।

छोटा सा पक्षी और इतना बड़ा आकाश! तूफान भी उठते हैं, वहां आंधियां भी आती हैं, कोई बचाने वाला भी नहीं, कोई सुरक्षा भी नहीं।

परतंत्रता बड़ी सुरक्षित है, परतंत्रता बड़ी सिक्योर्ड है, स्वतंत्रता बहुत असुरक्षित, स्वतंत्रता बड़ी इनसिक्योर्ड है। इसीलिए तो अधिक लोग परतंत्र होने को राजी हो गए हैं!

सुरक्षा चाहते हों तो अपने मन में पूछ लेना कि परतंत्रता चाहते हो? अगर सुरक्षा चाहते हों तो सत्य की बात भी मत करना। सुरक्षा चाहते हों तो परतंत्रता ही ठीक है। राजनीतिक की परतंत्रता हो या धर्मों की; अर्थ की परतंत्रता हो कि शब्द की; जिसको सुरक्षा चाहिए, उसे परतंत्रता ही ठीक है।

और हम तो यहां इन तीन दिनों में सत्य की खोज का विचार करने बैठे हैं। यह खोज उनके लिए नहीं है, जो सुरक्षित जीवन को सब-कुछ मान लेते हैं। यह खोज उनके लिए है, जिनसे प्राणों में असुरक्षित होने का भय नहीं। यह खोज उनके लिए है, जो अपने उड़ने के पंखों को नहीं भूल गए हैं और जो आकाश को नहीं भूल गए हैं और जिनके प्राणों में कहीं कोई स्मृति चोट मारती रहती है कि तोड़ दो सब बंधन, तोड़ दो सब दीवारें, उड़ जाओ वहां, जहां कोई दीवार नहीं, जहां कोई बंधन नहीं।

लेकिन कितने थोड़े लोग हैं ऐसे? लाख-लाख आंखों में झांको--कभी किसी एक आंख में स्वतंत्रता की प्यास दिखाई पड़ती है। लाख-लाख आदमियों के प्राणों को खटखटाओ, किसी एकाध प्राण से सत्य की कोई झंकार सुनाई पड़ती है। सारी मनुष्यता को क्या हो गया है?

इस सारी मनुष्यता ने सुरक्षित होने को ही सब कुछ मान लिया है! सुरक्षा ही हमारा धर्म है--बस किसी तरह सुरक्षित रह लें, और जी लें और समाप्त हो जाएं!

मैंने सुना है, एक सम्राट ने एक महल बनवाया था। और महल उसने इतना सुरक्षित बनवाया था कि उस महल में किसी दुश्मन के आने की कोई संभावना नहीं थी।

हम सब भी इसी तरह के महल जीवन में बनाते हैं, जिसमें कोई दुश्मन न आ सके। जिसमें हम बिल्कुल सुरक्षित रह सकें। आखिर आदमी जीवन भर करता क्या है? धन किसके लिए कमाता है? ताकि सुरक्षित हो जाए। पद किसलिए कमाता है? ताकि सुरक्षित हो जाए। यश किसलिए कमाता है? ताकि सुरक्षित हो जाए। ताकि जीवन में कोई भय न रह जाए, जीवन निर्भय हो जाए। लेकिन मजा यही है और रहस्य भी यही है कि जितनी सुरक्षा बढ़ती है, उतना ही भय बढ़ता चला जाता है।

उस सम्राट ने भी सब कुछ जीत लिया था। अब एक ही डर रह गया था कि कभी कोई दुश्मन... क्योंकि जो भी दूसरों को जीतने निकलता है, वह दुश्मन बना लेता है। दूसरों को जीतने निकलने वाला आदमी धीरे-धीरे सबको दुश्मन बना लेता है। हां, जो दूसरों से हारने को तैयार हो, वही केवल इस जगत में मित्र बन सकता है।

उसने सारी दुनिया को जीतना चाहा था तो सारी दुनिया दुश्मन हो गई थी। सारी दुनिया दुश्मन हो गई थी तो भय बढ़ गया था। भय बढ़ गया था तो सुरक्षा का आयोजन करना जरूरी था। उसने बड़ा महल बनवाया। उस महल में केवल एक

दरवाजा रखा, खिड़की भी नहीं, द्वार भी नहीं, कोई और कुछ रंध्र भी नहीं, कि कहीं कोई दुश्मन भीतर न आ जाए! एक दरवाजा, बड़ा महल और इस दरवाजे पर हजारों नंगी तलवारों का पहरा था।

पड़ोस का राजा उसके सुरक्षित महल को देखने आया। दूर-दूर तक खबर पहुंच गई। पड़ोस का राजा भी देख कर बहुत प्रभावित हुआ। उसने कहाः बहुत आनंदित हुआ। मैं भी ऐसा ही महल जाकर शीघ्र बनवाता हूं। यह तो बिल्कुल सुरक्षित है, इसमें तो कोई खतरा नहीं।

जब पड़ोस का राजा विदा ले रहा था, अपने रथ पर सवार हो रहा था और वहीं का मालिक उसे विदा कर रहा था तब फिर उसने दोबारा उस पड़ोसी राजा ने कहा बहुत खुश हुआ हूं, तुम्हारी समझ-सूझ को देख कर, तुमने अदभुत बात कर ली है। कोई राजा कभी इतना सुरक्षित महल नहीं बना पाया है। मैं भी जल्दी जाकर ऐसा ही महल बनवाता हूं। तभी सड़क के किनारे बैठा एक बूढ़ा भिखारी जोर से हंसने लगा! उस भवन के मालिक ने कहाः पागल, तू क्यों हंस रहा है? क्या बात है?

उस बूढ़े भिखारी ने कहाः मालिक आज मौका आ गया तो मैं कह दूं--कई दिन से यहां बैठा हूं कि आप द्वार पर मिल जाएंगे तो आपसे कह दूंगा। एक भूल रह गई है इस महल में। और तो सब ठीक है, एक दरवाजा है, यही गलती है। इससे दुश्मन भीतर जा सकता है। आप भीतर हो जाएं और इस दरवाजे को भी चिनवा लें तो आप बिल्कुल सुरक्षित हो जाएंगे। फिर कभी कोई दुश्मन भीतर प्रवेश नहीं कर सकता।

उस सम्राट ने कहाः पागल, अगर मैं दरवाजे को भी चिनवा लूं और भीतर हो जाऊं तो यह महल नहीं कब्र हो जाएगी?

उस फकीर ने कहाः कब्र यह हो गया है, सिर्फ एक दरवाजा बचा है, उतनी ही कमी है कब्र होने में, उसको भी पूरा कर लें। एक दरवाजा है, दुश्मन घुस सकता है। दुश्मन नहीं तो कम से कम मौत, मौत तो एक दरवाजे से भीतर चली जाएगी। आप ऐसा करें कि भीतर हो जाएं, फिर मौत भी नहीं जा सकती।

लेकिन उस राजा ने कहाः जाने का सवाल नहीं, मौत के जाने के पहले मैं मर जाऊंगा!

उस फकीर ने कहाः तो फिर ठीक से समझ लें। जितने ज्यादा दरवाजे थे इस महल में, उतना ही जीवन था आपके पास। जितने दरवाजे कम हुए, उतना जीवन कम हो गया। अब एक दरवाजा बचा है, थोड़ा-सा जीवन बचा है। इसको भी बंद कर दें, वह भी समाप्त हो जाए। इसलिए कहता हूं, एक भूल रह गई है इसमें।

और फिर वह जोर-जोर से हंसने लगा। कहने लगा, महाराज कभी मेरे पास भी महल थे। फिर मैंने यह अनुभव किया कि महल कारागृह बन जाते हैं, तो धीरे-धीरे दरवाजे बड़ा करता गया, सब दीवारें अलग करता गया। फिर यह ख्याल आया कि चाहे कितने ही दरवाजे कम करूं, ज्यादा करूं, दीवारें तो रह ही जाएंगी। तो फिर मैं दीवारों के बाहर ही निकल आया। अब खुले आकाश में हूं और अब पूरी तरह जीवित हूं।

लेकिन हम सबने भी अपनी-अपनी सामर्थ्य से अपनी-अपनी दीवारें बना ली हैं। और वे जो दीवारें दिखती हैं--पत्थर और मिट्टी की दीवारें, वे इतनी खतरनाक नहीं हैं, क्योंकि दिखाई पड़ती हैं। और बारीक दीवारें हैं और सूक्ष्म दीवारें हैं। और पारदर्शी, ट्रांसपेरेंट, जो दिखाई नहीं पड़तीं, कांच की दीवारें हैं। विचार की दीवारें हैं, सिद्धांतों की, शास्त्रों की दीवारें हैं--वे बिल्कुल दिखाई नहीं पड़तीं। वे हमने अपनी आत्मा के चारों तरफ खड़ी कर ली, ताकि हम सुरक्षित अनुभव करें!

और जितनी ज्यादा ये दीवारें हमने अपनी आत्मा के पास इकट्ठी कर ली हैं, उतने ही हम सत्य के खुले आकाश से दूर हो गए। फिर तड़पते हैं प्राण, छटपटाती है आत्मा। लेकिन जितनी छटपटाती है, उतनी ही हम दीवारें मजबूत करते चले जाते हैं। डर लगता है--शायद यह घबड़ाहट, यह छटपटाहट, दीवारों की कमी के कारण तो नहीं है? दीवारों के कारण ही है।

आदमी की आत्मा जब तक परतंत्र है, तब तक कभी आनंद को उपलब्ध नहीं हो सकती।

परतंत्रता के अतिरिक्त और कोई दुख नहीं।

और ध्यान रहे जो परतंत्रता दूसरा व्यक्ति आपके ऊपर थोपता है, वह परतंत्रता कभी वास्तविक नहीं होती। जो परतंत्रता दूसरा थोपता है, वह बाहर से ज्यादा नहीं होती है, वह आपके भीतर कभी नहीं पहुंचती। लेकिन जो परतंत्रता आप स्वयं स्वीकार कर लेते हैं, वह आपकी आत्मा तक प्रविष्ट हो जाती है। और हमने बहुत तरह की परतंत्रताएं स्वयं स्वीकार कर ली हैं!

किसने कहा आपसे कि आप हिंदू हैं? किसने कहा आपसे कि आप मुसलमान हैं? और किसने कहा कि गांधी से बंध जाओ? और किसने कहा कि बुद्ध से बंध जाओ? और किसने कहा कि मार्क्स से बंध जाओ? किसने कहा बंधने के लिए? नहीं, किसी ने नहीं, आप ही अपने हाथ से बंध गए हैं! कौन बांधता है गीता से? कौन बांधता है कुरान से? कौन बांधता है बाइबिल से? कोई नहीं, आप अपने हाथ ही बंध गए हैं!

कुछ गुलामियां हैं, जो दूसरे हम पर थोपते हैं। कुछ गुलामियां हैं, जो हम खुद स्वीकार कर लेते हैं! जो गुलामियां दूसरे हम पर थोपते हैं, वे हमारे शरीर से ज्यादा और गहराई तक नहीं जाती हैं। लेकिन जो गुलामियां हम स्वीकार कर लेते हैं, वे हमारी आत्मा तक को बांध लेती हैं! और ऐसे हम सब परतंत्र हैं।

इस परतंत्र चित्त को लेकर सत्य की खोज कैसे हो सकती है? इस बंधे हुए चित्त को लेकर यात्रा कैसे हो सकती है? इस सब तरफ से जंजीरों से भरे हुए प्राणों को लेकर कहां उठेंगे आकाश की तरफ? बहुत भारी जंजीरें हैं!

वृक्ष बंधे हैं जमीन से, क्योंकि उनकी जड़ें जड़ी हैं जमीन में। आदमी चलते-फिरते मालूम पड़ते हैं, झूठ है उन सबका चलना। क्योंकि उनकी आत्मा की जड़ें वृक्षों से भी ज्यादा जमीन के भीतर घुसी हैं। वह जमीन परंपरा की है, वह जमीन समाज की है। उस जमीन में हमारी आत्मा की जड़ें कसी हुई हैं। वहां से जब तक अपरूटेड, जब तक जड़ें उखड़ न जाएं, अपरूटेड न हो जाएं, वहां से जब तक जंजीरें टूट न जाएं, तब तक सत्य की कोई यात्रा नहीं हो सकती।

सत्य की यात्रा के पहले सूत्र की आज आपसे बात करना चाहता हूं। और वह यह कि ठीक से यह अनुभव कर लेना कि हम एक गुलाम हैं। आदमी एक गुलाम हैं। किसका? अपनी ही मूढ़ता का, अपनी ही जड़ता का, अपने ही अज्ञान का, अपनी ही नासमझी का।

हम अपने ही कारण गुलाम हैं और यह गुलामी हमें बहुत स्पष्ट रूप से अनुभव हो जानी चाहिए, तो ही हम इसे तोड़ने के लिए कुछ कर सकते हैं।

सबसे अभागा गुलाम वह होता है, जिसे यह पता ही नहीं होता कि मैं गुलाम हूं! सबसे अभागा गुलाम वह होता है, जो समझता है कारागृह को अपना घर! सबसे बड़ा गुलाम वह होता है, जो जंजीरों को आभूषण समझ लेता है! क्योंकि जब जंजीर आभूषण समझ ली जाती है, तब उसे हम तोड़ते नहीं, संभालते हैं।

मैंने सुना है एक जादूगर था और वह जादूगर भेड़ों को बेचने का काम करता था। भेड़ें पाल रखी थीं उसने, और उनको बेचता था, उनके मांस को बेचता था। उनकी हत्या करता, उन्हें खिला-पिला कर मोटा करता था, जब वे भेड़ें चरबी-मांस से भर जातीं, तब उनको काट कर बेच देता था। लेकिन उसने सारी भेड़ों को बेहोश करके एक बात सिखा दी थी। वह बहुत होशियार आदमी रहा होगा। उसने उन सारी भेड़ों को बेहोश करके, हिप्नोटाइज करके एक बात सिखा दी कि तुम सब भेड़ नहीं हो, शेर हो। वे सारी भेड़ें अपने को शेर समझती थीं! हालांकि दूसरी भेड़ों को हर भेड़ समझती थीं, खुद को शेर समझती थीं! इसलिए दूसरी भेड़ें जब कटती थीं, तब अपने मन में सोचती थीं, हम तो शेर हैं, हमारे कटने का तो कोई सवाल ही नहीं है। जो भेड़ हैं, वह कटते हैं, वह कट रहे हैं।

और इसलिए हर रोज भेड़ें कटती जाती थीं, लेकिन बाकी भेड़ों को जरा भी चिंता सवार नहीं होती थी! वे अपने को शेर ही समझती चली जाती थीं! जब उनकी काटने की बारी आती थी, तभी पता चलता था कि बुरा हुआ। लेकिन तब बहुत समय बीत चुका होता था, तब कुछ भी नहीं किया जा सकता था। भागने का वक्त निकल चुका था। अगर उन्हें दूसरी भेड़ों को कटते देख कर ख्याल में उन्हें आ गया होता कि हम भी भेड़ हैं तो शायद वे भेड़ें भाग गई होतीं। उन्होंने बचाव का कोई

उपाय कर लिया होता। लेकिन उनको यह भ्रम था कि हम शेर हैं। जब भेड़ अपने को शेर समझ ले, तब उससे कमजोर भेड़ खोजनी दुनिया में बहुत मुश्किल है, क्योंकि उसे यह ख्याल ही मिट गया कि मैं भेड़ हूं।

उस जादूगर से किसी ने कहा कि तुम्हारी भेड़ें भागती नहीं? उसने कहा, मैंने उनके साथ वही काम किया, जो हर आदमी ने अपने साथ कर लिया है! जो हम नहीं हैं, वही हमने समझ लिया है! जो ये नहीं हैं, वही मैंने इनको समझा दिया है।

हर आदमी अपने को समझता है कि मैं स्वतंत्र हूं! इससे बड़ा झूठ और कुछ भी नहीं हो सकता। और जब तक आदमी यह समझता रहता है कि मैं स्वतंत्र हूं, मैं एक स्वतंत्र आत्मा हूं, तब तक, तब तक वह आदमी स्वतंत्रता की खोज में कुछ भी नहीं करेगा।

इसलिए पहला सत्य समझ लेना जरूरी है कि हम परतंत्र हैं। हम का मतलब पड़ोसी नहीं, हम का मतलब मैं। हम का मतलब यह नहीं कि और लोग जो मेरे आस-पास बैठे हों। वे नहीं, मैं।

मैं एक गुलाम हूं और इस गुलामी की जितनी पीड़ा है, उस पूरी पीड़ा को अनुभव करना जरूरी है। इस गुलामी के जितने आयाम हैं, जितने डायमेंशंस हैं, जितनी दिशाओं से यह गुलामी पकड़े हुए है, उन दिशाओं को भी अनुभव कर लेना जरूरी है। किस-किस रूप में यह गुलामी छाती पर सवार है, उसे समझ लेना जरूरी है। इस गुलामी की क्या-क्या कड़ियां हैं, वे देख लेना जरूरी है। जब तक हम इस आध्यात्मिक दासता से, स्प्रिचुअल स्लेवरी से पूरी तरह परिचित नहीं हो जाते, तब तक इसे तोड़ा भी नहीं जा सकता।

अगर कोई कैदी किसी कारागृह से भागना चाहे तो सबसे पहले क्या करेगा? सबसे पहले तो उसे यह समझना होगा कि मैं कैदी हूं, कारागृह में हूं। और दूसरी बात यह करनी पड़ेगी कि कारागृह की एक-एक दीवार, एक-एक कोने से परिचित होना पड़ेगा, क्योंकि जिस कारागृह से निकलना हो, उससे बिना परिचित हुए कोई कभी नहीं निकल सकता। जिस कारागृह से निकल जाना है, उस कारागृह का परिचय जरूरी है। उससे जो जितना ज्यादा परिचित होगा, उतना ही आसानी से कारागृह से बाहर हो सकता है।

इसलिए कारागृह के मालिक कभी भी कैदी को कारागृह की दीवारों से, कोनों से परिचित नहीं होने देते। कारागृह से परिचित कैदी खतरनाक है। वह कभी भी कारागृह से बाहर आ सकता है। क्योंकि ज्ञान सदा मुक्त करता है। कारागृह का ज्ञान भी मुक्त करता है। इसलिए कारागृह से परिचित होना बहुत खतरनाक है मालिकों के लिए।

और कारागृह से अगर अपरिचित रखना हो कैदी को तो सबसे पहली तरकीब यह है कि उसे समझाओ कि यह कारागृह नहीं है, भगवान का मंदिर है! यह कारागृह है ही नहीं! और उसे समझाओ कि तुम कैदी नहीं हो, तुम तो एक स्वतंत्र व्यक्ति हो! और उसे समझाओ कि इतनी ही तो दुनिया है, जितनी इस दीवार के भीतर दिखाई पड़ती है! इसके बाहर कोई दुनिया ही नहीं है, बाहर कोई दुनिया ही नहीं है। बस यही सब-कुछ है! और उसे समझाओ, कि अगर तकलीफ होती है तो दीवारों को लीपो, पोतो, साफ करो। दीवारें गंदी है, इसलिए तकलीफ होती है। दीवारों को साफ-सुथरा करो--कारागृह की दीवारों को। और अगर तकलीफ होती है तो उसका मतलब है बगीचा लगाओ कारागृह के भीतर, फूल-फुलवारी लगाओ; सुगंध आने लगेगी, आनंद आने लगेगा! कारागृह को सजाओ, अगर तकलीफ है तो काराग्रह को सजाओ, क्योंकि यह कारागृह नहीं है, यह तो घर है!

और जो कैदी इन बातों को मान लेगा, वह कैदी कभी मुक्त हो सकता है? उसके मुक्त होने का सवाल ही मिट जाता है। और हमने ऐसी ही बातें मान ली हैं!

पहली तो बात हमें यह स्मरण ही नहीं कि हम कारागृह में बंद है। जन्म के बाद मृत्यु तक हम न मालूम कितनी तरह के कारागृहों में बंद हैं। सब तरफ दीवालें हैं, लेकिन दीवालें कारागृह की नहीं हैं। जब एक हिंदू कहता है कि मैं हिंदू हूं। जब एक मुसलमान कहता है कि मैं मुसलमान हूं, तो वह इस तरह नहीं कहता कि मैं मुसलमान की दीवार के भीतर बंद हूं। वह अकड़ से कहता है, जैसे मुसलमान, होना, हिंदू होना, जैन होना कोई बड़ी कीमत की बात है! जब एक आदमी कहता है,

मैं भारतीय हूं और एक आदमी कहता है कि मैं चीनी हूं, तो बहुत अकड़ से कहता है! उसे पता भी नहीं कि ये भी दीवारें हैं और रोकती है बड़ी मनुष्यता से मिलने में।

जो भी चीज रोकती है, वह दीवाल है।

अगर मैं आपसे मिलने में रुकता हूं तो जो भी चीज बीच में खड़ी है, वह दीवाल है। हिंदू-मुसलमानों के बीच कोई रोकता है तो दीवार है। हिंदुस्तानी और चीनी के बीच अगर कोई रोकता है तो दीवाल है। अगर शूद्र और ब्राह्मण के बीच मिलने में बाधा पड़ती है तो कोई दीवाल है--चाहे व दिखाई पड़ती हो या दिखाई नहीं पड़ती हो। जहां भी बीच में मिलन में कोई चीज आड़े आती हो, वह दीवार है।

और आदमी-आदमी के आस-पास कितनी दीवालें हैं, कितनी तरह की दीवालें हैं! लेकिन वे दीवालें ट्रांसपेरेंट हैं, कांच की दीवारें हैं, उनके आर-पार दिखाई पड़ता है। तो हमें शक नहीं होता कि दीवाल बीच में है। पत्थर की दीवाल के आर-पार दिखाई नहीं पड़ता। हिंदू और मुसलमान की दीवार के आर-पार दिखाई पड़ता है। उस दिखाई पड़ने के कारण ख्याल होता है कि कोई दीवार बीच में नहीं है। इसीलिए पारदर्शी दीवलें बड़ी खतरनाक हैं। उनके आर-पार दिखाई भी पड़ता है, लेकिन हाथ नहीं बढ़ा सकते। हिंदू की तरफ से मुसलमान की तरफ कहीं हाथ बढ़ सकता है? बीच में दीवाल आ जाएगी, हाथ यहीं मुड़कर वापस लौट आएगा। शूद्र का और ब्राह्मण के बीच कोई मिलन हो सकता है? कोई मिलन वहां नहीं है।

लेकिन यह हमें ख्याल में नहीं आता कि हमारे कारागृह हैं। सिद्धांतों की दीवालें हैं। हमें ख्याल ही नहीं कि हर आदमी अपने-अपने सिद्धांतों में बंद होकर बैठ जाता है, फिर उसे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता।

रूस में वे समझाते हैं कि ईश्वर नहीं है। वहां का बच्चा यही सुन कर बड़ा होता है कि ईश्वर नहीं है। उसकी आत्मा के चारों तरफ एक लक्ष्मण-रेखा खिंच जाती है--ईश्वर नहीं है। अब वह इसी लक्ष्मण-रेखा के भीतर जीवन भर जीएगा कि ईश्वर नहीं है। और जब भी दुनिया को देखेगा तो इसी घेरे के भीतर से देखेगा कि ईश्वर नहीं है। अब इस घेरे को लेकर ही वह चलेगा!

ये जो बाहर के कारागृह हैं, इनके भीतर आपको बंद होना पड़ता है, इनको लेकर आप नहीं चल सकते। ये जो आत्मा के कारागृह हैं, ये बहुत अदभुत हैं! आप जहां भी जाइए, ये आपके चारों तरफ चलते हैं, ये आपके साथ ही चलते हैं!

अब जिस आदमी के दिमाग में यह ख्याल बैठ गया कि ईश्वर नहीं है, अब यह आदमी इसी ख्याल की दीवार में बंद जिंदगी भर जीएगा इसे कहीं भी। ईश्वर दिखाई नहीं पड़ सकता, क्योंकि आदमी को वही दिखाई पड़ सकता है, जो देखने की उसकी तैयारी हो। और इस आदमी के देखने की तैयारी कुंठित हो गई, बंद हो गई, इस आदमी ने तय कर लिया कि ईश्वर नहीं है। अब इसे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ेगा।

लेकिन आप कहेंगे कि इससे तो हम बेहतर हैं, जो मानते हैं कि ईश्वर है! हम भी उतनी ही बदतर हालत में हैं। क्योंकि जिस आदमी ने तय कर लिया है कि ईश्वर है। अब वह फिर कभी आंख उठा कर खोज भी नहीं करेगा कि वह कहां है? मान कर बैठ गया कि "है" और खत्म हो गया! अब वह समझ रहा कि "है" बात खत्म हो गई! अब और क्या करना है?

जिसने मान लिया कि है, वह "है" में बंद हो जाता है! जिसने मान लिया कि "नहीं है", वह "नहीं है" में बंद हो जाता है! एक नास्तिकता में बंद हो जाता है, एक आस्तिकता में बंद हो जाता है! दोनों की अपनी खोल है!

लेकिन सत्य की खोज वह आदमी करता है, जो कहता है, मैं खोल क्यों बनाऊं? मुझे अभी पता ही नहीं है कि "है" या "नहीं।" मैं कोई खोल नहीं बनाता। मैं बिना खोल के, बिना दीवार के खोज करूंगा, मुझे पता नहीं है। इसलिए मैं किसी सिद्धांत को अपने साथ जकड़ने को राजी नहीं हूं। किसी भी तरह का सिद्धांत आदमी को बांध लेता है और सत्य की खोज मुश्किल हो जाती है।

एक फकीर एक गांव में ठहरा हुआ था। उस गांव के लोगों ने उस फकीर को कहा कि तुम आकर हमें नहीं बताओगे क्या कि ईश्वर है या नहीं? उस फकीर ने कहाः ईश्वर! ईश्वर से तुम्हें क्या प्रयोजन हो सकता है? अपना काम करो। ईश्वर से किसी को भी कोई प्रयोजन नहीं है। अगर ईश्वर से कोई प्रयोजन होता तो यह दुनिया बिल्कुल दूसरी दुनिया होती। यह ऐसी दुनिया नहीं हो सकती--इतनी कुरूप, इतनी गंदी, इतनी बेहूदी!

जहां ईश्वर से हमारा प्रयोजन होता तो हमने यह सारी दुनिया और तरह की कर ली होती। लेकिन इस सब से हमें कोई प्रयोजन नहीं। वे जो मंदिरों में बैठे हैं, उन्हें भी नहीं है। वे जो पुजारी और साधु, संन्यासियों का गिरोह और जत्था खड़ा हुआ है--उन्हें भी नहीं है। वे जो लोग नारियल फोड़ रहे हैं दीवारों के सामने, पत्थरों के सामने, उन्हें भी नहीं है।

अगर ईश्वर से हमें मतलब होता तो यह दुनिया बिल्कुल दूसरी हो गई होती। क्योंकि ईश्वर से मतलब रखने वाली दुनिया इतनी गंदी और कुरूप नहीं हो सकती।

उस फकीर ने कहाः क्या मतलब है तुम्हें ईश्वर से? अपना काम-धाम देखो, बेकार समय मत गंवाओ। लेकिन वे लोग नहीं माने। उन्होंने कहाः आज छुट्टी का दिन है और आप जरूर चलें। फकीर ने कहा, अब मैं समझा, चूंकि छुट्टी का दिन है, इसलिए ईश्वर की फिकर करने आए हो!

छुट्टी के दिन लोग ईश्वर की ही फिकर करते हैं! क्योंकि जब कोई काम नहीं होता और आदमी से बेकाम नहीं बैठे रहा जाता तो कुछ न कुछ करता है! ईश्वर के लिए कुछ करता है! बेकाम आदमी कुछ न कुछ करता है-माला ही फेरता है!

उस फकीर ने कहाः अच्छा, छुट्टी का दिन है, तब ठीक है, मैं चलता हूं। लेकिन, लेकिन ईश्वर के संबंध में कहूंगा क्या? क्योंकि ईश्वर के संबंध में तो आज तक कुछ भी नहीं कहा जा सका। जिन्होंने कहा है, उन्होंने गलती की। जो जानते थे, वे चुप रह गए। अब मैं मूर्ख बनूंगा, अगर मैं कुछ कहूं। क्योंकि उससे सिद्ध होगा कि मैं नहीं जानता हूं। और तुम कहते हो कि कुछ कहो!

खैर, मैं चलता हूं। वह मस्जिद में गया। उस गांव के लोगों ने बड़ी भीड़ इकट्ठी कर ली। भीड़ को देख कर बड़ा भ्रम पैदा होता है।

ईश्वर को समझने के लिए भीड़ इकट्ठी हो जाए तो भ्रम पैदा होता है कि लोग ईश्वर को समझना चाहते हैं!

उस फकीर ने कहाः इतने लोग ईश्वर में उत्सुक हैं तो मैं एक प्रश्न पूछ लूं पहले, तुम ईश्वर को मानते हो? ईश्वर है? सारे गांव के लोगों ने हाथ उठा दिया ऊपर कि हम ईश्वर को मानते हैं, ईश्वर है। उस फकीर ने कहा, फिर बात खत्म। जब तुम्हें पता ही है, तो मेरे बोलने की अब कोई जरूरत नहीं। मैं वापस जाता हूं।

गांव के लोग मुश्किल में पड़ गए। अब कुछ उपाय भी न था। कह चुके थे, जानते तो नहीं थे। लेकिन कह चुके थे कि जानते हैं, हाथ हिला दिया था। अब एकदम इनकार करेंगे तो ठीक भी नहीं है।

कौन जानता है? आप जानते हैं? लेकिन अगर कोई पूछेगा ईश्वर है? तो आप भी हाथ उठा देंगे। ये हाथ झूठ हैं। और जो आदमी ईश्वर के सामने तक झूठ बोलता है, उसकी जिंदगी में अब सच का कोई उपाय नहीं हो सकता। जो ईश्वर के लिए तक झूठी गवाही दे सकता है कि हां, मैं जानता हूं--"ईश्वर है"! और उसे कोई भी पता नहीं! उसकी जिंदगी में कहीं कोई किरण नहीं उतरी ईश्वर की। उसकी जिंदगी में क हीं कोई चिराग नहीं जला ईश्वर का। उसकी जिंदगी में कभी कोई प्रार्थना नहीं आई ईश्वर की। उसकी जिंदगी में कभी कोई फूल नहीं खिला ईश्वर का और वह कहता है कि हां "ईश्वर है"! और कभी भीतर नहीं देखता कि मैं सरासर झूठ बोल रहा हूं, मुझे कुछ भी पता नहीं है!

बाप बेटों से झूठ बोल रहे हैं! गुरु शिष्यों से झूठ बोल रहे हैं! धर्मगुरु अनुयायियों से झूठ बोल रहे हैं! और उन्हें कुछ भी पता नहीं कि वह है या नहीं! किसकी बात कर रहे हो? उनको अगर जोर से हिला दो तो उनका सब ईश्वर बिखर जाएगा। भीतर से कहीं कोई आवाज न आएगी कि वह है। शायद जब वह आपसे कह रहे हैं कि "है"--तभी उनके भीतर कोई कह रहा है कि अजीब बात कर रहे हो, पता तो तुम्हें बिल्कुल नहीं।

उस फकीर ने कहा कि जब तुम्हें पता ही है तो बात खत्म हो गई। लेकिन मैं हैरान हूं कि इस गांव में ईश्वर को जानने वाले इतने लोग हैं, यह गांव दूसरी तरह का हो जाना चाहिए था! लेकिन तुम्हारा गांव वैसा ही है, जैसे मैंने दूसरे गांव देखे।

गांव के लोग बहुत चिंतित हुए। उन्होंने कहाः अब क्या करें? उन्होंने कहाः अगली बार फिर हम चलें। अगले शुक्रवार को उन्होंने फिर फकीर के पैर पकड़ लिए और कहा आप चलें और ईश्वर को समझाएं।

उसने कहाः लेकिन मैं पिछली बार गया था और तुम्हीं लोगों ने कहा था कि ईश्वर को तुम जानते हो। बात खत्म हो गई, अब उसके आगे बताने को कुछ भी नहीं बचता। जो ईश्वर को ही जान ही लेता है, उसके आगे जानने को कुछ बचता है फिर?

उन लोगों ने कहाः महाशय वे दूसरे लोग रहे होंगे। हम गांव के दूसरे लोग हैं। आप चलिए और हमें समझाइए। हमें कुछ भी पता नहीं। ईश्वर को हम मानते ही नहीं।

उस फकीर ने कहाः धन्यवाद, तेरा परमात्मा! ये वही के वही लोग हैं। शक्लें मेरी पहचानी हुई हैं; लेकिन ये बदल गए हैं!

असल में धार्मिक आदमी के बदलने में देर नहीं लगती। धार्मिक आदमी से ज्यादा बेईमान आदमी खोजना बहुत मुश्किल है। वह जरा में बदल सकता है। दुकान पर वह कुछ और होता है, मंदिर में कुछ और हो जाता है। मंदिर में कुछ और होता है, बाहर निकलते ही कुछ और हो जाता है।

बदलने की कला सीखनी हो तो उन लोगों से सीखो, जो मंदिर जाते हैं। क्षण भर में उनकी आत्मा दूसरी कर लेते हैं वे! फिल्मों के अभिनेता भी इतने कुशल नहीं हैं, क्योंकि वे भी सिर्फ चेहरा बदल पाते हैं, कपड़े, रंग-रोगन। लेकिन मंदिरों में जाने वाले लोग आत्मा तक को बदल लेते हैं! दुकान पर वही आदमी, उसकी आंखों में झांको, कुछ और मालूम पड़ेगा। वही आदमी मंदिर में जब माला फेर रहा हो, तब देखो तो मालूम पड़ेगा कि यह आदमी कोई और ही है! फिर घड़ी भर बाद वह आदमी दूसरा आदमी हो जाता है!

वह जो घड़ी भर पहले कुरान पढ़ रहा था मस्जिद में, इस्लाम खतरे में देख कर किसी कि छाती में छुरा भोंक सकता है! वह जो घड़ी भर पहले गीता पढ़ रहा था, घड़ी भर बाद हिंदू धर्म के लिए किसी के मकान में आग लगा सकता है। धार्मिक आदमी के बदल जाने में देर नहीं लगती! और जब तक ऐसे बदल जाने वाले आदमी दुनिया में धार्मिक समझे जाते रहेंगे; तब तक दुनिया से अधर्म नहीं मिट सकता।

उस फकीर ने कहाः धन्यवाद है भगवान, बदल गए ये लोग, ठीक है! जब दूसरे ही हैं, तो मैं चलूंगा। वह गया, वह मस्जिद में खड़ा हुआ और उसने कहा, दोस्तो, मैं फिर वही सवाल पूछता हूं, क्योंकि दूसरे लोग आज आए हुए हैं। हालांकि सब चेहरे मुझे पहचाने हुए मालूम पड़ रहे हैं। क्या ईश्वर है?

उस मस्जिद के लोगों ने कहाः नहीं है, ईश्वर बिल्कुल नहीं है। ईश्वर को हम न मानते हैं, न जानते हैं। अब आप बोलिए।

उस फकीर ने कहाः बात खत्म हो गई। जब है ही नहीं, तो उसके संबंध में बात भी क्या करनी है? प्रयोजन क्या है अब बात करने का? किसके संबंध में पूछते हो मित्रो? जो है ही नहीं उसके संबंध में? कौन ईश्वर? कैसा ईश्वर?

मस्जिद के लोगों ने कहाः यह तो मुसीबत हो गई। इस आदमी से पेश पाना कठिन है।

उसने कहा, जाओ अपने घर। अब कभी भूलकर यहां मस्जिद मत आना। किसलिए आते हो यहां? जो है ही नहीं, उसकी खोज करने? और तुम्हारी खोज पूरी हो गई, क्योंकि तुम्हें पता चल गया कि वह नहीं है! खोज पूरी हो गई, तुमने जान लिया कि वह नहीं है! अब बात खत्म हो गई। अब कोई आगे यात्रा नहीं, मुझे क्षमा कर दो, मैं जाता हूं।

गांव के लोगों ने कहाः क्या करना पड़ेगा? इस आदमी से सुनना जरूरी है। जरूर कोई राज अपने भीतर छिपाए है। यह आदमी कोई साधारण आदमी नहीं है। क्योंकि साधारण आदमी तो बोलने को आतुर रहता है। आप मौका दो और वह

बोलेगा। और यह आदमी बोलने के मौके छोड़कर भाग जाता है। अजीब है, जरूर कुछ बात होगी, कुछ राज है, कहीं कोई मिस्ट्री, कहीं कोई रहस्य है।

फिर तीसरे शुक्रवार उन्होंने जाकर प्रार्थना की कि चलिए हमारी मस्जिद में। लेकिन उसने कहा कि मैं दो बार हो आया हूं और बात खत्म हो चुकी है। उन मस्जिद के लोगों ने कहाः आज तीसरा मामला है, आप चलिए। हम तीसरा उत्तर देने की तैयारी करके आए हैं।

उस फकीर ने कहा कि जो आदमी तैयारी करके उत्तर देता है, उसके उत्तर हमेशा झूठ होते हैं। उत्तर भी कहीं तैयार करने पड़ते हैं? तैयार करने का मतलब है कि उत्तर मालूम नहीं हैं। जिसे मालूम है, वह तैयार नहीं करता। और जिसे मालूम नहीं है, वह तैयार कर लेता है।

और ध्यान रहे, जिन-जिन बातों के उत्तर आपने तैयार किए हैं, उन-उन बातों के उत्तर सब झूठे हैं। जिंदगी में उत्तर आते हैं, तब सच होते हैं। तैयार किए हुए उत्तर कभी सच नहीं होते। सत्य कभी तैयार नहीं किया जा सकता। सत्य आता है, झूठ तैयार किया जाता है। जो हम तैयार करते हैं, वह झूठ होता है। जो आता है, वह सत्य होता है। सत्य, आदमी तैयार नहीं करता है।

आदमी जो भी तैयार करता है, सब झूठ होता है। इसीलिए दुनिया के सारे शास्त्र, दुनिया के सारे संप्रदाय, दुनिया के सारे सिद्धांत; जो आदमी ने बनाए हैं, वे सब झूठ हैं। आदमी सत्य को नहीं बना सकता है।

सत्य तब आता है, जब आदमी का यह भ्रम टूट जाता है कि मैं सत्य को बना सकता हूं। और जब आदमी सब बनाए हुए झूठों को छोड़ देता है, तब सत्य तत्क्षण उत्तर आता है।

उस फकीर ने कहाः कि तुमने तैयार किया है उत्तर, तब तो वह निश्चित ही झूठ होगा। उस उत्तर को बिना सुने मैं कह सकता हूं कि वह झूठ है। लेकिन मैं चलूंगा।

वह तीसरी बार गया। उस गांव के लोग बड़े होशियार रहे होंगे। लेकिन होशियारी कभी-कभी महंगी पड़ती है--यह पता नहीं! होशियारी उन चीजों के मामले में बहुत महंगी पड़ जाती है, जहां होशियारी से काम नहीं चलता, जहां सादगी से, सरलता से काम चलता है। सत्य के जगत में होशियारी, कनिंगनेस काम नहीं करती।

सत्य की दुनिया में सरलता काम करती है। वहां वे जीत जाते हैं, जो सरल हैं। और वे हार जाते हैं, जो होशियार हैं।

पर गांव के लोग बड़े होशियार थे। उन्होंने बड़ी तैयारी की थी। उन्होंने कहा, आज तो फकीर को फंसा ही लेना है। लेकिन उन्हें पता नहीं कि फकीरों को फांसना मुश्किल है। क्योंकि फकीर का मतलब यह है कि जिसने फंसने के सब रास्ते तोड़ दिए हैं। और, उन्हें यह भी पता नहीं कि दूसरों को फंसाने में अक्सर आदमी खुद फंस जाता है।

खैर, वह फकीर पहुंच गया और उसने कहाः दोस्तो, फिर वही सवाल, ईश्वर है या नहीं!

आधे मस्जिद के लोगों ने हाथ उठाए और कहा कि ईश्वर है और आधे मस्जिद के लोगों ने हाथ उठाए और कहा कि ईश्वर नहीं है। अब हम दोनों उत्तर देते हैं। अब आप बोलिए?

उस फकीर ने हाथ जोड़े आकाश की तरफ और कहाः भगवान बड़ा मजा है इस गांव में। और कहाः पागलो, जब तुम आधों को पता है और आधों को पता नहीं है, तो आधे जिनको पता है उनको बता दें, जिनको पता नहीं है! मुझे बीच में क्यों ले आते हो? मेरी बीच में क्या जरूरत है? जब इस मस्जिद में दोनों तरह के लोग मौजूद हैं तो आपस में तुम निपटारा कर लो, मैं जाता हूं।

उस गांव के लोग फिर चौथी बार उस फकीर के पास नहीं आए। चौथा उत्तर खोजने की उन्होंने बहुत कोशिश की, लेकिन चौथा उत्तर नहीं मिल सका। असल में तीन ही उत्तर हो सकते हैं--हां, न या दोनों। चौथा कोई उत्तर नहीं हो सकता। चौथा क्या उत्तर हो सकता है? तीन ही उत्तर हो सकते हैं।

वह फकीर बहुत दिन रुका रहा और प्रतीक्षा करता रहा कि शायद वे फिर आएं, लेकिन वे नहीं आए। बाद में किसी ने उस फकीर से पूछा कि क्यों रुके हो यहां? उसने कहा मैं रास्ता देखता हूं कि शायद वे चौथी बार आएं, लेकिन वे नहीं आए। उस आदमी ने कहाः चौथी बार हम कैसे आएं? चौथा उत्तर ही नहीं सूझता है। हम क्या उत्तर देंगे, जब तुम बोलोगे? उस फकीर ने कहाः अगर मैं बताऊंगा वह उत्तर तो वह भी बेकार हो जाएगा। क्योंकि तुम्हारे लिए फिर वह सीखा हुआ उत्तर हो जाएगा।

उस फकीर ने बाद में अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि मैं राह देखता रहा कि शायद उस गांव के लोग आएं और मुझे ले जाएं। और मैं जब सवाल पूछूं, तब वे चुप रह जाएं और कोई भी उत्तर न दें। अगर वे कोई भी उत्तर न दें, तो फिर मुझे बोलना पड़ेगा, क्योंकि उनके उत्तर की चुप्पी बताएगी कि वे खोजने वाले लोग हैं। उन्होंने पहले से कुछ मान नहीं रखा है। वे यात्रा करने के लिए तैयार हैं, वे जा सकते हैं जानने के लिए, उन्होंने कुछ भी मान नहीं रखा है। जिसने मान रखा है, वह जानने की यात्रा पर कभी नहीं निकलता। जिसकी कोई बिलीफ है, जिसका कोई विश्वास है, वह कभी सत्य की खोज पर नहीं जाता।

इसलिए पहली बात आपसे यह कहना चाहता हूं सत्य की खोज पर वे जाते हैं, जो सिद्धांतों के कारागृह को तोड़ने में समर्थ हो जाते हैं।

हम सब सिद्धांतों में बंधे हुए लोग हैं, शब्दों में बंधे हुए लोग हैं, हम सब शास्त्रों में बंधे हुए लोग--सत्य हमारे लिए नहीं हो सकता है। और ये शास्त्र बड़े सोने के हैं और इन शास्त्रों में बड़े हीरे-मोती भरे हैं। पिंजड़े सोने के भी हो सकते हैं और पिंजड़ों में हीरे-मोती भी लगे हो सकते हैं। लेकिन कोई पिंजड़ा इसीलिए कम पिंजड़ा नहीं हो जाता कि वह सोने का है, बल्कि और खतरनाक हो जाता है। क्योंकि लोहे के पिंजड़े को तो तोड़ने का मन होता है, सोने के पिंजड़े को बचाने की इच्छा होती है।

कारागृह में बंधा हुआ चित्त--हम अपने ही हाथ से अपने को बांधे हुए हैं!

यह पहली बात जान लेनी जरूरी है कि जब तक हम इससे मुक्त न हो जाएं, तब तक सत्य की तरफ हमारी आंख नहीं उठ सकती। तब हम वही नहीं देख सकते, जो है। तब तक हम वही देखने की कोशिश करते रहेंगे, जो हम चाहते हैं कि हो। और जब तक हम चाहते हैं कि कुछ हो, तब तक हम वही नहीं जान सकते हैं, जो है। जब तक हमारी यह इच्छा है कि सत्य ऐसा होना चाहिए, तब तक हम सत्य के ऊपर अपनी इच्छा को थोपते चले जाएंगे। जब तक हम कहेंगे कि भगवान ऐसा होना चाहिए--बांसुरी बजाता हुआ, कि धनुषबाण लिए हुए, तब तक हम अपनी ही कल्पना को भगवान पर थोपने की चेष्टा जारी रखेंगे।

और यह हो सकता है कि हमें धनुर्धारी भगवान के दर्शन हो जाएं और यह भी हो सकता है कि बांसुरी बजाता हुआ कृष्ण दिखाई पड़े। और यह भी हो सकता है कि सूली पर लटके हुए जीसस की हमें तसवीर दिखाई पड़ जाए। लेकिन ये सब तस्वीरें हमारे ही मन की तस्वीरें होंगी। इनका सत्य से कोई भी दूर का भी संबंध नहीं। यह सब हमारी ही कल्पना का जाल होगा, यह हमारा ही प्रोजेक्शन होगा। यह हमारी ही इच्छा का खेल होगा। यह हमारा ही स्वप्न होगा और इस स्वप्न को जो सत्य समझ लेता है, फिर तो सत्य से मिलने के उसके मौके ही समाप्त हो जाते हैं।

नहीं, सत्य को तो केवल वे ही जान सकते हैं, जिनकी आत्मा पर कोई सिद्धांत का आग्रह नहीं। कोई आग्रह नहीं है जिनके मन पर कि यह होना चाहिए। जो कहते हैं, जो भी होगा, हम उसे जानने को तैयार हैं। और उसक ी जानने की तैयारी में हम अपनी सारी जंजीरें खोने को भी तैयार हैं।

और बड़े मजे की बात, सत्य कहता है कि सिर्फ जंजीरें खो दो और मैं तुम्हें मिल जाऊंगा। सत्य और कुछ नहीं मांगता, सत्य कुछ और नहीं मांगता, सिर्फ जंजीरें मांगता है! कि अपनी जंजीरें खो दो और मैं तुम्हें मिल जाऊंगा।

लेकिन हम जंजीरें खोने को तैयार ही नहीं हैं! जंजीरों से भी मोह हो जाता है! और पुरानी जंजीर हो तो बहुत मोह हो जाता है! बाप दादे दे गए हों जंजीरों को तो बहुत मोह हो जाता है! और जंजीरें बेटों को दे जाते हैं बाप, फिर बेटे अपने बेटों को सम्हाल देते हैं!

आदमी मर जाते हैं। जंजीरें पीढ़ी दर पीढ़ी चलती चली जाती हैं। हजारों-हजारों, लाखों-लाखों साल पुरानी जंजीरें हैं! हम भूल ही गए हैं कि हम उनसे बंधे हैं!

लेकिन यह ध्यान में रख लेना आज, पहले सूत्र के लिए जरूरी है, जब तक आपके मन में कोई एक सिद्धांत--चाहे आस्तिक का, चाहे नास्तिक का, चाहे कम्यूनिस्ट का, चाहे हिंदू का, चाहे मुसलमान का, चाहे ईसाई का--जब तक कोई भी सिद्धांत आपको पकड़े हुए है और आप कहते हैं कि मैं इस सिद्धांत को सही मानता हूं, तब तक आपको सत्य का दर्शन नहीं हो सकता। क्योंकि सत्य के दर्शन के पहले किसी सिद्धांत का सही होने का क्या अर्थ होता है?

जब तक सत्य मुझे नहीं मिला, तब तक मैं कैसे कहूं कि कौन सा शास्त्र सत्य है? अगर मेरी तस्वीर आपने देखी हो और मुझे भी देखा हो तो आप कह सकते हैं कि मेरी कौन सी तस्वीर सच है। लेकिन अगर आपने मुझे न देखा हो और आपके सामने हजार तस्वीरें रख दी जाएं तो क्या आप बता सकते हैं कि इसमें कौन सी तस्वीर सच है? मुझे देखा हो तो आप बता सकते हैं कि तसवीर कौन सी सच है। लेकिन मुझे न देखा हो तो आप कैसे बता सकते हैं कि कौन सी तस्वीर सच है? फिर आप जिस तसवीर को सच बताएंगे, आप झूठ की यात्रा पर चल रहे हैं।

कौन शास्त्र सत्य है? कैसे पता चलेगा आपको, जब तक आपको सत्य का पता नहीं? कौन सिद्धांत सत्य है? कैसे पता चलेगा? कौन तीर्थंकर? कौन अवतार? कौन ईश्वर का पुत्र सत्य है? कैसे पता चलेगा, जब तक आपको सत्य का पता न हो?

सत्य का पता नहीं है और सिद्धांत के सत्य होने का पता चल गया? सत्य का पता नहीं है और शास्त्र के सत्य होने का पता चल गया? फिर हम झूठ से बंध गए। और जो झूठ से बंध गया--जो आदमी, इसको अब सत्य पता नहीं चल सकता।

पहला सूत्र अपने मन की जंजीरों को गौर से देखना--सिद्धांत की। और अगर हिम्मत जुटा सकें और यह मजे की बात है कि अगर जंजीर दिखाई पड़ जाए तो हिम्मत जुटाने में बहुत ताकत नहीं लगानी पड़ती। जंजीर दिखाई नहीं पड़ती, इसलिए हिम्मत जुटाना मुश्किल होता है। एक बार पता चल जाए कि यह रही मेरी गुलामी तो अपनी गुलामी को कोई बरदाश्त करने को कभी राजी नहीं होता। फिर उसे तोड़ना आसान हो जाता है।

हम तोड़ने के सूत्रों पर बात करेंगे। लेकिन आज इतना ही आप सोचते हुए जाना कि आप भी गुलाम तो नहीं हैं? आपका मन भी कैद तो नहीं है? आपने भी दीवारें तो नहीं बना रखी हैं? और आपका मन भी कुछ सत्य मान कर तो नहीं बैठ गया है? अगर बैठ गया है तो सचेत हो जाना जरूरी है। अगर बैठ गया है तो खड़े हो जाना जरूरी है। अगर कहीं बंधन पकड़ लिए हैं तो उनको छोड़ देना जरूरी है।

और एक बार आदमी हिम्मत जुटा ले तो इतनी बड़ी शक्ति भीतर पैदा होती है। एक बार साहस जुटा ले तो इतनी बड़ी आत्मा का जन्म होता है। और एक बार तय कर ले तो फिर कोई ताकत उसे गुलाम नहीं रख सकती। और जिस आदमी की आंखें आकाश की तरफ उठनी शुरू हो जाती हैं, खुले आकाश की तरफ, उस आदमी के निकट परमात्मा का आना शुरू हो जाता है।

परमात्मा है खुले आकाश की भांति। जो अपने पंखों को खोल कर उसमें उड़ते हैं, वे जरूर उसे उपलब्ध हो जाते हैं। लेकिन बंधे हुए पिंजड़े में बंद लोग उस तक नहीं पहुंच पाते।

क्या आपको कभी ऐसा नहीं लगता कि हमारे पंख हैं या नहीं? क्या कभी आपके प्राणों में ऐसी प्यास नहीं जगती कि मैं मुक्त हो जाऊं? क्या कभी आपको गुलामी दिखाई नहीं पड़ती है? इन्हीं प्रश्नों के साथ आज की अपनी पहली बात पूरी

करता हूं। यही पूछते अपने से जाना और सोते समय भी यही पूछना बार-बार कि मैं भी एक गुलाम तो नहीं हूं? और अगर मैं गुलाम हूं तो क्या मैं अपने ही हाथों से गुलाम होने को राजी हूं?

फिर कल सुबह दूसरे सूत्र पर मैं आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, इससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

नारी और क्रांति

संभोग से समाधि की ओर-13

मेरे प्रिय आत्मन्!

व्यक्तियों में ही, मनुष्यों में ही स्त्री और पुरुष नहीं होते हैं--पशुओं में भी, पक्षियों में भी। लेकिन एक और भी नई बात आपसे कहना चाहता हूं: देशों में भी स्त्री और पुरुष देश होते हैं।

भारत एक स्त्री देश है और स्त्री देश रहा है। भारत की पूरी मनःस्थिति स्त्रैण है। ठीक उसके उलटे जर्मनी या अमेरिका जैसे देशों को पुरुष देश कहा जा सकता है। भारत की पूरी आत्मा नारी है। और इसलिए ही भारत कभी भी आक्रामक नहीं हो पाया--पूरे इतिहास में आक्रामक नहीं बन पाया। इसीलिए भारत में हिंसा का कोई प्रभाव पैदा नहीं हो सका। भारत की पूरे विचार की कथा अहिंसा की कथा है। भारत के पूरे इतिहास को देखें तो एक बहुत आश्चर्यजनक घटना मालूम पड़ती है। दुनिया का कोई भी देश उस अर्थों में स्त्रैण, नारी नहीं है, जिस अर्थों में भारत है।

यही भारत का दुर्भाग्य भी सिद्ध हुआ। क्योंकि सारा जगत पुरुषों का, सारा जगत पुरुष-वृत्तियों का, सारा जगत आक्रामक, सारा जगत हिंसात्मक, भारत अकेला आक्रामक नहीं, हिंसात्मक नहीं! तो भारत के पिछले तीन हजार वर्ष का इतिहास दुख, परेशानी और कष्ट का इतिहास रहा है।

लेकिन यही तथ्य आने वाले भविष्य में सौभाग्य का कारण भी बन सकता है। क्योंकि जिन देशों ने पुरुष के प्रभाव में विकास किया, वे अपनी मरण घड़ी के निकट पहुंच गए हैं। पुरुष का चित्त आक्रमण का चित्त है, एग्रेशन। पुरुष का चित्त हिंसा का चित्त है, वायलेंस का। पश्चिम के जिन देशों ने पुरुष चित्त के अनुकूल विकास किया, वे सारे देश धीरे-धीरे युद्धों से गुजर कर अंतिम युद्ध, टोटल वार के करीब पहुंच गए हैं। अब कोई परिणति नहीं मालूम होती सिवाय इसके कि या तो वे टकराएं और टूट जाएं, नष्ट हो जाएं; और उनके साथ पुरुष ने जो सभ्यता खड़ी की है आज तक, वह सारी की सारी नष्ट हो जाए। या दूसरा उपाय यह है कि इतिहास का चक्र घूमे और पुरुष की सभ्यता की कथा बंद हो, और एक नया अध्याय शुरु हो, जो अध्याय स्त्री चित्त की सभ्यता का अध्याय होगा।

इसे थोड़ा समझ लेना जरूरी है। इसे हम समझें तो हम मनुष्य चेतना के भीतर चलने वाले सबसे बड़े ऊहापोह से परिचित हो सकेंगे।

नीत्शे जैसा व्यक्ति भारत में हम लाख कोशिश करें तो पैदा नहीं हो सकता है। नीत्शे जर्मनी में ही पैदा हो सकता है। और जर्मनी लाख उपाय करे तो भी गांधी और बुद्ध जैसे आदमी को पैदा करना जर्मनी के लिए असंभव है। गांधी और बुद्ध जैसे व्यक्ति भारत में ही पैदा हो सकते हैं। यह पैदा हो जाना आकस्मिक नहीं है, यह एक्सीडेंटल नहीं है। कोई व्यक्ति पैदा होता है, कोई विचारधारा पैदा होती है, पूरे देश के प्राणों के हजारों वर्षों के मंथन का परिणाम होता है।

यह आश्चर्यजनक है कि भारत का आज तक का पूरा इतिहास भूल कर भी पुरुष का इतिहास नहीं रहा है। और इसीलिए भारत में विज्ञान का जन्म भी नहीं हो सका। विज्ञान एक पुरुष कर्म है। विज्ञान का अर्थ है: प्रकृति पर विजय। विज्ञान का अर्थ है: जो चारों तरफ फैला हुआ जगत है, उसको जीतना है। पुरुष का मन जीत में बहुत आतुर है।

भारत ने प्रकृति को जीतने की कोई कोशिश नहीं की। असल में, भारत ने कभी भी किसी को जीतने की कोई कोशिश नहीं की। जीतने की धारणा ही भारत के चित्त में बहुत गहरे नहीं जा सकी। कभी किन्हीं ने छोटे-मोटे प्रयास किए तो भारत की आत्मा उनके साथ खड़ी नहीं हो सकी।

स्वभावतः, जिस दुनिया में सारे लोग जीतने के लिए आतुर हों, उसमें भारत पिछड़ता चला गया। यह भी दिखाई पड़ेगा कि इस पिछड़ जाने में अब तक तो दुर्भाग्य रहा। लेकिन आगे सौभाग्य हो सकता है। क्योंकि वे जो जीत की दौड़ में

आगे गए थे, वे अपनी जीत के ही अंतिम परिणाम में वहां पहुंच गए हैं, जहां आत्मघात के सिवाय और कुछ भी नहीं हो सकता।

बुद्ध ने कहा था, वैर से वैर को नहीं जीता जा सकता और हिंसा से हिंसा भी नहीं जीती जा सकती।

लेकिन यह किसी ने भी सुना नहीं। सुना नहीं जा सकता था, समय नहीं था परिपक्व सुनने के लिए। आज यह बात सुनी जा सकती है। आज यह समझ में आना शुरु हो गया कि आज तो हिंसा का अर्थ है सार्वजनिक विनाश!

पिछले महायुद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी पर जो एटम गिराया गया था, उस समय विचारशील लोगों ने सोचा था, इससे खतरनाक अस्त्र अब पैदा नहीं हो सकेगा। लेकिन बीस ही वर्षों में उन विचारशीलों को पता चला कि आज हिरोशिमा और नागासाकी में गिराए गए एटम बम बच्चों के खिलौने मालूम पड़ते हैं। इतने बीस वर्षों में हमने बड़े अस्त्र पैदा कर लिए!

एक उदजन बम चालीस हजार वर्गमील में किसी तरह के जीवन को नहीं बचने देगा। और आज पृथ्वी पर पचास हजार उदजन बम तैयार हैं। ये पचास हजार उदजन बम जरूरत से ज्यादा हैं, सरप्लस हैं। अगर हम पूरी पृथ्वी को भी नष्ट करना चाहें तो थोड़े से बम से काम हो जाएगा, इतनों की जरूरत नहीं पड़ेगी। लेकिन राजनैतिज्ञ बहुत होशियार हैं। वे सोचते हैं, कोई भूल-चूक न हो जाए, इसलिए पूरा--और पूरा जरूरत से ज्यादा--इंतजाम कर लेना उचित है। पचास हजार उदजन बम इस तरह की सात पृथ्वियों को नष्ट करने के लिए काफी हैं। यह पृथ्वी बहुत छोटी है। या हम ऐसा समझ सकते हैं कि अभी मनुष्य-जाति की कुल संख्या साढ़े तीन अरब है, पच्चीस अरब लोगों को मारने के लिए हमने इंतजाम कर लिया है। या हम ऐसा भी समझ सकते हैं कि अगर एक-एक आदमी को सात-सात बार मारना पड़े तो हमारे पास सुविधा और व्यवस्था है। हालांकि आदमी एक ही बार में मर जाता है, दुबारा मारने की जरूरत नहीं पड़ती है। लेकिन भूल-चूक न हो जाए, इसलिए इंतजाम कर लेना ठीक से उचित और जरूरी है।

एक-एक आदमी को सात-सात बार मारने के इंतजाम का अर्थ क्या है? प्रयोजन क्या है? यह क्या पागल दौड़ है? क्या मनुष्य-जाति का मन विक्षिप्त हो गया है?

मनुष्य-जाति का मन निश्चित विक्षिप्त हो गया है, क्योंकि मनुष्य-जाति का पूरा का पूरा अब तक का विकास अकेले पुरुष का विकास है। पुरुष आधा है मनुष्य-जाति का। आधी स्त्री का उस विकास में कोई भी हाथ नहीं है! इसलिए संतुलन खो गया है, बैलेंस खो गया है।

यह दुनिया करीब-करीब ऐसी है, जैसे एक देश में स्त्रियां बिलकुल न हों, सिर्फ पुरुष ही पुरुष रह जाएं, तो वह देश पागल हो जाएगा। ठीक इससे उलटा भी हो जाएगा। अगर किसी देश में सिर्फ स्त्रियां ही स्त्रियां हों और पुरुष न हों, तो भी वह देश पागल हो जाएगा। स्त्री और पुरुष परिपूरक हैं। वे दोनों साथ हैं, तभी पूरे हैं। लेकिन सभ्यता के मामले में जो सभ्यता आज तक निर्मित हुई है, वह अकेले पुरुष की सभ्यता है, उसमें स्त्री का कोई योगदान नहीं है। स्त्री से कोई मांग भी नहीं की गई। स्त्री ने आगे बढ़ कर योगदान किया भी नहीं। यह पुरुष की सभ्यता पागल होने के करीब आ गई है।

एक छोटी सी कहानी से मैं समझाने की कोशिश करूं, जो मुझे बहुत प्रीतिकर रही है।

एक झूठी कहानी है। मैंने सुना है कि ईश्वर दूसरे महायुद्ध के बाद बहुत परेशान हो गया। ईश्वर तो तभी से परेशान है, जब से उसने आदमी को बनाया। जब तक आदमी नहीं था, बड़ी शांति थी दुनिया में। जब से आदमी को बनाया, तब से ईश्वर बहुत परेशान है। सुना तो मैंने यह है कि तब से वह ठीक से सो नहीं सका है बिना नींद की दवा लिए। सो भी नहीं सकता है। आदमी सोने दे तब! न आदमी खुद सोता है, न किसी और को सोने देता है। और इतने आदमी मिल कर ईश्वर को तो सोने कैसे देंगे! इसीलिए आदमी को बनाने के बाद ईश्वर ने फिर और कुछ नहीं बनाया। बनाने का काम ही बंद कर दिया। इतना घबड़ा गया होगा कि अब बस क्षमा चाहते हैं, अब आगे बनाना ठीक नहीं। दूसरे महायुद्ध के बाद वह घबड़ा गया होगा। ऐसे तो इतने युद्ध हुए हैं कि ईश्वर की छाती पर कितने घाव पड़े होंगे, कहना मुश्किल है। और सबसे बड़ा मजा

तो यह है कि हर घाव पहुंचाने वाला ईश्वर की प्रार्थना करके ही घाव पहुंचाता है। और मजा तो यह है कि हर युद्ध करने वाला ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हमें विजेता बनाना। चर्चों में घंटियां बजाई जाती हैं, मंदिरों में प्रार्थनाएं की जाती हैं--युद्धों में जीतने के लिए! पोप आशीर्वाद देते हैं--युद्धों में जीतने के लिए! ईश्वर की छाती पर जो घाव लगते होंगे, उन घावों का हिसाब लगाना मुश्किल है।

तीन हजार साल के इतिहास में पंद्रह हजार युद्ध हुए हैं। और आगे का पीछे का इतिहास तो पता नहीं है। हम यह मान नहीं सकते कि उसके पहले आदमी नहीं लड़ता रहा होगा। लड़ता ही रहा होगा। जब तीन हजार वर्षों में पंद्रह हजार युद्ध करता है आदमी, प्रतिवर्ष पांच युद्ध करता है, तो ऐसा मानना बहुत मुश्किल है कि उसके पहले वह शांत रहा होगा। इतना ही है कि उसके पहले का इतिहास हमें ज्ञात नहीं।

दूसरे महायुद्ध के बाद तो ईश्वर बहुत घबड़ा गया। क्योंकि पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोगों की हत्या हुई थी। दूसरे महायुद्ध में हत्या की संख्या साढ़े सात करोड़ पहुंच गई! क्या हो गया आदमी को? उसने दुनिया के तीन बड़े प्रतिनिधियों को अपने पास बुलाया--रूस को, अमेरिका को, ब्रिटेन को। और उनसे पूछा कि मैं तुम्हें वरदान देना चाहता हूं! तुम एक-एक वरदान मांग लो, ताकि यह दुनिया की पागल दौड़ बंद हो जाए। युद्ध बंद हो जाएं। आदमी बच सके। और फिर यह तो ठीक भी है, अगर आदमी यह तय करता हो कि हमें मरना है तो मर जाए। लेकिन अपने साथ सारे जीवन को नष्ट करने का तो कोई हक मनुष्य को नहीं है। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं!

ईश्वर से हमेशा प्रार्थना की गई थी, लेकिन समय बदल गया। कभी नाव नदी पर होती है, कभी नदी नाव पर हो जाती है! ईश्वर ने हाथ जोड़ कर घुटने टेक दिए उन तीनों के सामने कि हम प्रार्थना करते हैं, एक-एक वरदान मांग लो। तुम जो भी चाहते हो, मैं पूरा कर दूं।

अमेरिका के प्रतिनिधि ने कहा, हे महाप्रभु, एक ही इच्छा है हमारी, वह पूरी हो जाए, फिर दुनिया में कभी युद्ध नहीं होगा। रूस जमीन पर न बचे। उसका कोई निशान न रह जाए जमीन पर। इतना हम चाहते हैं। और हमारी कोई आकांक्षा नहीं।

ईश्वर ने घबड़ा कर रूस की तरफ देखा। जब अमेरिका यह कहता हो--धार्मिक देश! तो रूस क्या कहेगा?

रूस ने कहा, महाशय! या हो सकता है कहा हो, कामरेड! क्षमा करें। पहले तो मैं विश्वास नहीं करता कि आप हैं। कैपिटल पढ़ी है कार्ल माक्र्स की? कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो पढ़ा है एंजल्स और माक्र्स का? कितने जमाने पहले खबर कर दी उन्होंने कि भगवान नहीं है। और उन्नीस सौ सत्रह से रूस के गिरजों से आपको निकाल बाहर किया है। आप अब नहीं हैं। मुझे शक होता है कि या तो मैं वोदका शराब ज्यादा पी गया हूं, इसलिए आप दिखाई पड़ रहे हैं। और या यह भी हो सकता है कि मैं कोई सपना देख रहा हूं। लेकिन बड़ा आश्चर्यजनक कि सोवियत भूमि पर ऐसा धार्मिक सपना कैसे संभव हो पाता है! अगर सरकार को पता लग गया कि ऐसे धार्मिक सपने भी आदमी देखते हैं, तो सपने देखने पर भी पाबंदी हो जाएगी। सपने देखने की स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती आदमी को। गलत सपने देखने की स्वतंत्रता दी जा सकती है? रूस में नहीं दी जा सकती। चीन में नहीं दी जा सकती। लेकिन फिर भी मैं आपसे यह कहता हूं कि हो सकता है आप हों। एक सबूत दे दें अपने होने का, तो हम आपकी पूजा फिर शुरु कर देंगे--दीये जलेंगे, धूप जलेगी, मंदिरों में पूजा होगी, घंटियां बजेंगी--एक इच्छा पूरी कर दें। एक ही इच्छा है हमारी--दुनिया का नक्शा हो, लेकिन अमेरिका के लिए कोई रंग-रेखा उस नक्शे पर हम नहीं चाहते। और घबड़ाएं मत--क्योंकि ईश्वर घबड़ा गया होगा--घबड़ाएं मत! अगर आप न कर सकें तो फिकर मत करें, हमने खुद यह काम करने का पूरा इंतजाम कर लिया है। हम खुद भी कर लेंगे। हम आपके भरोसे पर नहीं कर रहे हैं यह इंतजाम। यह इंतजाम अपने पैरों पर किया है। और हमें इसकी भी कोई चिंता नहीं है कि अमेरिका को मिटाने में हम मिट जाएंगे। हम मिट जाएं, उसकी फिकर नहीं, लेकिन अमेरिका नहीं रहना चाहिए--यह हमारा कस्द है।

ईश्वर ने बहुत घबड़ा कर ब्रिटेन की तरफ देखा। और ब्रिटेन ने जो कहा, वह ध्यान से सुन लेना! ब्रिटेन ने कहा, हे परम पिता--चरणों पर सिर रख दिया, और कहा--हमारी कोई आकांक्षा नहीं, इन दोनों की आकांक्षाएं एक साथ पूरी कर दी जाएं, हमारी आकांक्षा पूरी हो जाएगी।

यह हमें हंसने जैसा मालूम होता है। लेकिन किस पर हंसते हैं हम--ब्रिटेन पर, अमेरिका पर, रूस पर, भगवान पर--किस पर हंसते हैं? या कि अपने पर, या कि मनुष्य पर, या कि मनुष्यता पर?

मनुष्य को क्या हुआ है? कौन सा रोग है उसके मन में? उसके प्राणों को कौन सी चीज खा रही है कि मिटाना, मिटाना, यही इसके प्राणों की पुकार बन गई है--मृत्यु और मृत्यु!

पुरुष जीतना चाहता है। और जीत उसको एक ही तरह सूझती है--मारने से, मृत्यु से, मिटाने से। पुरुष को सूझता ही नहीं कि मिटाने के अलावा भी कोई जीत होती है। उसे यह पता ही नहीं है कि मिटा कर कभी कोई जीता ही नहीं है। एक और जीत भी होती है, जो मिटाने से नहीं आती! उसे यह पता ही नहीं है कि एक और जीत भी होती है, जो हार जाने से आती है। यह पुरुष को पता ही नहीं है! एक ऐसी जीत भी हो सकती है, जो उसको मिलती है जो हार जाता है, जो लड़ता ही नहीं। इसका पुरुष को कोई भी पता नहीं। उसे पता हो भी नहीं सकता। उसके चित्त की पूरी की पूरी प्रकृति एग्रेसिव है, आक्रामक है। उसका एक ही खयाल है: दबो या दबाओ, हारो या जीतो। और जीतने की दौड़ में चाहे कुछ भी हो जाए--खुद मिटो, चाहे कोई मिट जाए--लेकिन जीतना जरूरी है।

लेकिन जीतना किसलिए जरूरी है? जीतना जीने के लिए जरूरी है, और जीतने में मौत लानी पड़ती है और जीना मुश्किल हो जाता है। अजीब चक्कर है! जीतना जीने के लिए जरूरी मालूम पड़ता है, और जीतने में मौत आती है और जीना मुश्किल हो जाता है।

लेकिन इसी विसियस सर्किल में, इसी दुष्टचक्र में पिछले तीन-चार हजार वर्ष का इतिहास आदमी का घूमते-घूमते आखिरी जगह, क्लाइमेक्स पर आ गया है, जहां कि विश्वयुद्ध की पूरी संभावना खड़ी हो गई है। या तो विश्वयुद्ध होगा और सारी मनुष्यता समाप्त होगी। और या फिर अब तक मनुष्य-जाति के दूसरे हिस्से ने कोई भी कंट्रीब्यूशन, कोई भी मनुष्य की सभ्यता को निर्माण करने में, मनुष्य को जीने में, सहयोग देने में, जो आधी दुनिया अब तक चुपचाप खड़ी रही है, उसे कुछ करना पड़ेगा। और एक नई सभ्यता को, जो पुरुष प्रधान न हो, एक नई सभ्यता को, जो स्त्री के हृदय और स्त्री के गुणों पर खड़ी होती हो, उसको जन्म देना पड़ेगा।

नीत्शे ने बहुत क्रोध से यह बात लिखी है कि मैं बुद्ध को और क्राइस्ट को स्त्रैण मानता हूं, वूमेनिश मानता हूं। यह उसने गाली दी है बुद्ध को और क्राइस्ट को। अगर वह गांधी को जानता होता तो वह गांधी के बाबत भी यही कहता कि ये तीनों के तीनों आदमी ठीक अर्थों में पुरुष नहीं हैं। और उसने यह सोचा होगा कि किसी पुरुष को स्त्री कह देने से और बड़ी गाली क्या हो सकती है?

लेकिन पुरुष होना ही आज--वह जो पुरुष की आज तक की प्रकृति रही है, उसमें होना आज--संकट, क्राइसिस पैदा कर दिया है। और आज खोजबीन करनी जरूरी है कि स्त्री के चित्त से क्या सभ्यता का आधार, मूल आधार रखा जा सकता है? क्या यह हो सकता है कि हम दूसरी तरफ भी देखें और ध्यान करें कि क्या उस तरफ से भी जीवन की नई दिशाएं, विकास के नये स्रोत, मनुष्यता का एक नया इतिहास रचा जा सकता है?

मुझे लगता है कि रचा जा सकता है। और अगर नहीं रचा जा सकता तो फिर पुरुष के हाथ में अब आगे कोई भविष्य नहीं है, वह अपने अंतिम चरण क्षण पर आ गया है।

लेकिन स्त्रियों को कोई खयाल नहीं है। या तो स्त्रियां गुलाम हैं पुरुष की और या स्त्रियां नंबर दो के पुरुष बनने की कोशिश में संलग्न हैं। दोनों ही हालतें बुरी हैं और स्लेवरी की हैं, गुलामी की हैं। भारत जैसे मुल्कों में स्त्रियों की अपनी कोई

आवाज नहीं, अपनी कोई आत्मा भी नहीं। भारत में स्त्री का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं। उसकी कोई पुकार नहीं। उसका कोई होना नहीं। वह न होने के बराबर है।

हालांकि पूरे देश का विचार कभी भी पुरुष चित्त के अनुकूल नहीं रहा, क्योंकि भारत को जिन लोगों ने प्रभावित किया, उन्होंने जीवन के बहुत कोमल गुणों पर जोर दिया--बुद्ध ने करुणा पर, महावीर ने अहिंसा पर। उन्होंने जोर दिया जीवन के प्रेम तत्व पर। लेकिन उनकी आवाज गूंज कर खोती रही। लेकिन यह किसी को खयाल नहीं आया कि यह आवाज अगर स्त्रियां पकड़ लेंगी तो ही सफल हो सकती है, अन्यथा यह आवाज सफल नहीं हो सकती।

अगर पुरुष प्रेम की बात भी करेगा तो अहिंसा से आगे नहीं जा सकता। और इसे थोड़ा समझ लेना। अहिंसा का मतलब होता है, हम हिंसा नहीं करेंगे। यह निगेटिव बात है। हम किसी को चोट नहीं पहुंचाएंगे। अहिंसा से आगे पुरुष का जाना मुश्किल है। वह या तो हिंसा कर सकता है या अहिंसा कर सकता है। लेकिन प्रेम का उसे सूझता ही नहीं! प्रेम पाजिटिव बात है। अहिंसा का मतलब है, हम दूसरे को दुख नहीं पहुंचाएंगे।

एक बात है कि हम दूसरे को दुख पहुंचाएंगे, यही हमारे जीवन का सूत्र होगा। चाहे दूसरे को कितना ही दुख पहुंचे, हम अपना सुख पाएंगे, यही जीवन की आधारशिला होगी। एक सूत्र तो यह है पुरुष का। फिर पुरुष अगर बहुत ही सोच-समझ और विचार का उपयोग करता है, तो वह इसके उलटे सूत्र पर पहुंचता है। वह कहता है, हम दूसरे को दुख नहीं पहुंचाएंगे।

लेकिन स्त्री का चित्त अहिंसा से राजी नहीं हो सकता। स्त्री का चित्त कहता है: प्रेम।

प्रेम का अर्थ है: हम दूसरे को सुख पहुंचाएंगे।

इसलिए अहिंसा ठीक अर्थों में हिंसा का विरोध नहीं है, सिर्फ हिंसा का अभाव है। हिंसा का ठीक विरोध प्रेम है। क्योंकि हिंसा कहती है: हम दूसरे को दुख पहुंचाएंगे, यही हमारे सुख का मार्ग है। प्रेम कहता है: हम दूसरे को सुख पहुंचाएंगे, यही हमारे सुख का मार्ग है। और अहिंसा बीच में है, अहिंसा कहती है: हम दूसरे को दुख नहीं पहुंचाएंगे। अहिंसा बहुत इम्पोटेंट है। अहिंसा बीच में अटक जाती है, बहुत आगे नहीं जाती। वह पुरुष को हिंसा करने से रोक लेती है, लेकिन प्रेम करने तक नहीं पहुंचाती।

तो हिंदुस्तान ने अहिंसा की तो बात की। लेकिन चूंकि पुरुषों ने बात की थी, वह भी बहुत थी कि वे अहिंसा तक की बात कर सके। पश्चिम के पुरुषों से उन्होंने एक कदम बहुत आगे उठाया। स्त्री के हृदय की तरफ एक कदम आगे बढ़ाया। लेकिन आखिर पुरुष कितने दूर जा सकते हैं? वह बात अहिंसा पर आकर अटक गई।

और मैंने ऐसा अनुभव किया है कि अगर पुरुष अहिंसा की भी बात करे तो बहुत जल्दी उसकी अहिंसा में भी हिंसा शुरु हो जाती है। अगर पुरुष सत्याग्रह भी करेगा, अगर पुरुष अनशन भी करेगा, तो वह अनशन भी दूसरे की गर्दन दबाने के उपाय की तरह करेगा। वह भी प्रेशर, वह भी दबाव होगा, वह भी जबरदस्ती होगी। अगर दस आदमी अनशन करेंगे किसी काम के लिए, तो वे धमकी दे रहे हैं कि हम मर जाएंगे, नहीं तो हमारी बात मानो! यह धमकी बहुत हिंसापूर्ण है। यह धमकी अहिंसक नहीं है। यह बहुत हिंसापूर्ण है। अहिंसा का भी हिंसात्मक उपयोग है यह।

मैंने सुना है कि ऐसा ही एक युवक एक युवती को प्रेम करता था। उसने जाकर उसके घर के सामने अहिंसक अनशन कर दिया--कि मुझसे विवाह करो, अन्यथा मैं भूखा मर जाऊंगा!

उस घर के लोग घबड़ा गए। क्योंकि अगर वह छुरा लेकर आता तो पुलिस में खबर कर देते। वह छुरा लेकर नहीं आया था। वह धमकी देकर आया था कि मैं मर जाऊंगा। उसने बोरिया-बिस्तर लगा कर द्वार के सामने बैठ गया। गांव में उसका प्रचार करने वाले लोग मिल गए। बेवकूफों का प्रचार करने वालों की कोई कमी नहीं है। उन्होंने जाकर गांव भर में खबर कर दी कि एक अहिंसक आंदोलन हो रहा है! एक युवक ने अपने प्राण बाजी पर लगा दिए हैं!

सारे गांव की सहानुभूति उस युवक के साथ होने लगी। जो भी मरता हो, उसके साथ सहानुभूति स्वाभाविक हो जाती है। घर के लोग बहुत घबड़ा गए। उन्होंने कहा, हम क्या करें? यह तो बड़ी मुसीबत हो गई! तो घर के लोगों को किसी परिचित ने सलाह दी कि गांव में एक और भी अहिंसक सत्याग्रह करने वाला अनुभवी व्यक्ति है, तुम उससे जाकर पूछो। उन्होंने जाकर सलाह ली। उसने कहा, घबड़ाओ मत, हर चीज का उपाय है। अहिंसात्मक धमकी का उपाय अहिंसात्मक ढंग से दिया जा सकता है। मैं रात आ जाऊंगा। घबड़ाओ मत।

वह रात एक बूढ़ी औरत को लेकर वहां पहुंच गया। और उस बूढ़ी औरत ने जाकर अपना बिस्तर लगा दिया और उस युवक से कहा कि मेरे हृदय में तेरे लिए भारी प्रेम का उदय हुआ है। मैं मर जाऊंगी, अगर तूने मुझ से विवाह नहीं किया! मैं अनशन शुरू करती हूं। यह आमरण अनशन है।

उस युवक ने सुना और अपना पेटी-बिस्तर लेकर वह रात भाग गया। स्वाभाविक है।

इस देश में यह हो रहा है। अहिंसा के नाम पर यही हो रहा है। हर आदमी अहिंसा के नाम पर हिंसा की धमकी देता है। आंध्र को अलग करो, नहीं तो आमरण अनशन करके मर जाएंगे! पंजाब को अलग करो, नहीं तो यह हो जाएगा! कोई भी आदमी धमकी दे रहा है।

यह बड़ी हैरानी की बात है कि गांधी ने अहिंसा की बात की और अहिंसा का पुरुष उपयोग बिलकुल हिंसात्मक ढंग से कर रहे हैं! किसी को कल्पना भी नहीं हो सकती कि पुरुष का मन ऐसा है कि उसके हाथ में जो भी हथियार आ जाएगा--चाहे तलवार और चाहे सत्याग्रह--वह दोनों का उपयोग हिंसात्मक ढंग से करेगा।

पुरुष के चित्त की बनावट आक्रामक है, हिंसात्मक है। और अब तक चूंकि सारी संस्कृति उसके आधार पर निर्मित हुई है, इसलिए सारी संस्कृति हिंसात्मक है।

क्या यह नहीं हो सकता कि स्त्री के हृदय की आवाज को भी इस संस्कृति के निर्माण में पत्थर बनाया जाए?

लेकिन स्त्री तो चुप है! या तो वह गुलाम है, जैसा मैंने कहा, या वह पुरुष होने की दौड़ में है।

पूरब की स्त्री गुलाम है। उसने कभी यह घोषणा ही नहीं की कि मेरे पास भी आत्मा है। वह चुपचाप पुरुष के पीछे चल पड़ती है।

अगर राम को सीता को फेंक देना है, तो सीता की कोई आवाज नहीं है। अगर राम कहते हैं कि मुझे शक है तेरे चरित्र पर, तो उसे आग में डाला जा सकता है।

यह बड़े मजे की बात है। यह किसी के खयाल में कभी नहीं आती कि सीता लंका में बंद थी, अकेली थी, तो राम को उसके चरित्र पर शक होता है। लेकिन सीता को राम के चरित्र पर शक नहीं होता--वे इतने दिन अकेले थे! और अगर अग्नि से गुजरना ही है तो राम को आगे और सीता को पीछे गुजरना चाहिए। जैसा कि हमेशा शादी-विवाह में राम आगे रहे और सीता पीछे रही, चक्कर लगाती रही। फिर आग में घुसते वक्त सीता अकेली आग में चली गई, राम बाहर खड़े निरीक्षण करते रहे। बड़े धोखे की बात मालूम पड़ती है!

और तीन-चार हजार वर्ष हो गए रामायण को लिखे, यह मैं आपसे पहली दफे कह रहा हूं। यह बात कभी नहीं उठाई गई कि राम की अग्नि-परीक्षा क्यों नहीं होती?

नहीं, पुरुष का तो सवाल ही नहीं है। ये सब सवाल स्त्री के लिए हैं।

स्त्री की कोई आत्मा नहीं, उसकी कोई आवाज नहीं। फिर यह अग्नि-परीक्षा से गुजरी हुई स्त्री भी एक दिन दूध में से मक्खी की तरह फेंक दी गई, तो भी कोई आवाज नहीं है! कोई आवाज नहीं है! और हिंदुस्तान भर की स्त्रियां राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहे चली जाएंगी; मंदिर में जाकर दीया घुमाती रहेंगी और पूजा-प्रार्थना करती रहेंगी।

राम की पूजा स्त्रियां करती रहेंगी! तो फिर स्त्रियों के पास कोई आत्मा नहीं है, कोई सोच-विचार नहीं है। सारे हिंदुस्तान की स्त्रियों को कहना था कि बहिष्कार हो गया राम का! कितने ही ऊंचे आदमी रहे होओगे, लेकिन बात खत्म हो गई। स्त्रियों के साथ भारी अपमान हो गया, भारी असम्मान हो गया।

लेकिन राम को स्त्रियां ही जिंदा रखे हैं। राम बहुत प्यारे आदमी हैं, बहुत अदभुत आदमी हैं, लेकिन राम को भी यह खयाल पैदा नहीं होता कि वे स्त्री के साथ क्या कर रहे हैं! वह हमारी कल्पना में नहीं है, वह हमारे खयाल में नहीं है।

युधिष्ठिर जैसा अदभुत आदमी द्रौपदी को जुए में दांव पर लगा देता है! फिर भी कोई यह नहीं कहता कि हम अब युधिष्ठिर को धर्मराज नहीं कहेंगे। नहीं, कोई यह नहीं कहता! बल्कि कोई कहेगा तो हम कहेंगे--अधार्मिक आदमी है, नास्तिक आदमी है, इसकी बात मत सुनो।

लेकिन स्त्री को जुए पर दांव पर लगाया जा सकता है, क्योंकि भारत में स्त्री संपदा है, संपत्ति है। हम हमेशा से कहते ही रहे हैं, स्त्री संपत्ति। शब्द भी उपयोग करते हैं: स्त्री संपत्ति। और इसीलिए तो पति को स्वामी कहते हैं। स्वामी का मतलब आप समझते हैं क्या होता है?

अगर हिंदुस्तान की स्त्री में थोड?ी भी अक्ल होगी तो एक-एक शब्दकोश से "स्वामी' को निकाल बाहर कर देना चाहिए। कोई पुरुष किसी स्त्री का स्वामी नहीं हो सकता। स्वामी का क्या मतलब होता है?

स्त्री दस्तखत करती है अपनी चिट्ठी में--आपकी दासी। और पतिदेव बहुत प्रसन्न होकर पढ़ते हैं, बड़े आनंदित होते हैं कि बड़ी प्रेम की बात लिखी है।

लेकिन इसका पता है कि स्वामी और दास में कभी प्रेम नहीं हो सकता। कैसे प्रेम हो सकता है? प्रेम की संभावना समान तल पर हो सकती है। स्वामी और दास में क्या प्रेम हो सकता है?

इसलिए हिंदुस्तान में प्रेम की संभावना ही समाप्त हो गई है। हिंदुस्तान में स्त्री-पुरुष साथ रह रहे हैं और उस साथ रहने को प्रेम समझ रहे हैं। वह प्रेम नहीं है। हिंदुस्तान में प्रेम का सरासर धोखा है। साथ रहना भर प्रेम नहीं है। किसी तरह कलह करके चौबीस घंटे गुजार देना प्रेम नहीं है। जिंदगी गुजार देनी प्रेम नहीं है। प्रेम की पुलक और है। प्रेम की प्रार्थना और है। प्रेम की सुगंध और है। प्रेम का संगीत और है।

लेकिन वह कहीं भी नहीं है! असल में, गुलाम में और दास में और मालिक में और स्वामी में कोई प्रेम नहीं हो सकता है। लेकिन हमारे खयाल में नहीं है यह बात कि पूरब की स्त्री ने--विशेषकर भारत की स्त्री ने--अपनी आत्मा का अधिकार ही स्वीकार नहीं किया है। आत्मा की आवाज भी नहीं दी है। उसने हिम्मत भी नहीं जुटाई कि वह कह सके--मैं भी हूं!

"अ' स्त्री को शादी करके ले आते हैं एक सज्जन। अगर उनका नाम कृष्णचंद्र मेहता है तो उनकी पत्नी मिसेज कृष्णचंद्र मेहता हो जाती है। लेकिन कभी उससे उलटा देखा कि इंदुमती मेहता को एक सज्जन प्रेम करके विवाह कर लाए हों और उनका नाम मिस्टर इंदुमती मेहता हो जाए? वह नहीं हो सकता। लेकिन क्यों नहीं हो सकता? नहीं, वह नहीं हो सकता, क्योंकि हमारी यह सिर्फ व्यवहार की बात नहीं है, उसके पीछे पूरा हमारे जीवन को देखने का ढंग छिपा हुआ है।

स्त्री पुरुष के पीछे आकर पुरुष का अंग हो जाती है, तो वह मिसेज हो जाती है। लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं होता! स्त्री पुरुष का आधा अंग है, लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं है! इसलिए पुरुष मरता है तो स्त्री को सती होना चाहिए, आग में जल जाना चाहिए। वह उसका अंग है, उसको बचने का हक कहां है? हिंदुस्तान में हजारों वर्षों में कितनी लाखों स्त्रियों को आग में जलाया है, उसका हिसाब लगाना बहुत मुश्किल है। बहुत मुश्किल है। और किस पीड़ा से उन स्त्रियों को गुजरना पड़ा है, इसका हिसाब लगाना मुश्किल है।

फिर भी बड़ी कृपा थी--जो आग में जल गईं उन स्त्रियों के लिए। लेकिन जब से आग में जलना बंद हो गया है तो करोड़ों विधवाओं को हम रोके हुए हैं। उनका जीवन आग में जलने से भी ज्यादा बदतर है। सती की प्रथा विधवा की प्रथा से ज्यादा बेहतर थी। आदमी एक बार में मर जाता है, खत्म हो जाता है। आखिर एक बार में मरना फिर भी बहुत दयापूर्ण है,

बजाय चालीस-पचास साल धीरे-धीरे मरने के, अपमानित होने के। और जिंदगी में जहां प्रेम की कोई संभावना न रह जाए, उस जीवन को जीवित कहने का क्या अर्थ है?

और यह ध्यान रहे कि पुरुष के लिए प्रेम चौबीस घंटे में आधी घड़ी, घड़ी भर की बात है। उसके लिए और बहुत काम हैं। प्रेम भी एक काम है। प्रेम से भी वह निपट कर जल्दी से दूसरे कामों में लग जाता है। स्त्री के लिए प्रेम ही एकमात्र काम है, वह उसकी चौबीस घंटे की जिंदगी है। वह और कामों में एक काम नहीं है। प्रेम ही एकमात्र काम है। और सारे काम उसी प्रेम से निकलते हैं और पैदा होते हैं।

तो अगर पुरुष को विधुर रखा जाए तो उतना टार्चर नहीं है वह, जितना स्त्री को विधवा रखना अत्याचार है। क्योंकि उसकी चौबीस घंटे प्रेम की जिंदगी है। प्रेम गया--कि उसकी जिंदगी में फिर कुछ भी नहीं रह गया। और दूसरे प्रेम की कोई संभावना समाज छोड़ता नहीं।

लेकिन हजारों साल तक हम उसको जलाते रहे और कभी किसी ने न सोचा! और अगर कोई पूछता था कि स्त्रियों को क्यों जलना चाहिए आग में? तो पुरुष कहते कि उसका प्रेम है, वही जी नहीं सकती पुरुष के बिना। लेकिन किसी पुरुष को प्रेम नहीं था इस मुल्क में कि वह किसी स्त्री के लिए सती हो जाता? वह सवाल नहीं है। वह सवाल नहीं है, वह सवाल ही नहीं उठाना चाहिए। क्योंकि सारे धर्मग्रंथ पुरुष लिखते हैं, अपने हिसाब से लिखते हैं, अपने स्वार्थ से लिखते हैं। स्त्रियों का लिखा हुआ न कोई धर्मग्रंथ है, न स्त्रियों का कोई मनु है, न स्त्रियों का कोई याज्ञवल्क्य है! स्त्रियों का कोई स्मृतिकार नहीं, स्त्रियों का कोई धर्मग्रंथ नहीं! स्त्रियों का कोई सूत्र नहीं! उनकी कोई आवाज नहीं! तो पूरब की स्त्री तो एक गुलाम छाया है, जो पति के आगे-पीछे घूमती रहती है।

पश्चिम की स्त्री ने विद्रोह किया है। और मैं कहता हूं कि अगर छाया ही बना रहना है, तो उससे बेहतर है वह विद्रोह। लेकिन वह विद्रोह बिलकुल गलत रास्ते पर चला गया। वह गलत रास्ता यह है कि पश्चिम की स्त्री ने विद्रोह का मतलब यह लिया है कि ठीक पुरुष जैसी वह भी खड़ी हो जाए! पुरुष जैसी हो जाए! तो पश्चिम की स्त्री पुरुष होने की दौड़ में पड़ गई। वह पुरुष जैसे वस्त्र पहनेगी, पुरुष जैसे बाल कटाएगी, पुरुष जैसे सिगरेट पीना चाहेगी, पुरुष जैसे सड़कों पर चलना चाहेगी, पुरुष जैसे अभद्र शब्दों का उपयोग करना चाहेगी। वह पुरुष के मुकाबले खड़ी हो जाना चाहती है।

एक लिहाज से फिर भी अच्छी बात है। कम से कम बगावत तो है। कम से कम हजारों साल की गुलामी को तोड़ने का खयाल तो है।

लेकिन गुलामी ही नहीं तोड़नी है; क्योंकि गुलामी तोड़ कर भी कोई कुएं से खाई में गिर सकता है। पश्चिम की स्त्री उसी हालत में खड़ी हो गई है। वह जितना अपने को पुरुष के जैसा बनाती जा रही है, उतना ही उसका व्यक्तित्व फिर खोता चला जा रहा है। भारत में वह छाया बन कर खत्म हो गई। पश्चिम में वह नंबर दो का पुरुष बन कर खत्म होती जा रही है। उसका अपना कोई व्यक्तित्व वहां भी नहीं रह जाएगा।

और यह ध्यान रहे, स्त्री के पास एक अपने तरह का व्यक्तित्व है, जो पुरुष से बहुत भिन्न, बहुत विरोधी, बहुत अलग, बहुत दूसरा है। उसका सारा आकर्षण, उसके जीवन की सारी सुगंध उसके अपने होने में है, उसके निज होने में है। अगर वह अपनी निजता के बिंदु से च्युत होती है और पुरुष जैसे होने की दौड़ में लग जाती है, तो यह बात उतनी ही बेहूदी होगी जैसे कोई पुरुष स्त्रियों के कपड़े पहन कर और दाढ़ी-मूंछ घुटा कर और स्त्रियों जैसा बन कर घूमने लगता है तो बेहूदा हो जाता है। यह बात उतनी ही बेहूदी है।

लेकिन पुरुष इसकी निंदा नहीं करेगा। पुरुष इसकी निंदा नहीं करेगा; क्योंकि स्त्रियां पुरुष जैसी हो रही हैं, पुरुष को क्या चिंता है? आपने हमेशा सुना होगा, अगर कोई पुरुष स्त्रियों जैसे ढंग से रहे तो लोग कहेंगे--नामर्द! उसकी निंदा होगी। लेकिन अगर कोई स्त्री पुरुषों जैसी रहे तो वे कहेंगे--खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी। इज्जत देंगे उसको। स्त्री अगर पुरुषों जैसे ढंग अख्तियार करे तो उसको इज्जत मिलेगी और पुरुष अगर स्त्रियों जैसे ढंग अख्तियार करे

तो उसका अपमान होगा। पुरुष को भी इसमें मजा आता है कि स्त्री पुरुष जैसे होने की कोशिश कर रही है। इसका अर्थ है कि उसने हमारी श्रेष्ठता फिर स्वीकार कर ली। कल तक वह पति के रूप में श्रेष्ठता स्वीकार करती थी, हम तब भी सुपीरियर थे, मालिक थे। अब भी हम सुपीरियर हैं, अब वह हमारे जैसे होने की कोशिश कर रही है।

और ध्यान रहे, स्त्री कितना ही पुरुष जैसी हो जाए, कार्बन कापी से ज्यादा नहीं हो सकती। कैसे हो सकती है? कैसे हो सकती है स्त्री पुरुष जैसी? और कार्बन कापी फिर छाया रह जाएगी। और यह बड़े मजे की बात है--हिंदुस्तान में पुरुष ने जबरदस्ती स्त्री को छाया बना दिया, पश्चिम की स्त्री अपने हाथ से मेहनत करके छाया बनी जा रही है।

क्या कोई तीसरा रास्ता नहीं है? ये दोनों बातें स्त्री जाति के लिए खतरनाक हैं। ये दोनों बातें प्रतिक्रियावादी हैं, रिएक्शनरी हैं। स्त्री की जिंदगी में एक क्रांति चाहिए। पश्चिम में क्रांति भटक गई और विद्रोह हो गई है। विद्रोह क्रांति नहीं है। बगावत क्रांति नहीं है।

क्रांति का मतलब है: एक नये व्यक्तित्व का उदघाटन।

बगावत का मतलब है: पुराने व्यक्तित्व को तोड़ देना है, इसकी बिना फिक्र किए कि नया व्यक्तित्व कुछ बनता है कि नहीं बनता है।

बगावत क्रोध है, क्रांति विचार है।

बगावत कर देना बहुत आसान है। क्रांति करना बहुत सोच-विचार और चिंतन की बात है।

भारत की स्त्री को भी पश्चिम की स्त्री की दौड़ पकड़ेगी, क्योंकि भारत के पुरुष को पश्चिम के पुरुष की दौड़ पकड़ी। उसी के पीछे स्त्री भी जाएगी। आज नहीं कल वह भी...और उसने होना शुरु कर दिया है, वह पुरुष के साथ पुरुष जैसा होने की दौड़ में वह शामिल हो गई है। आज नहीं कल भारत में भी वही होगा जो पश्चिम में हो रहा है। और पश्चिम में जो हो गया है वह इतना दुखद है कि अब भारत में उसको फिर दोहरा लेना, एक बहुत बढ़िया मौका खो देना है; एक परिवर्तन का, एक ट्रांजिशन का मौका खो देना है। एक बदलाहट का वक्त आया है और फिर बदलाहट में हम वही गलती किए ले रहे हैं--वही गलती जिसमें कुछ फर्क नहीं पड़ेगा, वही भूल फिर हो जाएगी।

सी.ई.एम.जोड ने कहीं लिखा है कि जब मैं पैदा हुआ, छोटा था, तो होम्स थे मेरे देश में, घर थे। अब सिर्फ हाउसेज हैं; अब सिर्फ मकान हैं।

स्वभावतः, अगर स्त्री पुरुष जैसी हो जाती है, तो होम जैसी चीज समाप्त हो जाएगी। घर जैसी चीज समाप्त हो जाएगी, मकान रह जाएंगे। मकान रह जाएंगे, क्योंकि मकान घर बनता था एक व्यक्तित्व से स्त्री के। वह खो गया। अब वह ठीक पुरुष जैसी कलह करती है, पुरुष जैसी झगड़ती है, पुरुष जैसी बात करती है, विवाद करती है। वह सब ठीक पुरुष जैसा कर रही है!

लेकिन उसे पता नहीं है कि उसकी आत्मा कभी भी यह करके तृप्त नहीं हो सकती। क्योंकि आत्मा तृप्त होती है वही होकर जो होने को आदमी पैदा हुआ है। एक गुलाब गुलाब बन जाता है तो तृप्ति आती है। एक चमेली चमेली बन जाती है तो तृप्ति आती है। वह तृप्ति फ्लावरिंग की है। जो हमारे भीतर छिपा है वह खिल जाए--पूरा खिल जाए--तो आनंद उपलब्ध होता है।

स्त्री आज तक कभी भी आनंदित नहीं रही, न पूरब के मुल्कों में, न पश्चिम के मुल्कों में। पूरब के मुल्कों में वह गुलाम थी, इसलिए आनंदित नहीं हो सकी; क्योंकि कोई आनंद बिना स्वतंत्रता के कभी उपलब्ध नहीं होता है। सारे आनंद के फूल स्वतंत्रता के आकाश में खिलते हैं।

और ध्यान रहे, अगर स्त्री आनंदित नहीं है तो पुरुष कभी आनंदित नहीं हो सकता है। वह लाख सिर पटके। क्योंकि समाज का आधा हिस्सा दुखी है। घर का केंद्र दुखी है। तो वह दुखी केंद्र अपने चारों तरफ दुख की किरणें फेंकता रहता है। और उस दुख के केंद्र की किरणों में सारा व्यक्तित्व समाज का दुखी हो जाता है। और मैं आपसे कहना चाहता हूं, जितना

दुख होता है, उतनी हिंसा शुरू हो जाती है। क्यों? क्योंकि दुखी आदमी दूसरे को दुखी करने को आतुर हो जाता है। दुखी आदमी फिर किसी को सुखी नहीं देखना चाहता। दुखी आदमी चाहता है, दूसरे को दुख दो! दुखी आदमी का एक ही सुख होता है, दूसरे को दुख देने का सुख।

स्त्री के दुख ने सारे समाज के जीवन को दुख की छाया से भर दिया है।

स्त्री आनंदित हो सकती है मुक्त होकर, लेकिन पुरुष होकर नहीं। मुक्त हो जाए और पुरुष जैसी होने लगे, फिर दुखी हो जाएगी। आज पश्चिम की स्त्री कोई सुखी नहीं है। वह फिर उसने नये दुख खोज लिए हैं। फिर नये दुखों में उसने अपने व्यक्तित्व को कस लिया है। और फिर समाज वहां एक नये तनाव में भरता चला जाएगा। क्या किया जा सकता है? कौन सी क्रांति?

मैं एक तीसरा सुझाव देना चाहता हूं। और वह यह कि एक वक्त है, इस वक्त मुल्क के सामने बदलाहट होगी। बदलाहट का समय है। अब स्त्री की गुलामी ज्यादा दिन नहीं चलेगी। हालांकि स्त्री की अभी भी कोई इच्छा नहीं है बहुत कि गुलामी टूट जाए। और पुरुष तो चाहेगा क्यों।

लेकिन सारी दुनिया की हवाएं धक्के दे रही हैं और गुलामी टूट रही है। भारत की स्त्रियां यह न सोचें कि उनके कुछ करने से गुलामी टूट रही है।

भारत बहुत अजीब देश है। सारी दुनिया की हवाएं बदलीं। उन्नीस सौ सैंतालीस में हम आजाद हो गए। हमने समझा कि हमने आजादी ले ली। वह हमने आजादी ली नहीं। वह दुनिया की हवाएं बदलीं, दुनिया का पूरा मौसम बदला, दुनिया में एक परिवर्तन का वक्त आया--आजादी हमें मिली। हिंदुस्तान के किसी नेता को पता भी नहीं था कि आजादी उन्नीस सौ सैंतालीस में मिल सकती है। कल्पना भी नहीं थी। आंदोलन तो हमारा बयालीस में खत्म हो गया था! और बड़ा भारी आंदोलन था, सात दिन में खत्म हो गया था! ऐसी महान क्रांति दुनिया में कभी नहीं हुई थी! वह सात दिन में खत्म हो गया था, उसके बाद हम ठंडे पड़ चुके थे। अब बीस साल तक कोई दुबारा जाने को जेल में राजी भी नहीं हो सकता था। अचानक आजादी आ गई, तो हमने कहा कि हमने आजादी ले ली! ठीक वैसे ही भारत की स्त्री की आजादी भी आ रही है। यह भूल में मत पड़ना कि वह आजादी ले रही है।

और ध्यान रहे, जो आजादी आती है उस आजादी में और जो आजादी ली जाती है उस आजादी में जमीन-आसमान का फर्क होता है। जो आजादी मिलती है वह मुर्दा होती है। वह कभी जिंदा नहीं हो सकती। भीख रहती है। और आजादी भी भीख में मिल सकती है?

इसीलिए इस मुल्क को जो आजादी मिली, वह मुर्दा आजादी है, बिलकुल डेड--उसमें कोई जिंदगी नहीं है। सड़ी हुई लाशों वाली आजादी है। इसलिए बीस साल से हम सड़ रहे हैं। उस आजादी से कोई पुलक नहीं आई जीवन में, न कोई नृत्य आया, न कोई खुशी आई, न कोई उत्साह आया, न कुछ ऐसा हुआ कि हम बदल दें अब जिंदगी को, हजारों साल के सिलसिले को तोड़ दें, नया मुल्क बनाएं, नया आदमी पैदा करें। वह कुछ भी पैदा नहीं हुआ। बस इतना हुआ कि हमने झंडा बदल दिया, दूसरा झंडा फहरा दिया और नेता बदल दिए। हालांकि सिर्फ शरीर बदला नेताओं का। उनकी बुद्धि वही रही, जो पिछले नेताओं की थी, जो पिछले हुकूमत करने वालों की थी। बुद्धि वही की वही रही। कपड़े बदल गए, वे शेरवानी पहन कर खड़े हो गए। हमको लगा कि सब भारतीय हो गए।

ठीक वैसी ही आजादी स्त्रियों के मामले में घटित हो रही है।

नहीं, यह ठीक नहीं हो रहा है। हिंदुस्तान की नारी को, हिंदुस्तान की स्त्री को आजादी लेनी है। क्योंकि मूल्य आजादी मिलने का नहीं है। वह जो लेने की प्रक्रिया है, उसी में आत्मा पैदा होती है। इसको ठीक से समझ लेना चाहिए। वह जो लेने की प्रक्रिया है, वह जो जद्दोजहद है, वह जो संघर्ष है, वह जो स्ट्रगल है, उस स्ट्रगल में लेने की ही आत्मा पैदा होती है।

आजादी मिलने से आत्मा पैदा नहीं होती। आजादी लेने की प्रक्रिया में से गुजरना ही आजाद आत्मा का पैदा हो जाना है। आजादी उसका परिणाम है। आजादी के परिणाम में आत्मा कभी पैदा नहीं होती। आत्मा पैदा हो जाए तो आजादी आती है।

लेकिन भारत की स्त्री के साथ भी वही हो रहा है। आजादी उस पर आ रही है, थोपी जा रही है। वह बेमन से उसको स्वीकार करती चली जा रही है। और धीरे-धीरे पश्चिम की हवाएं उसको पश्चिम की तरफ ले जाएंगी और एक मौका चूक जाएगा।

इस मौके को मैं बहुत क्रांति का अवसर कहता हूं। भारत की स्त्री को करना यह है कि पहले तो उसे स्पष्ट रूप से यह समझ लेना है कि पुरुष के व्यक्तित्व की शोध और खोज खत्म हो गई। पुरुष ने जो मार्ग पकड़ा था पांच-छह हजार वर्षों में, वह डेड एंड पर आ गया, अब उसके आगे कोई रास्ता नहीं है।

स्त्री को पहली दफे यह सोचना है कि क्या स्त्री भी एक नई संस्कृति को जन्म देने के आधार रख सकती है? कोई संस्कृति जहां युद्ध और हिंसा न हो। कोई संस्कृति जहां प्रेम, सहानुभूति और दया हो। कोई संस्कृति जो विजय के लिए बहुत आतुर न हो, जीने के लिए आतुर हो। जीने की आतुरता हो। जीवन को जीने की कला और जीवन को शांति से जीने की आस्था और निष्ठा पर खड़ी कोई संस्कृति स्त्री जन्म दे सकती है?

स्त्री जरूर जन्म दे सकती है।

आज तक चाहे युद्ध में कोई कितना ही मरा हो, स्त्री का मन निरंतर--प्राण उसके दुख से भरे रहे हैं। उसका भाई मरता है, बेटा मरता है, बाप मरता है, पति मरता है, प्रेमी मरता है। स्त्री का कोई न कोई युद्ध में जाकर मरता है। अगर सारी दुनिया की स्त्रियां एक बार तय कर लें--भाड़ में जाने दें रूस को और अमेरिका को--सारी दुनिया की स्त्रियां एक बार तय कर लें कि युद्ध नहीं होगा; दुनिया का कोई राजनीतिज्ञ युद्ध में कभी किसी को नहीं घसीट सकता। सिर्फ स्त्रियां तय कर लें कि युद्ध अब नहीं होगा, तो युद्ध नहीं हो सकता। क्योंकि कौन जाएगा युद्ध पर? कोई बेटा जाता है, कोई पति जाता है, कोई बाप जाता है। अगर स्त्रियां एक बार तय कर लें!

लेकिन स्त्रियां पागल हैं। युद्ध होता है तो वे टीका करती हैं कि जाओ युद्ध पर! पाकिस्तानी मां पाकिस्तानी बेटे के माथे पर टीका करती है कि जाओ युद्ध पर! हिंदुस्तानी मां हिंदुस्तानी बेटे के माथे पर टीका करती है कि जाओ बेटे, युद्ध पर जाओ!

पता चलता है कि स्त्री को कुछ पता नहीं कि क्या हो रहा है। वह पुरुष के पूरे जाल में सिर्फ एक खिलौना, हर जगह एक खिलौना बन जाती है। चाहे पाकिस्तानी बेटा मरता हो और चाहे हिंदुस्तानी, किसी मां का बेटा मरता है--यह स्त्री को समझना होगा। और चाहे रूस का पति मरता हो और चाहे अमेरिका का, स्त्री को समझना होगा, उसका पति मरता है।

और अगर सारी दुनिया की स्त्रियों को एक खयाल पैदा हो जाए कि अब हमें अपने पति को, अपने बेटे को, अपने बाप को युद्ध पर नहीं भेजना है, तो फिर पुरुष की लाख कोशिश और राजनीतिज्ञों की हर चेष्टा व्यर्थ हो सकती है। युद्ध नहीं हो सकता है। और यह स्त्री की इतनी बड़ी शक्ति है, लेकिन उसने उसका कभी कोई उपयोग नहीं किया। उसने कभी कोई आवाज नहीं दी, उसने कभी कोई फिक्र नहीं की। वह आदमी ने, पुरुष ने जो रेखाएं खींची हैं राष्ट्रों की, उनको वह भी मान लेती है।

प्रेम कोई रेखाएं नहीं मान सकता, हिंसा रेखाएं मानती है।

हम कहते हैं भारत माता! भारत माता जैसी कोई चीज दुनिया में नहीं है। अगर है भी कोई तो पृथ्वी माता जैसी कोई चीज हो सकती है। भारत माता पुरुष की ईजाद है! अपने हाथ से उसने कीलें ठोंक कर झंडे गाड़ लिए हैं और कहा है कि यह भारत अलग!

लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्त्री के मन में आज भी और हमेशा से कभी भी सीमा नहीं रही है, उस अर्थों में जिस अर्थों में पुरुष के मन में सीमा है। क्योंकि जहां भी प्रेम है, वहां सीमा नहीं होती।

सारी दुनिया की स्त्रियों को एक तो बुनियादी यह खयाल जाग जाना चाहिए कि हम एक नई संस्कृति को, एक नये समाज को, एक नई सभ्यता को जन्म दे सकते हैं--जो पुरुष के आधार हैं, उनके ठीक विपरीत आधार रख कर। भारत में यह बहुत सुविधा से हो सकता है। भारत में यह रुपांतरण बहुत आसानी से हो सकता है।

तो पहली तो बात यह है कि दुनिया की स्त्रियों की एक शक्ति और एक आवाज और एक आत्मा निर्मित होनी चाहिए। और वह आवाज दो तरह की बगावत करे। पुरुष की सारी संस्कृति को कहे कि गलत। और वह गलत है। अधूरी है और खतरनाक है।

दूसरी बात, स्त्री के मन में जो प्रेम है, उस प्रेम का भी पूरा विकास नहीं हो सका है। पुरुष ने उस पर भी दीवालें बांधी हैं। उस पर भी उसने कारागृह खड़ा किया है कि प्रेम की इतनी सीमा है, इससे आगे मत जाने देना। प्रेम से पुरुष बहुत भयभीत है। वह प्रेम पर पच्चीस रुकावटें डालता है, कारागृह बनाता है। उन कारागृहों ने दुनिया में स्त्रियों के प्रेम को विकसित नहीं होने दिया, फैलने नहीं दिया; उस सुगंध से दुनिया को भरने नहीं दिया। स्त्री को उस तरफ भी बगावत करनी जरूरी है कि वह कहे कि प्रेम पर सीमाएं हम तोड़ेंगे। प्रेम की कोई सीमा नहीं है और प्रेम की अपनी पवित्रता है। सारी सीमाएं उस पवित्रता को नष्ट करती हैं और गंदा करती हैं। उस सीमा को फैलाना है। उसकी सीमा बढ़नी चाहिए, फैलनी चाहिए।

और अगर वह फैलती है, तो जैसे पजेसिव पुरुष की एक प्रवृत्ति है पजेस करने की...। कभी आपने खयाल किया? पुरुष की सारी प्रवृत्ति है--इकट्ठा करो! मालिक बन जाओ! स्त्री की सारी प्रवृत्ति होती है--दे दो! मालकियत छोड़ दो, किसी को दे दो! स्त्री का सारा आनंद दे देने में है और पुरुष का सारा आनंद कब्जा कर लेने में है। यह कब्जा करने वाला पुरुष ही दुनिया में युद्ध का कारण बना है।

अगर दुनिया में कभी भी हमें एक गैर-युद्ध वाली दुनिया बनानी हो, तो ध्यान रखना पड़ेगा, इकट्ठा कर लेना, पजेस कर लेना, मालिक बन जाना, इसकी प्रवृत्ति की जगह दे देने की हिम्मत जुटानी पड़ेगी।

मैंने सुना है, एक छोटा सा गीत रवींद्रनाथ ने लिखा है। और मुझे बहुत प्रीतिकर लगी वह कहानी जो उस गीत में उन्होंने गाई है। गाया है कि एक भिखारी एक दिन सुबह अपने घर के बाहर निकला। त्यौहार का दिन है। आज गांव में बहुत भिक्षा मिलने की संभावना है। वह अपनी झोली में थोड़े से दाने डाल कर चावल के बाहर आया।

चावल के दाने उसने डाल लिए हैं अपनी झोली में। क्योंकि झोली अगर भरी दिखाई पड़े तो देने वाले को आसानी होती है, उसे लगता है कि किसी और ने भी दिया है। सब भिखारी अपने हाथ में पैसे घर से लेकर निकलते हैं, ताकि देने वाले को संकोच मालूम पड़े कि नहीं दिया तो अपमानित हो जाऊंगा, और लोग दे चुके हैं! आपकी दया...आपकी दया काम नहीं करती भिखारी को देने में। आपका अहंकार काम करता है--और लोग दे चुके हैं, अब मैं कैसे न दूं!

वह डाल कर निकला है थोड़े से दाने। थोड़े से दाने उसने डाल रखे हैं चावल के। बाहर निकला है। सूरज निकलने के करीब है। रास्ता सोया है। अभी लोग जाग रहे हैं। देखा है उसने, राजा का रथ आ रहा है! स्वर्ण-रथ, सूरज की रोशनी में चमकता हुआ! उसने कहा, धन्य भाग्य मेरे! भगवान को धन्यवाद! आज तक कभी राजा से भिक्षा नहीं मांग पाया, क्योंकि द्वारपाल बाहर से ही लौटा देते हैं। आज तो रास्ता रोक कर खड़ा हो जाऊंगा। आज तो झोली फैला दूंगा। और कहूंगा, महाराज! पहली दफे ही भिक्षा मांगता हूं। फिर सम्राट तो भिक्षा देंगे तो वह कोई ऐसी भिक्षा तो न होगी। जन्म-जन्म के लिए मेरे दुख पूरे हो जाएंगे। वह कल्पनाओं में खोकर खड़ा हो गया।

रथ आ गया। वह भिखारी अपनी झोली खोले, इससे पहले ही राजा नीचे उतर आया। राजा को देख कर भिखारी घबड़ा गया है और राजा ने अपनी झोली, अपना वस्त्र उस भिखारी के सामने कर दिया। तब तो वह बहुत घबड़ा गया। उसने कहा, आप! और झोली फैलाते हैं?

राजा ने कहा, ज्योतिषियों ने कहा है कि देश पर हमले का डर है। और अगर मैं जाकर आज राह पर भीख मांग लूं तो देश बच सकता है। तो पहला आदमी जो मुझे मिले, उसी से भीख मांगनी है। तुम्हीं पहले आदमी हो। कृपा करो, कुछ दान दे दो! राष्ट्र बच जाए।

उस भिखारी के तो प्राण निकल गए। उसने हमेशा मांगा था। दिया तो कभी भी नहीं था। देने की उसे कोई कल्पना ही नहीं थी। कैसे दिया जाता है, इसका कोई अनुभव न था। सब मांगता था। बस मांगता था। और देने की बात आ गई, तो उसके प्राण तो रुक ही गए! मिलने का तो सपना गिर ही गया। और देने की उलटी बात! उसने झोली में हाथ डाला। मुट्ठी भर दाने हैं वहां। भरता है मुट्ठी, छोड़ देता है। हिम्मत नहीं होती कि दे दे।

राजा ने कहा, कुछ तो दे दो! देश का खयाल करो! ऐसा मत करना कि मना कर दो। अन्यथा बहुत हानि हो जाएगी।

बामुश्किल, बहुत कठिनाई से एक दाना भर उसने निकाला और राजा के वस्त्र में डाल दिया। राजा रथ पर बैठा। रथ चला गया। धूल उड़ती रह गई। और साथ में दुख रह गया कि एक दाना अपने हाथ से आज देना पड़ा है। भिखारी का मन देने का नहीं होता। दिन भर भीख मांगी, बहुत भीख मिली, लेकिन चित्त में दुख वही बना रहा एक दाने का, जो दिया था।

कितना ही मिल जाए आदमी को, जो मिल जाता है उसका धन्यवाद नहीं होता, जो नहीं मिल पाया, जो छूट गया, जो नहीं है पास, उसकी पीड़ा होती है।

लौटा सांझ दुखी। इतना कभी नहीं मिला था! झोला लाकर पटका। पत्नी नाचने लगी। कहा, इतनी मिल गई भीख!

उसने कहा, नाच मत पागल! तुझे पता नहीं, एक दाना कम है, जो अपने पास हो सकता था।

फिर झोली खोली। सारे दाने गिर पड़े। फिर वह भिखारी छाती पीट कर रोने लगा। अब तक तो सिर्फ उदास था, अब रोने लगा। देखा कि दानों की उस कतार में, उस भीड़ में, उस ढेर में, एक दाना सोने का हो गया है! तब तो वह चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगा कि मैं अवसर चूक गया। बड़ी भूल हो गई। मैं सब दाने दे देता तो वे सब सोने के हो जाते। लेकिन कहां खोजूं अब उस राजा को? कहां जाऊं? कहां वह रथ मिलेगा? कहां राजा द्वार पर हाथ फैलाएगा? बड़ी मुश्किल हो गई। अब क्या होगा? अब क्या होगा? वह तड़फने लगा।

उसकी पत्नी ने कहा, तुझे पता नहीं, तुझे आज तक पता नहीं शायद कि जो हम देते हैं, वही स्वर्ण का हो जाता है। जो हम इकट्ठा कर लेते हैं, वह सदा मिट्टी का हो जाता है।

जो जानते हैं, वे गवाही देंगे इस बात की--कि जो दिया है, वही स्वर्ण का हो गया है।

मृत्यु के क्षण में आदमी को पता चलता है, जो रोक लिया था, वह पत्थर की तरह छाती पर बैठ गया है। जो दिया था, जो बांट दिया था, वह हलका कर गया है। वह पंख बन गया है। वह स्वर्ण हो गया है। वह दूर की यात्रा पर मार्ग बन गया है।

लेकिन स्त्री का पूरा व्यक्तित्व देने वाला व्यक्तित्व है।

और अब तक हमने जो दुनिया बनाई है, वह लेने वाले व्यक्तित्व की है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण पूंजीवाद है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण साम्राज्यशाही है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण युद्ध हैं, हिंसा है। क्या हम देने वाले व्यक्तित्व के आधार पर कोई समाज का निर्माण कर सकते हैं?

यह हो सकता है। लेकिन यह पुरुष नहीं कर सकेगा। यह स्त्री कर सकती है। और स्त्री सजग हो, कांशस हो, जागे, तो कोई भी कठिनाई नहीं है। एक क्रांति--बड़ी से बड़ी क्रांति--दुनिया में स्त्री को लानी है। वह यह कि एक प्रेम पर आधारित, देने वाली संस्कृति--जो मांगती नहीं, इकट्ठा नहीं करती, देती है--ऐसी एक संस्कृति निर्मित करनी है। ऐसी संस्कृति के निर्माण के लिए जो भी किया जा सके, वह सब...उस सबसे बड़ा धर्म स्त्री के सामने आज कोई और नहीं।

यह थोड़ी सी बात मैंने कही। पुरुष के संसार को बदल देना है आमूल। स्त्री के हृदय में जो छिपा है, उसकी छाया को फैलाना है, उस वृक्ष को बड़ा करना है, तो शायद एक अच्छी मनुष्यता का जन्म हो सकता है। स्त्री के जीवन और चेतना की क्रांति सारी मनुष्यता के लिए क्रांति बन सकती है।

कौन करेगा लेकिन यह?

स्त्रियां न सोचतीं, न विचारतीं। स्त्रियां न इकट्ठी हैं, न उनकी कोई सामूहिक आवाज है, न उनकी कोई आत्मा है! शायद पुरानी पीढ़ी नहीं कर सकेगी। लेकिन नई पीढ़ी की लड़कियां कुछ अगर हिम्मत जुटाएंगी और सिर्फ पुरुष होने की नकल और बेवकूफी में नहीं पड़ेंगी, तो यह क्रांति निश्चित हो सकती है। उनकी तरफ बहुत आशा से भर कर देखा जा सकता है।

मेरी ये बातें इतने प्रेम और शांति से सुनीं, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

युवक कौन

संभोग से समाधि की ओर-11

मेरे प्रिय आत्मन्!

युवकों के लिए कुछ भी बोलने के पहले यह ठीक से समझ लेना जरूरी है कि युवक का अर्थ क्या है?

युवक का कोई भी संबंध शरीर की अवस्था से नहीं है। उम्र से युवा होने का कोई भी संबंध नहीं है। बूढ़े भी युवा हो सकते हैं, और युवा भी बूढ़े हो सकते हैं। ऐसा कभी-कभी होता है कि बूढ़े युवा हों, ऐसा अक्सर होता है कि युवा बूढ़े होते हैं। और इस देश में तो युवक पैदा भी होते हैं, यह भी संदिग्ध बात है।

युवा होने का अर्थ है--चित्त की एक दशा, चित्त की एक जीवंत दशा, एक लिविंग स्टेट ऑफ माइंड।

बूढ़े होने का अर्थ है--चित्त की मरी हुई दशा।

इस देश में युवक पैदा ही शायद नहीं होते हैं, जब ऐसा मैं कहता हूं, तो मेरा अर्थ यही है कि हमारा चित्त जीवंत नहीं है। वह जो जीवन का उत्साह, वह जो जीवन का आनंद और जीवन का संगीत हमारी हृदय की वीणा पर होना चाहिए, वह नहीं है। आंखों में, प्राणों में, रोएं-रोएं में, वह जो जीवन को जीने की उद्दाम लालसा होनी चाहिए, वह हममें नहीं है। जीवन को जीएं, इसके पहले ही हम जीवन से उदास हो जाते हैं। जीवन को जानें, इसके पहले ही हम जीवन को जानने की जिज्ञासा की हत्या कर देते हैं।

मैंने सुना है, स्वर्ग के एक रेस्तरां में एक दिन सुबह एक छोटी सी घटना घट गई। उस रेस्तरां में तीन अदभुत लोग एक टेबल के आस-पास बैठे हुए थे--गौतम बुद्ध, कनफ्यूशियस और लाओत्से। वे तीनों स्वर्ग के रेस्तरां में बैठ कर गपशप करते थे। फिर एक अप्सरा जीवन का रस लेकर आई और उस अप्सरा ने कहा, जीवन का रस पीएंगे?

बुद्ध ने सुनते ही आंख बंद कर लीं और कहा, जीवन व्यर्थ है, असार है, कोई सार नहीं।

कनफ्यूशियस ने आधी आंखें बंद रखीं और आधी खुली--वह गोल्डन मीन को मानता था हमेशा, मध्य-मार्ग--उसने थोड़ी सी खुली आंखों से देखा और कहा, एक घूंट लेकर चखूंगा। अगर आगे भी पीने योग्य लगा तो विचार करूंगा। उसने थोड़ा सा जीवन-रस लेकर चखा और कहा, न पीने योग्य है, न छोड़ देने योग्य है; कोई सार भी नहीं, कोई असार भी नहीं। उसने मध्य की बात कही।

लाओत्से ने पूरी की पूरी सुराही हाथ में ले ली जीवन-रस की और कुछ कहे बिना पूरा पी गया। और तब नाचने लगा और कहने लगा, आश्चर्य कि गौतम बुद्ध तुमने बिना पीए ही इनकार कर दिया! और आश्चर्य कि कनफ्यूशियस तुमने थोड़ा सा चखा! लेकिन कुछ चीजें ऐसी हैं जो पूरी ही जानी जाएं तो ही जानी जा सकती हैं। थोड़े चखने से उनका कोई भी पता नहीं चलता।

अगर किसी कविता का एक छोटा सा टुकड़ा किसी को दे दिया जाए दो पंक्तियों का, तो उससे पूरी कविता के संबंध में कुछ भी पता नहीं चलता। एक उपन्यास का एक पन्ना फाड़ कर किसी को दे दिया जाए, तो उससे पूरे उपन्यास के संबंध में कोई भी पता नहीं चलता। कोई वीणा पर संगीत बजाता हो, उसका एक स्वर किसी को मिल जाए, तो उससे उस वीणाकार ने क्या बजाया था, इसका कुछ भी पता नहीं चलता। एक बड़े चित्र का छोटा सा टुकड़ा काट कर किसी को दे दिया जाए, तो उस बड़े चित्र में क्या है, उस छोटे से टुकड़े से कुछ भी पता नहीं चलता। कुछ चीजें हैं, जिनके स्वाद से कुछ पता नहीं चलता, जिन्हें तो उनकी समग्रता में, उनकी होलनेस में, उनकी टोटैलिटी में, उनकी समग्रता में ही जीना पड़ता है, तभी पता चलता है।

लाओत्से कहने लगा, नाच उठा हूं मैं। अदभुत था जीवन का रस।

और अगर जीवन का रस भी अदभुत नहीं है, तो फिर और अदभुत क्या होगा? जिनके लिए जीवन का रस भी व्यर्थ है, उनके लिए फिर सार्थकता कहां मिलेगी? फिर वे खोजें और खोजें। वे जितना खोजेंगे, उतना ही खोते चले जाएंगे। क्योंकि जीवन ही है एक सारभूत, जीवन ही है एक रस, जीवन ही है एक सत्य। उसमें ही छिपा है सारा सौंदर्य, सारा आनंद, सारा संगीत।

लेकिन भारत में युवक उस जीवन के उद्दाम वेग से आपूरित नहीं मालूम होते। और न ऐसा लगता है कि उनके जीवन में, उनके प्राणों में उन शिखरों को छूने की कोई आकांक्षा है, जो जीवन के शिखर हैं। न ऐसा लगता है कि उन अज्ञात सागरों को खोजने के लिए प्राणों में कोई उद्दाम पीड़ा है--उन सागरों को जो जीवन के सागर हैं। न जीवन के अंधेरे को, न जीवन के प्रकाश को, न जीवन की गहराई को, न जीवन की ऊंचाई को, न जीवन की हार को, न जीवन की जीत को, कुछ भी जानने का जो उद्दाम वेग, जो गति, जो ऊर्जा होनी चाहिए, वह युवक के पास नहीं है। इसलिए युवक भारत में है--ऐसा कहना केवल औपचारिकता है, फार्मेलिटी है। भारत में युवक नहीं है, भारत हजारों साल से बूढ़ा देश है। उसमें बूढ़े ही पैदा होते हैं, बूढ़े ही जीते हैं और बूढ़े ही मरते हैं। न बच्चे पैदा होते हैं, न जवान पैदा होते हैं।

हम इतने बूढ़े हो गए हैं कि अब हमारी जड़ें जीवन के रस को नहीं खींचतीं और न हमारी शाखाएं जीवन के आकाश में फैलती हैं और न हमारी शाखाओं में जीवन के पक्षी बसेरा करते हैं और न हमारी शाखाओं पर जीवन का सूरज ऊगता है और न जीवन का चांद चांदनी बरसाता है। सिर्फ धूल जमती जाती है, जड़ें सूखती जाती हैं, पत्ते कुम्हलाते जाते हैं; फूल पैदा नहीं होते, फल आते नहीं हैं। बस है, वृक्ष है। न उसमें पत्ते हैं, न फूल हैं; सूखी शाखाएं खड़ी रह गई हैं। ऐसा अभागा हो गया है देश!

जब युवकों के संबंध में कुछ बोलना हो तो पहली तो बात यही जान लेनी जरूरी है। युवक! युवक कोई शारीरिक अवस्था है, तब तो हमारे पास भी युवक हैं। युवक अगर कोई मानसिक दशा है, स्टेट ऑफ माइंड है, तो युवक हमारे पास नहीं हैं।

अगर युवक हमारे पास होते तो देश में इतनी गंदगी, इतनी सड़ांध, इतना सड़ा हुआ समाज जीवित रह सकता था? कभी की उन्होंने आग लगा दी होती। अगर युवक हमारे पास होते, एक हजार साल तक हम गुलाम रहते? कभी का गुलामी को उन्होंने उखाड़ फेंका होता। अगर युवक हमारे पास होते तो हम हजारों-हजारों साल तक दरिद्रता और दीनता और दुख में बिताते? हमने कभी की दरिद्रता मिटा दी होती या खुद मिट गए होते।

लेकिन नहीं, युवक शायद नहीं हैं। युवक हमारे पास होते तो इतना पाखंड, इतना अंधविश्वास, इतना सुपरस्टीशन चलता इस देश में? युवक बरदाश्त करते? एक-एक करोड़ रुपया यज्ञों में जलाने देते, युवक अगर मुल्क के पास होते? और अब मैं सुनता हूं कि और भी करोड़ों रुपयों को जलाने का इंतजाम करने के लिए साधु-संन्यासी लालायित हैं। और युवक ही जाकर चंदा इकट्ठा करेंगे और वालंटियर बन कर उस यज्ञ को करवाएंगे, जहां देश की संपत्ति जलेगी निपट गंवारी में!

अगर युवक मुल्क में होते तो ऐसे लोगों को क्रिमिनल्स कह कर, पकड़ कर अदालतों में खड़ा किया होता, जो मुल्क की संपत्ति को इस भांति बर्बाद करते हों। एक करोड़ रुपये की संपत्ति जलाने में जो आदमी जितना अपराधी हो जाता है, उससे भी ज्यादा अपराधी एक करोड़ रुपया यज्ञ में जलाने से होता है। क्योंकि एक करोड़ रुपये की संपत्ति को जलाने वाला थोड़ा-बहुत अपराध भी अनुभव करेगा। यज्ञ में जलाने वाला पॉयस क्रिमिनल है, पवित्र अपराधी है! उसको अपराध भी मालूम नहीं पड़ता है।

लेकिन युवक मुल्क में नहीं हैं, इसलिए किसी भी तरह की मूढ़ता चलती है, इसलिए मुल्क में किसी भी तरह का अंधकार चलता है। युवकों के होने का सबूत नहीं मिलता देश को देख कर! क्या चल रहा है देश में? युवक किसी भी चीज पर राजी हो जाते हुए मालूम पड़ते हैं!

वह युवक कैसा जिसके भीतर विद्रोह न हो, रिबेलियन न हो? युवक होने का मतलब क्या हुआ उसके भीतर? जो गलत के सामने झुक जाता हो, उसको युवक कैसे कहें?

जो टूट जाता हो लेकिन झुकता न हो, जो मिट जाता हो लेकिन गलत को बरदाश्त न करता हो, वैसी स्प्रिट, वैसी चेतना का नाम ही युवक होना है। टु बी यंग--युवा होने का एक ही मतलब है--वैसी आत्मा विद्रोही की, जो झुकना नहीं जानती, टूटना जानती है; जो बदलना चाहती है, जो जिंदगी को नई दिशाओं में, नये आयामों में ले जाना चाहती है, जो जिंदगी को परिवर्तन करना चाहती है। क्रांति की यह उद्दाम आकांक्षा ही युवा होने का लक्षण है।

कहां है क्रांति की उद्दाम आकांक्षा?

एक विचारक भारत आया था, काउंट कैसरलेन। लौट कर उसने एक किताब लिखी है। उस किताब को मैं पढ़ता था तो मुझे बहुत हैरानी होने लगी। उसने एक वाक्य लिखा है, जो मेरी समझ के बाहर हो गया; क्योंकि वाक्य कुछ ऐसा मालूम पड़ता था जो कि कंट्राडिक्टरी है, विरोधाभासी है। फिर मैंने सोचा, छापेखाने की कोई भूल हो गई होगी। तो खयाल आया कि किताब जर्मनी में छपी है। जर्मनी में छापेखाने की भूलें तो होती नहीं। वह तो हमारे ही देश में होती हैं। यहां तो किताब छपती है, उसके ऊपर पांच-छह पन्ने की भूल-सुधार वह छपा रहता है। और उन पांच-छह पन्नों को भी गौर से पढ़िए तो उसमें भी भूलें मिल जाएंगी! वह किताब जर्मनी में छपी है, भूल नहीं हो सकती।

फिर मैंने गौर से पढ़ा, फिर बार-बार सोचा, फिर खयाल में आया--भूल नहीं की है, उस आदमी ने मजाक की है। उसने लिखा है कि मैं हिंदुस्तान गया। मैं एक नतीजा लेकर वापस आया हूं: इंडिया इज़ ए रिच कंट्री, व्हेअर पुअर पीपुल लिव। हिंदुस्तान एक अमीर देश है, जहां गरीब आदमी रहते हैं!

मैं बहुत हैरान हुआ, यह कैसी बात है! अगर देश अमीर है तो गरीब आदमी क्यों रहते हैं वहां? और देश अगर अमीर है तो वहां के लोग गरीब क्यों हैं?

लेकिन वह मजाक कर रहा है। वह यह कह रहा है कि हिंदुस्तान के पास जवानी नहीं है, जो कि देश के छिपे हुए धन को प्रकट कर दे और देश को धनवान बना दे। देश में धन छिपा हुआ है, लेकिन देश बूढ़ा है। बूढ़ा कुछ कर नहीं सकता। धन खदानों में पड़ा रह जाता है, बूढ़ा भूखा मरता रहता है। धन जमीन में दबा रह जाता है, बूढ़ा भूखा मरता रहता है! देश बूढ़ा है, इसलिए गरीब है। देश जवान हो तो गरीब होने का कोई कारण नहीं है। देश के पास क्या कमी है?

लेकिन अगर हमें कुछ सूझता है तो हमें एक ही बात सूझती है कि जाओ दुनिया में भीख मांगो। जाओ अमेरिका, जाओ रूस, हाथ फैलाओ सारी दुनिया में। भिखारी होने में हमें शर्म भी नहीं आती, हम जवान हैं? रास्ते पर एक जवान आदमी, स्वस्थ आदमी भीख मांगता हो तो हम उससे कहते हैं कि जवान होकर भीख मांगते हो? और हम कभी नहीं सोचते कि हमारा पूरा मुल्क सारी दुनिया में भीख मांग रहा है तो हमें जवान होने का हक रह जाता है?

सड़क पर भीख मांगते आदमी से कोई भी कह देता है: जवान होकर भीख मांगते हो? हम जानते हैं कि जवान होकर भीख मांगना लज्जा से भरी हुई बात है, अपमानजनक है। जवान को पैदा करना चाहिए। हां, बूढ़ा भीख मांगता हो तो हम क्षमा कर सकते हैं, अब उससे आशा नहीं पैदा करने की।

सारी दुनिया में हम भीख मांग रहे हैं! उन्नीस सौ सैंतालीस के बाद अगर हमने कोई महान कार्य किया है तो वह यही कि हमने सारी दुनिया में भीख मांगने में सफलता पाई है। शर्म भी नहीं आती हमें! दुनिया क्या सोचती होगी कि कितना बूढ़ा देश है, कुछ कर नहीं सकता, सिर्फ भीख मांग सकता है!

लेकिन उन्हें पता नहीं है कि हम पहले से ही पैदा करने की बजाय भीख मांगने को आदर देते रहे हैं। हिंदुस्तान में जो भीख मांगता है, वह आदृत है उससे, जो पैदा करता है। ब्राह्मण हजारों साल तक देश में आदृत रहे हैं सिर्फ इसलिए कि वे पैदा नहीं करते और भीख मांगते हैं।

और हिंदुस्तान ने बड़े-बड़े भिखारी पैदा किए हैं, महापुरुष--बुद्ध से लेकर विनोबा तक--सब भीख मांगने वाले महापुरुष! और अगर सारा मुल्क भीख मांगने लगा तो हर्ज क्या है? हम सब महापुरुष हो गए हैं! महापुरुषों का देश है, सारा देश महापुरुष हो गया है। हम सारी दुनिया में भीख मांग रहे हैं। भिक्षावृत्ति बड़ी धार्मिक वृत्ति है!

पैदा करने में हिंसा भी होती है, पैदा करने में श्रम भी उठाना पड़ता है। और फिर हम पैदा क्यों करें? जब भगवान ने हमें पैदा कर दिया है तो भगवान इंतजाम करे! जिसने चोंच दी है, वह चून भी देता है, देगा! हम अपनी चोंच को हिलाते फिरेंगे सारी दुनिया में कि चून दो, क्योंकि क्यों हमें पैदा किया है? और जो हमें भीख देंगे, उनको हम गालियां देंगे कि तुम भौतिकवादी हो--यू मैटीरियलिस्ट! तुम भौतिकवाद में मरे जा रहे हो, हम आध्यात्मिक लोग हैं! हम इतने आध्यात्मिक हैं कि हम पैदा भी नहीं करते; सिर्फ खाते हैं। खाना आध्यात्मिक काम है, पैदा करना भौतिक काम है। भोगना आध्यात्मिक काम है। श्रम करना? श्रम आध्यात्मिक लोग कभी नहीं करते। महात्मा कभी श्रम करते हैं? महात्मा कभी श्रम नहीं करते, हीन आत्माएं श्रम करती हैं। महात्मा भोग करते हैं। पूरा देश महात्मा हो गया है!

उन्नीस सौ बासठ में चीन में अकाल की हालत थी। ब्रिटेन के कुछ भलेमानुसों ने एक बड़े जहाज पर बहुत सा सामान, बहुत सा भोजन, कपड़े, दवाइयां भर कर वहां भेजे।

हम अगर होते तो चंदन-तिलक लगा कर, फूलमालाएं पहना कर उस जहाज की पूजा करते। लेकिन चीन ने उसको वापस भेज दिया और जहाज पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिख दिया: हम मर जाना पसंद करेंगे, लेकिन भीख स्वीकार नहीं कर सकते।

शक होता है कि यहां कुछ जवान लोग होंगे!

जवान ही यह हिम्मत कर सकता है कि भूखे मरते देश में, आया हो भोजन बाहर से, और लिख दे जहाज पर कि हम भूखों मर सकते हैं, लेकिन भीख नहीं मांग सकते।

भूखा मरना इतना बुरा नहीं है, भीख मांगना बहुत बुरा है।

लेकिन जवानी हो तो बुरा लगे, भीतर जवान खून हो तो चोट लगे, अपमान हो। हमारा अपमान ही नहीं होता! हम तो शांति से अपमान को झेलते चले जाते हैं। हम बड़े तटस्थ हैं अपमान को झेलने में, कुछ भी हो जाए, हम आंख बंद करके झेल लेते हैं। यही तो संतोष का, शांति का लक्षण है कि जो भी हो, उसको झेलते रहो, बैठे रहो चुपचाप और झेलते रहो। हजारों साल से देश झेल-झेल कर मर गया है। तो कैसे हम स्वीकार कर लें कि देश के पास जवान आदमी हैं, युवक हैं? युवक देश के पास नहीं हैं।

और इसलिए पहला काम तथाकथित युवकों के लिए--जो उम्र से युवक दिखाई पड़ते हैं--वह यह है कि वे मानसिक यौवन को पैदा करने की देश में चेष्टा करें। वे शरीर के यौवन को मान कर तृप्त न हो जाएं। आत्मिक यौवन, वह स्प्रिचुअल यंगनेस पैदा करने का एक आंदोलन सारे देश में चलना चाहिए। हम इससे राजी नहीं होंगे कि एक आदमी शक्ल-सूरत से जवान दिखाई पड़ता है तो हम उसे जवान मान लें। हम इसकी फिक्र करेंगे कि हिंदुस्तान के पास जवान आत्मा हो।

स्वामी राम भारत के बाहर यात्रा को पहली दफा गए थे। जिस जहाज पर वे यात्रा कर रहे थे, उस पर एक बूढ़ा जर्मन था, जिसकी उम्र कोई नब्बे वर्ष होगी। उसके सारे बाल सफेद हो चुके थे, उसकी आंखों में नब्बे साल की स्मृतियों ने गहराइयां भर दी थीं, उसके चेहरे पर झुर्रियां थीं लंबे अनुभवों की। लेकिन वह जहाज के डेक पर बैठ कर चीनी भाषा सीख रहा था!

चीनी भाषा सीखनी साधारण मामला नहीं है, क्योंकि चीनी भाषा के पास कोई वर्णमाला नहीं है, कोई अ ब स नहीं होता चीनी भाषा के पास। वह पिक्टोरियल लैंग्वेज है, उसके पास तो चित्र हैं। साधारण आदमी को साधारण ज्ञान के लिए भी कम से कम पांच हजार चित्रों का ज्ञान चाहिए। और विशेष ज्ञान के लिए तो एक लाख चित्रों का ज्ञान हो, तब कोई

आदमी चीनी भाषा का पंडित हो सकता है। दस वर्ष, पंद्रह वर्ष का श्रम मांगती है वह भाषा। नब्बे साल का बूढ़ा सुबह से बैठ कर सांझ तक चीनी भाषा सीख रहा है!

रामतीर्थ बेचैन हो गए। यह आदमी पागल है! नब्बे साल की उम्र में चीनी भाषा सीखने बैठे हो, कब सीख पाओगे? आशा नहीं है कि मरने के पहले सीख जाओ। और अगर कोई दूर की कल्पना भी करे कि यह आदमी जी जाएगा दस-पंद्रह साल, सौ साल पार कर जाएगा, जो कि भारतीय कभी कल्पना नहीं कर सकता कि सौ कैसे पार कर जाओगे। पैंतीस साल पार करना तो मुश्किल हो जाता है, सौ कैसे पार करोगे? लेकिन समझ लें भूल-चूक से भगवान की, यह सौ साल के पार निकल जाए, तो भी फायदा क्या है? जिस भाषा को सीखने में पंद्रह वर्ष खर्च हों, उसका उपयोग भी तो दस-पच्चीस वर्ष करने का मौका मिलना चाहिए। सीख कर भी फायदा क्या होगा? दोत्तीन दिन देख कर रामतीर्थ की बेचैनी बढ़ गई। वह बूढ़ा तो आंख उठा कर भी नहीं देखता था कि कहां क्या हो रहा है, वह तो अपना सीखने में लगा था। तीसरे दिन उन्होंने जाकर उसे हिलाया और कहा कि महाशय, क्षमा करिए, मैं यह पूछना चाहता हूं कि आप यह क्या कर रहे हैं? इस उम्र में चीनी भाषा सीखने बैठे हैं? कब सीख पाइएगा? और सीख भी लिया तो इसका उपयोग कब करिएगा? आपकी उम्र क्या है?

तो उस बूढ़े ने कहा, उम्र? मैं काम में इतना व्यस्त रहा कि उम्र का हिसाब रखने का मुझे मौका नहीं मिला। उम्र अपना हिसाब रखती होगी। हमें फुर्सत कहां है कि हम उम्र का हिसाब रखें! और फायदा क्या है उम्र का हिसाब रखने में? मौत जब आनी है, तब आनी है। तुम चाहे कितना ही हिसाब रखो, कि कितने हो गए, कितने हो गए, उससे कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। मुझे फुर्सत नहीं मिली उम्र का हिसाब रखने की। लेकिन जरूर नब्बे तो पार कर गया हूं।

रामतीर्थ ने कहा, फिर यह सीख कर क्या फायदा? बूढ़े हो गए हो। अब कब सीख पाओगे?

उस बूढ़े आदमी ने क्या कहा? उस बूढ़े आदमी ने कहा, मरने का मुझे खयाल नहीं आता जब तक मैं सीख रहा हूं; जब सीखना खत्म हो जाएगा तब सोचूंगा मरने की बात। अभी तो सीखने में जिंदगी लगी है। अभी तो मैं बच्चा हूं, क्योंकि मैं सीख रहा हूं। बच्चे सीखते हैं। लेकिन उस बूढ़े ने कहा कि मैं चूंकि सीख रहा हूं, इसलिए बच्चा हूं।

यह आध्यात्मिक जगत में परिवर्तन हो गया। उसने कहा कि चूंकि अभी मैं सीख रहा हूं और अभी सीख नहीं पाया, अभी तो जिंदगी की पाठशाला में प्रवेश किया है, अभी तो बच्चा हूं, अभी मरने का कैसे सोचूं? जब सब सीख लूंगा, तो सोचूंगा मरने की बात।

फिर उस बूढ़े ने कहा, मौत तो हर रोज सामने खड़ी है। जिस दिन पैदा हुआ था, उस दिन भी इतनी ही सामने खड़ी थी, जितनी अभी खड़ी है। अगर मौत से डर जाता तो उसी दिन सीखना बंद कर देता। सीखने का क्या फायदा था, मौत आ सकती थी कल। लेकिन नब्बे साल का अनुभव मेरा कहता है कि मैं नब्बे साल मौत को जीता हूं। रोज मौत का डर रहा है कि कल आ जाएगी, लेकिन आई नहीं। नब्बे साल तक मौत नहीं आई तो मुझे विश्वास पड़ता है कि नब्बे साल के अनुभव को मानूं, कल भी कैसे आ पाएगी? नब्बे साल का अनुभव कहता है कि अब तक नहीं आई तो कल भी कैसे आ पाएगी? अनुभव को मानता हूं। नब्बे साल तक डर फिजूल था।

वह बूढ़ा पूछने लगा रामतीर्थ से कि आपकी उम्र क्या है?

रामतीर्थ तो घबरा ही गए थे उसकी बात सुन कर। उनकी उम्र केवल तीस वर्ष थी।

उस बूढ़े ने कहा, तुम्हें देख कर, तुम्हारे भय को देख कर मैं कह सकता हूं कि भारत बूढ़ा क्यों हो गया है। तीस साल का आदमी मौत की सोच रहा है! मर गया। मौत की सोचता ही कोई तब है, जब मर जाता है। तीस साल का आदमी सोचता है कि सीखने से क्या फायदा, मौत करीब आ रही है! यह आदमी जवान नहीं रहा।

उस बूढ़े ने कहा, मैं समझ गया कि भारत बूढ़ा क्यों हो गया है। इन्हीं गलत धारणाओं के कारण।

भारत को एक युवा अध्यात्म चाहिए। युवा अध्यात्म! बूढ़ा अध्यात्म हमारे पास बहुत है। हमारे पास ऐसा अध्यात्म है, जो बूढ़ा करने की कीमिया है, केमिस्ट्री है। हमारे पास ऐसी आध्यात्मिक तरकीबें हैं कि किसी भी जवान के आस-पास उन तरकीबों का उपयोग करो, वह फौरन बूढ़ा हो जाएगा। हमने बूढ़े होने का राज खोज लिया है, सीक्रेट खोज लिया है।

बूढ़े होने के राज क्या हैं?

बूढ़े होने का राज है: जीवन पर ध्यान मत रखो, मौत पर ध्यान रखो। पहला सीक्रेट। जिंदगी पर ध्यान मत देना, ध्यान रखना मौत का। जिंदगी की खोज मत करना, खोज करना मोक्ष की। इस पृथ्वी की फिक्र मत करना, फिक्र करना परलोक की, स्वर्ग की। यह बूढ़े होने का पहला सीक्रेट है। जिन-जिन को बूढ़ा होना हो, इसको नोट कर लें। कभी जिंदगी की तरफ मत देखना। अगर फूल खिल रहा हो, तो तुम खिलते फूल की तरफ मत देखना, तुम बैठ कर सोचना कि जल्दी ही यह मुरझा जाएगा। यह तरकीब है।

अगर एक गुलाब के पौधे के पास खड़े हो, तो फूलों की गिनती मत करना, कांटों की गिनती कर लेना--कि सब असार है, कांटे ही कांटे पैदा होते हैं। एक फूल खिलता है मुश्किल से हजार कांटों में। हजार कांटों की गिनती कर लेना। उससे जिंदगी असार सिद्ध करने में बड़ी आसानी मिलेगी।

अगर दिन और रात को देखो, तो ऐसा कभी मत देखना कि दो दिनों के बीच में एक रात है; हमेशा ऐसा देखना कि दो रातों के बीच में एक छोटा सा दिन है। बूढ़े होने की तरकीब कह रहा हूं। जिंदगी में जहां-जहां अंधेरा हो, उसको मैग्नीफाई करना। बड़ा दिखाने वाला कांच अपने पास रखना, जहां अंधेरा दिखाई पड़े, फौरन मैग्नीफाई ग्लास लगा देना, बड़ा भारी अंधेरा देखना। और जहां रोशनी दिखाई पड़े, वहां छोटा कर देने वाला ग्लास अपने पास रखना, जो जल्दी से रोशनी को छोटा कर दे। जहां फूल दिखाई पड़ें, गिनती मत करना, फौरन सोच लेना कि फूल! क्या रखा है फूल में? क्षणभंगुर है, अभी खिला है, अभी मुरझा जाएगा। कांटा! कांटा स्थायी है, शाश्वत है, सनातन है; न कभी खिलता है, न कभी मुरझाता है। हमेशा है, इन बातों पर ध्यान देने से आदमी बड़ी जल्दी बूढ़ा हो जाता है।

मैंने सुना है कि न्यूयार्क की एक सौवीं मंजिल से एक आदमी गिर रहा था। सौवीं मंजिल से वह आदमी गिर रहा था, जब वह पचासवीं मंजिल के पास से गुजर रहा था खिड़की के, तो एक आदमी ने झांक कर उससे चिल्ला कर पूछा कि दोस्त क्या हाल हैं?

उसने कहा, अभी तक तो सब ठीक है।

यह आदमी गड़बड़ आदमी है। यह आदमी जवान होने का ढंग जानता है। लेकिन यह ठीक नहीं है। उस आदमी ने कहा, अभी तक सब ठीक है। अभी जमीन तक पहुंचे नहीं हैं, जब पहुंचेंगे तब देखेंगे। अभी पचासवीं खिड़की तक सब ठीक चल रहा है--ओ के! यह आदमी जवान होने की तरकीब जानता है।

लेकिन हमको ऐसी तरकीबें कभी नहीं सीखनी चाहिए। हमें तो बूढ़े होने के रास्ते पर चलना चाहिए। बूढ़े होने का रास्ता--पहली बात, कभी जिंदगी में जो सुंदर हो उसकी तरफ ध्यान मत देना, जो असुंदर हो उसको खोजबीन करना। अगर किसी गांव में आप जाएं और कोई आदमी आकर कहे कि फलां आदमी बहुत बड़ा संगीतज्ञ है, इतनी अदभुत बांसुरी बजाता है! तो फौरन उससे कहना कि वह बांसुरी क्या खाक बजाएगा। वह आदमी चोर है, बेईमान है, बांसुरी कैसे बजा सकता है! आप धोखे में पड़ गए होंगे, वह आदमी पक्का चोर-बेईमान है, वह बांसुरी नहीं बजा सकता।

यह बूढ़े होने की तरकीब है।

अगर जवान आदमी उस गांव में जाएगा और कोई उससे कहेगा, उस आदमी को जानते हैं? वह बड़ा चोर-बेईमान है। तो वह जवान आदमी कहेगा, यह कैसे हो सकता है कि वह चोर और बेईमान हो! मैंने उसे बड़ी सुंदर बांसुरी बजाते देखा है। इतनी अदभुत जो बांसुरी बजाता है, वह चोर नहीं हो सकता।

बूढ़े के जिंदगी को देखने का ढंग है--दुखद को देखना, अंधेरे को देखना, मौत को देखना, कांटे को देखना। हिंदुस्तान हजारों साल से दुखद को देख रहा है। जन्म भी दुख है, जीवन भी दुख है, मरण भी दुख है! प्रियजन का बिछुड़ना दुख है, अप्रियजन का मिलना दुख है, सब दुख है! मां के पेट में दुख झेलो, फिर जन्म का दुख झेलो, फिर बड़े होने का दुख झेलो, फिर जिंदगी के गृहस्थी के चक्कर झेलो, फिर बुढ़ापे की बीमारियां झेलो, फिर मौत झेलो, फिर जलने की आग में अंतिम पीड़ा झेलो! ऐसा जीवन एक दुख की लंबी कथा है। बूढ़ा होना है तो इसका स्मरण करना चाहिए।

बूढ़ा होना है तो बगीचों में कभी नहीं जाना चाहिए, हमेशा मरघट पर बैठ कर ध्यान करना चाहिए, जहां आदमी जलाए जाते हों। सुंदर से बचना चाहिए, असुंदर को देखना चाहिए। विकृत को देखना चाहिए, स्वस्थ को छोड़ना चाहिए। सुख मिले तो कहना चाहिए--क्षणभंगुर है; अभी है, अभी खत्म हो जाएगा। दुख मिले तो छाती से लगा कर बैठ जाना चाहिए। और सदा आंखें रखनी चाहिए जीवन के उस पार, कभी इस जीवन पर नहीं। इस जीवन को समझना चाहिए एक वेटिंग रूम है।

जैसे बड़ौदा के स्टेशन पर वेटिंग रूम हो, उसमें बैठे हैं आप थोड़ी देर। वहीं छिलके फेंक रहे हैं, वहीं पान थूक रहे हैं। क्योंकि हमको क्या करना है, अभी थोड़ी देर में हमारी ट्रेन आएगी और हम चले जाएंगे! तुमसे पहले जो बैठा था, वह भी वेटिंग रूम के साथ यही सदव्यवहार कर रहा था, तुम भी वही सदव्यवहार करो, तुम्हारे बाद वाला भी वही करेगा। वेटिंग रूम गंदगी का एक घर बन जाएगा। क्योंकि किसी को क्या मतलब है! हमको तो थोड़ी देर रुकना है तो आंख बंद करके राम-राम जप कर गुजार देंगे। अभी ट्रेन आती है, चले जाएंगे।

जिंदगी के साथ जिन लोगों की आंखें मौत के पार लगी हैं, उनका व्यवहार वेटिंग रूम का व्यवहार है। वे कहते हैं, क्षण भर की जिंदगी है; अभी जाना है। क्या करना है हमें! हिंदुस्तान के संत-महात्मा यही समझा रहे हैं लोगों को--क्षणभंगुर है जिंदगी, इसके माया-मोह में मत पड़ना। ध्यान वहां रखना--मौत पर, आगे, मौत के बाद। इस छाया में सारा देश बूढ़ा हो गया है।

अगर जवान होना है तो जिंदगी को देखना, मौत को लात मार देना। मौत से क्या प्रयोजन है? जब तक जिंदा हैं, तब तक जिंदा हैं। तब तक मौत नहीं है।

सुकरात मर रहा था। ठीक मरते वक्त, जब उसके लिए बाहर जहर घोला जा रहा है। वह जहर घोलने वाला जो है वह धीरे-धीरे घोल रहा है। वह यह सोचता है कि जितनी देर सुकरात और जिंदा रह ले तो अच्छा, जितनी देर लग जाए। वक्त हो गया है, जहर आना चाहिए। सुकरात उठ-उठ कर बाहर जाता है और उससे पूछता है, मित्र, कितनी देर और है?

उस आदमी ने कहा, तुम पागल हो गए हो सुकरात? मैं देर लगा रहा हूं इसलिए कि थोड़ी देर तुम और जिंदा रह लो, थोड़ी देर सांस तुम्हारे भीतर और जाए, थोड़ी देर सूरज की रोशनी और देख लो, थोड़ी देर खिलते फूलों को, आकाश को, मित्रों की आंखों में झांक लो, बस थोड़ी देर और। नदी भी समुद्र में गिरने के पहले पीछे लौट कर देख लेती है। तुम थोड़ी देर लौट कर देख लो। मैं थोड़ी देर लगाता हूं। तुम जल्दी क्यों कर रहे हो? तुम इतने दीवाने क्यों हुए जा रहे हो?

सुकरात ने कहा कि मैं जल्दी क्यों कर रहा हूं! मेरे प्राण तड़पे जा रहे हैं मौत को जानने को। नई चीज को जानने की मेरी हमेशा से इच्छा रही है। मौत बड़ी नई चीज है; सोचता हूं, देखूं क्या है!

यह आदमी जवान है, यह आदमी बूढ़ा नहीं है। यह मौत को भी देखने के लिए इसकी आतुरता--नये को!

मित्र कहने लगे कि थोड़ी देर और जी लो।

सुकरात ने कहा, जब तक मैं जिंदा हूं जिंदा हूं। मैं यह देखना चाहता हूं कि जहर पीने पर मरता हूं कि जिंदा ही रहता हूं!

लोगों ने कहा, अगर मर गए?

तो उसने कहा, जब मर ही गए तो फिक्र ही खत्म हो गई। क्योंकि हम हैं ही नहीं, चिंता का कोई कारण न रहा। और जब तक जिंदा हैं, तब तक जिंदा हैं। जब मर गए तो मर ही गए, चिंता की कोई बात नहीं है, खत्म हो गई बात। लेकिन जब तक मैं जिंदा हूं, जिंदा हूं! तब तक मैं मरा हुआ नहीं हूं! और तब मैं पहले से क्यों मर जाऊं?

मित्र सब मरे हुए बैठे हैं पास, रो रहे हैं, जहर की घबराहट पकड़ रही है। वह सुकरात प्रसन्न है! वह कहता है, जब तक मैं जिंदा हूं, तब तक मैं जिंदा हूं, तब तक जिंदगी को जानूं। और मैं सोचता हूं कि शायद मौत भी जिंदगी में एक घटना होगी तो उसको भी जानूं।

सुकरात को बूढ़ा नहीं किया जा सकता। मौत सामने खड़ी हो जाए तो भी वह बूढ़ा नहीं होता।

और हम? जिंदगी सामने खड़ी रहती है और बूढ़े हो जाते हैं। यह रुख भारत में युवा मस्तिष्क को पैदा नहीं होने देता है। जीवन का दुखद, जीवन का विषादपूर्ण चित्र फाड़ कर फेंक दो! आग लगा दो उसमें! और जो भी जिंदगी के दुख और जिंदगी के विषाद को बढ़ा-चढ़ा कर बतलाते हैं, जिंदगी के दुश्मन हैं, देश में युवा को पैदा होने देने में दुश्मन हैं। वे युवक को पैदा होने के पहले बूढ़ा बना देते हैं।

अभी मैं कुछ दिन पहले भावनगर था। एक छोटी सी लड़की ने, तेरह-चौदह साल की उम्र उसकी, उसने मुझे आकर कहा कि मुझे आवागमन से छुटकारे का रास्ता बताइए!

तेरह-चौदह साल की लड़की कहती है कि मैं आवागमन से कैसे छूटूं! फिर इस मुल्क में कैसे जवानी पैदा होगी? तेरह-चौदह साल की लड़की बूढ़ी हो गई! वह कहती है कि मैं मुक्त कैसे होऊं? जीवन से छूटने का विचार करने लगी है! अभी जीवन के द्वार पर उसने थपकी भी नहीं दी, अभी जीवन की खिड़की भी नहीं खुली, अभी जीवन की वीणा भी नहीं बजी, अभी जीवन के फूल भी नहीं खिले। वह द्वार के बाहर ही पूछने लगी--छुटकारा, मुक्ति, मोक्ष कैसे मिलेगा?

जहर डाल दिया होगा किसी ने उसके दिमाग में। मां-बाप ने, गुरुओं ने, शिक्षकों ने उसको पायज़नस किया। उसकी जवानी पैदा नहीं होगी अब। अब वह बूढ़ी ही जीएगी। उसका विवाह भी होगा तो वह एक बूढ़ी औरत का विवाह है, एक जवान लड़की का नहीं। उसके घर के द्वार पर शहनाइयां बजेंगी तो एक बूढ़ी औरत सुनेगी उन शहनाइयों को, एक जवान लड़की नहीं। उन शहनाइयों से भी मौत की आवाज सुनाई पड़ेगी, जीवन का संगीत नहीं। वह बूढ़ी हो गई!

पहली बात, अगर बूढ़े होना है तो मौत पर ध्यान रखना, जीवन पर नहीं। और अगर जवान होना है तो मौत को लात मार देना। वह जब आएगी, तब मुकाबला कर लेंगे उससे। जब तक जीते हैं, तब तक पूरी तरह से जीएंगे, उसकी टोटैलिटी में जीवन के रस को खोजेंगे, जीवन के आनंद को खोजेंगे।

रवींद्रनाथ मर रहे थे। एक मित्र, बूढ़े मित्र आए और उन्होंने कहा कि अब मरते वक्त तो भगवान से प्रार्थना कर लो कि अब दुबारा जीवन में न भेजे। अब आखिरी वक्त प्रार्थना कर लो कि अब आवागमन से छुटकारा हो जाए। अब इस पाप, इस गंदगी में चक्कर में न आना पड़े।

रवींद्रनाथ ने कहा, क्या कहते हैं आप? मैं और यह प्रार्थना करूं? मैं तो मन ही मन यह कह रहा हूं कि हे प्रभु, अगर तूने मुझे योग्य पाया हो, तो बार-बार तेरी पृथ्वी पर भेज देना। बड़ी रंगीन थी, बड़ी सुंदर थी! ऐसे फूल मैंने देखे, ऐसे चांद, ऐसे तारे, ऐसी आंखें, ऐसे सुंदर चेहरे--कि मैं दंग रह गया हूं, मैं हैरान हो गया हूं, मैं आनंद से भर गया हूं। अगर तूने मुझे योग्य पाया हो, तो हे परमात्मा, बार-बार इस दुनिया में मुझे भेज देना। मैं तो यह प्रार्थना कर रहा हूं! मैं तो डरा हुआ हूं कि कहीं मैं अपात्र न सिद्ध हो जाऊं कि मुझे दोबारा न भेजा जाए।

रवींद्रनाथ को बूढ़ा बनाना बहुत मुश्किल है। शरीर बूढ़ा हो जाएगा, लेकिन इस आदमी के भीतर जो आत्मा है वह जवान है, वह जीवन की मांग कर रही है।

रवींद्रनाथ ने मरने के कुछ ही घड़ी पहले कुछ कड़ियां लिखवाईं। उनमें दो कड़ियां हैं। देखा तो मैं नाचने लगा! क्या प्यारी बात कही है!

किसी मित्र ने रवींद्रनाथ को कहा कि तुम तो महाकवि हो, तुमने छह हजार गीत लिखे जो संगीत में बांधे जा सकते हैं! शेली को लोग पश्चिम में कहते हैं महाकवि, उसके तो सिर्फ दो हजार गीत संगीत में बंध सकते हैं। तुम्हारे तो छह हजार गीत! तुमसे बड़ा कोई कवि दुनिया में कभी नहीं हुआ।

रवींद्रनाथ की आंखों से आंसू बहने लगे। और रवींद्रनाथ ने कहा, क्या कहते हो? मैं तो भगवान से कह रहा हूं कि अभी मैंने गीत गाया कहां था, अभी तो साज बिठा पाया था और विदा का क्षण आ गया! अभी तो ठोंक-पीट कर तंबूरा ठीक किया था सिर्फ, अभी मैंने गीत गाया कहां था! अभी तो तंबूरे की तैयारी की थी। अब ठोंक-पीट कर तैयार हो गया था, साज बैठ गया था, अब मैं गाने की चेष्टा करता, और यह तो विदा का क्षण आ गया! और मेरे तंबूरे के ठोंकने-पीटने को लोगों ने समझ लिया कि यह महाकवि हो गया है। भगवान से कह रहा हूं कि संगीत का साज तैयार हो गया और मुझे विदा कर रहे हो? अब तो मौका आया था कि मैं गीत गाऊं।

मरता हुआ रवींद्रनाथ कहता है कि अभी तो मौका आया था कि मैं गीत गाऊं। वह यह कह रहा है कि अभी तो मौका आया था कि मैं जवान हुआ था। वह यह कह रहा है कि अब तो मौका आया था कि वीणा तैयार हो गई थी और मुझे विदा कर रहे हो! बूढ़ा आदमी यह कह सकता है? तो फिर वह आदमी बूढ़ा नहीं है।

अगर जवान होना है, तो जिंदगी को उसको सामने से पकड़ लेना पड़ेगा। एक-एक क्षण जिंदगी भागी चली जा रही है, उसे मुट्ठी में पकड़ लेना पड़ेगा, उसे जीने की पूरी चेष्टा करनी पड?गी। और जी केवल वे ही सकते हैं, जो उसमें रस का दर्शन करते हैं। और वहां दोनों चीजें हैं जिंदगी के रास्ते पर--कांटे भी हैं और फूल भी। जिन्हें बूढ़ा होना हो वे कांटों की गिनती कर लें। जिन्हें जवान होना हो वे फूलों को गिन लें।

और मैं कहता हूं कि करोड़-करोड़ कांटे भी फूल की एक पंखुड़ी के मुकाबले क्या हैं? एक गुलाब के फूल की छोटी सी पंखुड़ी इतना बड़ा मिरेकल है, इतना बड़ा चमत्कार है कि करोड़ों कांटे भी इकट्ठे कर लो, उससे क्या सिद्ध होता है? उससे कुछ भी सिद्ध नहीं होता। उससे सिर्फ इतना ही सिद्ध होता है कि बड़ी अदभुत है यह दुनिया, जहां इतने कांटे हैं वहां भी मखमल जैसा गुलाब का फूल पैदा हो सकता है। उससे सिर्फ इतना सिद्ध होता है, और कुछ भी सिद्ध नहीं होता।

लेकिन यह देखने की दृष्टि पर निर्भर है कि हम कैसे देखते हैं।

पहली बात, जिंदगी पर ध्यान चाहिए--मेडिटेशन ऑन लाइफ--मौत पर नहीं। तो आदमी जवान से जवान होता चला जाता है। बुढ़ापे के अंतिम क्षण तक मौत के द्वार पर खड़ा होकर भी वैसा आदमी जवान होता है। दूसरी बात, जो आदमी जीवन में सुंदर को देखता है, जो आदमी जवान है, वह आदमी असुंदर को मिटाने के लिए लड़ता भी है। जवानी फिर देखती नहीं, जवानी लड़ती भी है। जवानी स्पेक्टेटर नहीं है, जवानी तमाशबीन नहीं है कि तमाशा देख रहे हैं खड़े होकर। जवानी का मतलब है जीना, तमाशगिरी नहीं। जवानी का मतलब है सृजन। जवानी का मतलब है सम्मिलित होना।

तो पार्टिसिपेशन दूसरा सूत्र है। खड़े होकर रास्ते के किनारे अगर देखते हो जवानी की यात्रा को, जीवन की यात्रा को, तो तुम तमाशबीन हो, तुम जवान नहीं हो; पैसिव ऑनलुकर, एक निष्क्रिय देखने वाले। निष्क्रिय देखने वाला आदमी जवान नहीं हो सकता। जवान सम्मिलित होता है जीवन में।

और जिस आदमी को सौंदर्य से प्रेम है, जिस आदमी को जीवन के रस और आनंद से प्रेम है, जिस आदमी को जीवन का आह्लाद है, वह जीवन को आह्लादित बनाने के लिए श्रम करता है, सुंदर बनाने के लिए श्रम करता है। वह जीवन की कुरूपता से लड़ता है, वह जीवन को कुरूप करने वालों के खिलाफ विद्रोह करता है। कितनी अग्लीनेस है! कितनी कुरूपता है समाज में और जिंदगी में!

अगर तुम्हें प्रेम है सौंदर्य से, तो एक युवक एक सुंदर लड़की की तस्वीर लेकर बैठ जाए और पूजा करने लगे, एक युवती एक सुंदर युवक की तस्वीर लेकर बैठ जाए और कविताएं करने लगे, इतने से जवानी का काम पूरा नहीं हो जाता। सौंदर्य के प्रेम का मतलब है: सौंदर्य को पैदा करो, क्रिएट करो; जिंदगी को सुंदर बनाओ। आनंद की उपलब्धि और आनंद

की आकांक्षा का अर्थ है: आनंद को बिखराओ। फूलों को चाहते हो तो फूलों को पैदा करने की चेष्टा में संलग्न हो जाओ। जैसा तुम चाहते हो जिंदगी को वैसा जिंदगी को बनाओ। जवानी मांग करती है कि तुम कुछ करो, खड़े होकर देखते मत रहो।

हिंदुस्तान की जवानी तमाशबीन है। हम देखते रहते हैं खड़े होकर, जीवन का जैसे कोई जुलूस जा रहा है। पैसिव, रुके हैं, देख रहे हैं; कुछ भी हो रहा है! सारे मुल्क में कुछ भी हो रहा है। शोषण हो रहा है, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! अन्याय हो रहा है, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! बेवकूफियां हो रही हैं, जवान खड़ा देख रहा है! बुद्धिहीन लोग देश को नेतृत्व दे रहे हैं, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! जड़ता धर्मगुरु बन कर बैठी है, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! सारे मुल्क के हितों को नष्ट किया जा रहा है, और जवान खड़ा हुआ देख रहा है! यह कैसी जवानी है?

कुरूपता से लड़ना पड़ेगा, असौंदर्य से लड़ना पड़ेगा, शोषण से लड़ना पड़ेगा, जिंदगी को विकृत करने वाले तत्वों से लड़ना पड़ेगा, जिंदगी के खून को पीने वाले तत्वों से लड़ना पड़ेगा। तो आदमी जवान होता है। वह सागर की लहरों पर जीता है फिर। फिर तूफानों में जीता है। फिर आकाश में उसकी उड़ान होनी शुरू होती है। लेकिन क्या लड़ोगे तुम? व्यक्तिगत लड़ाई ही नहीं है कोई, सामूहिक लड़ाई की तो बात अलग है। कोई फाइट नहीं है! और बिना फाइट के, बिना लड़ाई के जवानी निखरती नहीं। जवानी सदा लड़ती है और निखरती है। जितना लड़ती है, उतना निखरती है। सुंदर के लिए, सत्य के लिए, शिव के लिए जवानी जितनी लड़ती है, उतनी निखरती है। लेकिन क्या लड़ोगे?

तुम्हारे पिता आ जाएंगे, तुम्हारी गर्दन में रस्सी डाल कर कहेंगे--इस लड़की से विवाह कर लो! और तुम घोड़े पर बैठ जाओगे। तुम जवान हो? और तुम्हारे बाप जाकर कहेंगे कि दस हजार रुपया लेंगे इस लड़की से! और तुम मजे से मन में गिनती करोगे कि दस हजार में स्कूटर खरीदें कि क्या करें? तुम जवान हो? ऐसी जवानी दो कौड़ी की जवानी है। जिस लड़की को तुमने कभी चाहा नहीं, जिस लड़की को तुमने कभी प्रेम नहीं किया, जिस लड़के को तुमने कभी नहीं चाहा और जिस लड़के को तुमने कभी छुआ नहीं, उस लड़के से विवाह करने के लिए या उस लड़की से विवाह करने के लिए तुम पैसे के लिए राजी हो रहे हो? समाज की व्यवस्था के लिए राजी हो रहे हो? तो तुम जवान नहीं हो। तुम्हारी जिंदगी में कभी भी वे फूल नहीं खिलेंगे जो युवा मस्तिष्क जानता है। तुम कभी उन आकाश को नहीं छुओगे जो युवा मस्तिष्क छूता है। तुम हो ही नहीं; तुम एक मिट्टी के लोंदे हो, जिसको कहीं भी सरकाया जा रहा है और कहीं भी लिया जा रहा है। तुम चुपचाप मानते चले जा रहे हो कुछ भी! न तुम्हारे मन में संदेह है, न जिज्ञासा है, न संघर्ष है, न पुकार है, न पूछ है, न इंक्वायरी है--कि यह क्या हो रहा है? कुछ भी हो रहा है, हम देख रहे हैं खड़े होकर! नहीं, ऐसे नहीं जवानी पैदा होती है।

इसलिए दूसरा सूत्र तुमसे कहता हूं और वह यह कि जवानी संघर्ष से पैदा होती है। जवानी संघर्ष से पैदा होती है। संघर्ष गलत के लिए भी हो सकता है, और तब जवानी कुरूप हो जाती है। संघर्ष बुरे के लिए भी हो सकता है, तब जवानी विकृत हो जाती है। संघर्ष अंधेरे के लिए भी हो सकता है, तब जवानी आत्मघात कर लेती है। लेकिन संघर्ष जब सत्य के लिए, सुंदर के लिए, श्रेष्ठ के लिए होता है, संघर्ष जब परमात्मा के लिए होता है, संघर्ष जब जीवन के लिए होता है, तब जवानी सुंदर, स्वस्थ, सत्य होती चली जाती है।

हम जिसके लिए लड़ते हैं, वही हम हो जाते हैं। इसे ध्यान में रख लेना: हम जिसके लिए लड़ते हैं, अंततः हम वही हो जाते हैं। लड़ो सुंदर के लिए, और तुम सुंदर हो जाओगे। लड़ो सत्य के लिए, और तुम सत्य हो जाओगे। लड़ो श्रेष्ठ के लिए, और तुम श्रेष्ठ हो जाओगे। और मत लड़ो--तुम खड़े-खड़े सड़ोगे और मर जाओगे और कुछ भी नहीं होओगे। जिंदगी संघर्ष है और जिंदगी संघर्ष से ही पैदा होती है। फिर जैसा हम संघर्ष करते हैं, हम वैसे ही हो जाते हैं।

हिंदुस्तान में कोई लड़ाई नहीं है, कोई फाइट नहीं है! हिंदुस्तान के मन में कोई भी लड़ाई नहीं है! सब कुछ हो रहा है, अजीब हो रहा है। हम सब जानते हैं, देखते हैं--सब हो रहा है। और होने दे रहे हैं! अगर हिंदुस्तान की जवानी खड़ी हो जाए

तो हिंदुस्तान में फिर ये सब नासमझियां नहीं हो सकतीं जो हो रही हैं। एक आवाज में टूट जाएंगी। चूंकि जवान नहीं है, इसलिए कुछ भी हो रहा है।

तो मैं यह दूसरी बात कहता हूं: लड़ाई के मौके खोजना--सत्य के लिए, सच्चाई के लिए, ईमानदारी के लिए। अगर अभी नहीं लड़ सकोगे तो बुढ़ापे में कभी नहीं लड़ सकोगे। अभी तो मौका है कि ताकत है, अभी मौका है कि शक्ति है, अभी मौका है कि अनुभव ने तुम्हें बेईमान नहीं बनाया है। अभी तुम निर्दोष हो, अभी तुम लड़ सकते हो, अभी तुम्हारे भीतर आवाज उठ सकती है कि यह गलत है। जैसे-जैसे उम्र बढ़ेगी, अनुभव बढ़ेगा, चालाकी बढ़ेगी।

अनुभव से ज्ञान नहीं बढ़ता, सिर्फ कनिंगनेस बढ़ती है, सिर्फ चालाकी बढ़ती है।

अनुभवी आदमी चालाक हो जाता है। उसकी लड़ाई कमजोर पड़ जाती है, वह अपना हित देखने लगता है--कि हमें क्या मतलब है! अपनी फिक्र करो, इतनी बड़ी दुनिया की झंझट में मत पड़ो।

जवान आदमी जूझ सकता है, अभी उसे कुछ पता नहीं। अभी उसे अनुभव नहीं है चालाकियों का।

इसके पहले कि चालाकियों में तुम दीक्षित हो जाओ और तुम्हारे उपकुलपति और तुम्हारे शिक्षक और तुम्हारे मां-बाप दीक्षांत समारोह में तुम्हें चालाकियों का सर्टिफिकेट दे दें, उसके पहले लड़ना। शायद लड़ाई तुम्हारी जारी रहे, तो तुम चालाकियों में नहीं, जीवन के अनुभवों में दीक्षित हो जाओ। और शायद लड़ाई तुम्हारी जारी रहे, तो वह जो छिपी है भीतर आत्मा, वह निखर आए, वह प्रकट हो जाए, उसके दर्शन तुम्हें हो जाएं। और जिस दिन कोई आदमी अपने भीतर छिपे हुए जीवन का पूरा अनुभव करता है, उसी दिन पूरे अर्थों में जीवित होता है।

और मैं कहता हूं, जो आदमी एक दफे एक क्षण को भी पूरे अर्थों में जीवन का रस जान लेता है, उसकी फिर कोई मृत्यु कभी नहीं होती। वह अमृत से संबंधित हो जाता है।

युवा होना अमृत से संबंधित होने का मार्ग है।

युवा होना आत्मा की खोज है।

युवा होना परमात्मा के मंदिर पर प्रार्थना है।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं। मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में तुम सबके भीतर बैठे परमात्मा के लिए प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।